काली उपासना

मां के रौद्र-सौम्य रूपों की अवतरण कथाएं

पूजन, आराधन व उपासना की शास्त्रीय पद्धतियां

काली उपासना

शास्त्रों में स्पष्ट रूप से लिखा है कि सभी देवी-देवता ईश्वर के तेज से निर्मित हैं, अत: उनमें ईश्वरीय तत्वों का अंश है। ब्रह्मा, विष्णु, महेश के रूप में उसके तीन साकार रूप हैं, जो क्रमश: उत्पत्ति, पालन-धारण और संहार का कार्य करते हैं। इस प्रकार ईश्वर का साक्षात् स्वरूप होने के बावजूद वे ईश्वर के एकांगी रूप हैं, उस परब्रह्म का सर्वशक्तिमान स्वरूप तो भगवती काली ही हैं।

काली उपासना

लेखक
के. के. अग्रवाल

मनोज पब्लिकेशन्स

प्रकाशक :
मनोज पब्लिकेशन्स
761, मेन रोड, बुराड़ी, दिल्ली-110084
फोन : 27611116, 27611349, फैक्स : 27611546
मोबाइल : 9868112194
ईमेल : info@manojpublications.com
(For online shopping visit our website)
वेबसाइट : www.manojpublications.com

शोरूम :
मनोज पब्लिकेशन्स
1583-84, दरीबा कलां, चांदनी चौक, दिल्ली-110006
फोन : 23262174, 23268216, मोबाइल : 9818753569

चेतावनी—*पुस्तक में दी गई सामग्री का उद्देश्य पाठकों को प्राचीन भारतीय मांत्रिकों, तांत्रिकों और यंत्र शास्त्र के ज्ञाता मनीषियों द्वारा किए गए प्रयोगों, टोटकों एवं उपायों की जानकारी देना मात्र है। पुस्तक में दिए गए किसी प्रयोग एवं टोटके को उपयोग में लाने से पूर्व किसी अनुभवी विशेषज्ञ साधक सिद्ध का मार्गदर्शन अवश्य प्राप्त कर लें। अन्यथा इससे होने वाली किसी भी प्रकार की हानि, अनिष्ट एवं असफलता के लिए लेखक और प्रकाशक किसी भी रूप में उत्तरदायी नहीं होंगे।*

ISBN : 978-81-8133-728-3

ग्यारहवां संस्करण *:* 2015

₹ 80

मुद्रक :
जय माया ऑफसेट
झिलमिल इण्डस्ट्रियल एरिया, दिल्ली-110095

काली उपासना *: के. के. अग्रवाल*

विषय सूची

1

ब्रह्मस्वरूपा भगवती काली

कार्य विभाजन के सिद्धान्त—अर्थात् प्रत्येक व्यक्ति वह कार्य करे, जिसको वह अधिक योग्यतापूर्वक कर सकता है—को कुछ व्यक्ति भ्रमवश पश्चिम अथवा आधुनिक विज्ञान की देन मानते हैं। परन्तु विश्व को ज्ञान-विज्ञान प्रदान करने वाले हमारे देश में वर्ण व्यवस्था के रूप में आदिकाल से यह सिद्धान्त चल रहे हैं। सबसे बड़ी बात तो यह है कि हमारा धर्म भी अनादिकाल से इस सिद्धान्त को मानता रहा है। सभी देवी-देवता ब्रह्मा-विष्णु-महेश के रूप में ईश्वर की त्रिमूर्ति, महालक्ष्मीजी, विद्या और कला की अधिष्ठाता मातेश्वरी सरस्वतीजी, भवानी भगवती काली एवं जगदम्बा दुर्गा आदि मातृशक्तियां पृथक-पृथक कार्य करने के लिए परब्रह्म के तेज से निर्मित रूप हैं। यही कारण है कि तैंतीस कोटि देवी-देवताओं की अवधारणा हमारे धर्म में है। इसके साथ ही ईश्वर के साक्षात् स्वरूप भगवान विष्णु, भगवान शिवजी और आदिशक्ति भगवती भवानी के कई-कई अवतार भी हैं। लेकिन इनमें से सभी तो क्या, देवराज इन्द्र तक की पूजा-आराधना सामान्यतया नहीं की जाती। जहां तक व्यावहारिकता का प्रश्न है, सम्पूर्ण हिन्दू समाज में सबसे अधिक पूजा, आराधना, उपासना और तान्त्रिक साधनाएं भगवती भवानी दुर्गा और उनके दूसरे स्वरूप मातेश्वरी काली की ही की जाती हैं। हम किसी को छोटा-बड़ा अथवा कम या अधिक शक्तिशाली देवी-देवता कहने की धृष्टता नहीं कर रहे हैं, परन्तु यह एक ज्वलन्त सत्य है कि श्रीराम, सोलह कला निधान पूर्णावतार श्रीकृष्ण, महावीर हनुमान जैसे अवतारों और सभी देवों से ही नहीं, बल्कि साक्षात् भगवान विष्णु एवं महेश्वर शिवजी से भी अधिक व्यापक स्तर पर भगवती दुर्गा तथा काली की पूजा-आराधना अनन्तकाल से हो रही है और भविष्य में भी होती रहेगी।

आदिकाल से ही मातेश्वरी काली, उनके रौद्ररूप महाकाली, सबसे सौम्य स्वरूप गुह्य काली, चण्ड-मुण्ड विनाशक स्वरूप चामुण्डा, सभी साधनाओं को शीघ्र सफल करने वाली भद्रकाली और विन्ध्याचल पर्वत पर निवास करने वाली देवी विन्ध्यवासिनी के रूप में व्यापक स्तर पर पूजा, आराधना एवं उपासना होती रही है। इसका सबसे बड़ा कारण यही है कि मातृ रूप में होने के कारण जहां आप

परम उदार और शीघ्र प्रसन्न होने के गुणों से युक्त हैं, वहीं परब्रह्म परमेश्वर का साक्षात् स्वरूप भी हैं। वैसे ये सभी अलग-अलग देवियां नहीं, बल्कि भगवती भवानी काली के ही विविध रूप हैं। हम किसी भी स्वरूप की पूजा, उपासना अथवा साधना करें, वह होती मातेश्वरी काली की ही आराधना है। शास्त्रों में स्पष्ट रूप से लिखा है कि सभी देवी-देवता ईश्वर के तेज से निर्मित हैं, अत: उनमें ईश्वरीय तत्वों का अंश है। ब्रह्मा, विष्णु, महेश के रूप में उसके तीन साकार रूप हैं, जो क्रमश: उत्पत्ति, पालन-धारण और संहार का कार्य करते हैं। इस प्रकार ईश्वर का साक्षात् स्वरूप होने के बावजूद वे ईश्वर के एकांगी रूप हैं, उस परब्रह्म का सर्वशक्तिमान स्वरूप तो भगवती काली ही हैं।

प्रमुख मातृशक्तियां : महालक्ष्मी एवं सरस्वतीजी के बीच विराजमान मां अंबिका

हमारे सभी प्राचीन धर्मग्रन्थ और शास्त्र संस्कृत में हैं लेकिन उनके हिन्दी अनुवाद उपलब्ध नहीं हैं। इसके साथ ही एक सामान्य व्यक्ति इन ग्रंथों का अध्ययन-मनन करना तो दूर, इनमें से अधिकांश के नाम तक नहीं जानता। यही कारण है कि काली अथवा महाकाली और इनके अन्य विविध रूपों को अधिकांश आराधक-उपासक सर्वाधिक शक्तिसम्पन्न, असुर संहारक और भक्तों पर करुणा बरसाने वाली मातेश्वरी मानते हैं। परन्तु वे यह नहीं जानते कि आदिशक्ति योगमाया के रूप में आप ही इस सृष्टि की उत्पन्नकर्ता, धारण-पोषणकर्ता और अन्त में लयकर्ता भी हैं। जनसामान्य तो बस इतना जानता है कि जीवों के उत्पन्नकर्ता जगत्पिता ब्रह्मा,

सृष्टि संचालक लक्ष्मीपति भगवान विष्णु और इस सृष्टि के लयकर्ता पार्वतीनाथ आशुतोष शिव ईश्वर के तीन रूप-स्वरूप हैं। परन्तु जिन्होंने विभिन्न धर्मग्रन्थों का गहन अध्ययन-मनन किया है, वे ज्ञानीजन जानते हैं कि ईश्वर के इन तीन रूपों को भी शक्ति प्रदान करने और उन्हें अपने-अपने कार्यों में लगाए रखने की प्रेरणा देने वाली वह आदिशक्ति भगवती योगमाया ही है, जिसका एक स्वरूप काली और दूसरा रूप दुर्गा है।

धन-धान्य की अधिष्ठात्री महालक्ष्मी, वीणावादिनी सरस्वती, शिवजी की शक्ति मातेश्वरी पार्वती इसके अंश रूप हैं। अन्य सभी देवी-देवता इसके तेज से उत्पन्न और इसकी शक्ति से संचालित इसके छोटे-बड़े अंश हैं।

निराकार आदिरूप में मातेश्वरी

संसार के सभी धर्म ईश्वर को निराकार और एक मानते हैं। साकार रूप में ब्रह्मा, विष्णु व महेश की त्रिमूर्ति और विभिन्न देवी-देवता मात्र हमारे हिन्दू धर्म में ही हैं। इसी प्रकार मूर्ति-पूजा भी केवल हमारे धर्म में ही है जो एक छोटा और उथला पक्ष है। वैसे हिन्दू धर्म भी यह मानता है कि मूल रूप में ईश्वर निराकार है, परन्तु संसार और ब्रह्माण्ड के चक्र को चलाने के लिए वह विभिन्न प्रकार के साकार रूप धारण करता है।

इस प्रकार हिन्दू धर्म निराकार के साथ ही ईश्वर को साकार भी मानता है और इन दोनों बातों में कोई विरोध नहीं है। हमारे धर्म शास्त्रों का कथन है कि परब्रह्म निराकार अर्थात् निर्गुण भी है और सगुण अथवा साकार भी। यद्यपि सभी देवी-देवता अपना-अपना कार्य करते हैं मगर सम्पूर्ण सृष्टि का आधार और संचालक वह आदिशक्ति है। वह आदिशक्ति निराकार रूप में रहकर ब्रह्मा, विष्णु और महेश सहित सभी देवों, दानवों, मानवों एवं समस्त जीवधारियों को कार्य करने की प्रेरणा और सामर्थ्य देती रहती है। परन्तु जब कोई विशेष कार्य करना होता है जिसे अन्य देव नहीं कर सकते, तो यही आदिशक्ति कभी भगवती दुर्गा के रूप में तो कभी काली, महाकाली अथवा अन्य रूपों में अवतार धारण करती है। रावण और कंस जैसे राक्षसों के वध के लिए यह महाशक्ति विष्णु के अवतार श्रीराम अथवा श्रीकृष्ण के अंश रूप में प्रकट होती है। परन्तु महिषासुर, चण्ड-मुण्ड, रक्तबीज आदि असुरों के संहार और देवताओं की रक्षा के लिए इस आदिशक्ति ने काली के रूप में स्वयं साकार रूप धारण किया है।

सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की निर्माता, धारणकर्ता और लयकर्ता इस आदिशक्ति के अनेक नाम हैं। मुसलमान इसे खुदा या अल्लाह कहते हैं तो ईसाई गॉड कहकर याद करते हैं। हिन्दू ईश्वर, भगवान, परब्रह्म, अकाल पुरुष, भगवती और भवानी आदि अनेक नामों से इसका चिन्तन करते हैं। इस बारे में हमारे शास्त्र कहते हैं कि यह परमशक्ति—जिसके योगमाया, आदिशक्ति, प्रकृति, माया, भगवती, भवानी आदि अनेक नाम हैं—ही इस सम्पूर्ण सृष्टि का आधार है। भगवान विष्णु, आशुतोष शिव,

जगत्पिता ब्रह्मा, ग्रहों के स्वामी सूर्य, देवराज इन्द्र, दुष्ट दलनकारिणी दुर्गा, काल से भी कराल काली, महालक्ष्मी, सरस्वती, पार्वती आदि विभिन्न देव ऊपर

लयकर्ता शिवजी और सृष्टि के संचालक भगवान विष्णु

से देखने में पृथक-पृथक होने के बावजूद तत्व रूप में एक ही हैं। इनमें अंश रूप में विराजित आदिशक्ति ही इन्हें कार्य करने की सामर्थ्य और शक्ति प्रदान करती है। यदि भगवान शिवजी के नाम में से शक्ति का प्रतीक छोटी 'इ' की मात्रा निकाल दी जाए तो वह शिव के स्थान पर शव बनकर रह जाएगा। शव अर्थात् ऐसा मृत शरीर जो कुछ भी करने में असमर्थ है। परन्तु शक्ति की प्रतीक 'इ' की मात्रा लगने पर यही शव शिव का रूप धारण कर लेता है, जिसका अर्थ है—आनन्द-प्रदायक, कल्याणकारी और सर्वशक्तिमय।

भगवान शिवजी ने आपकी स्तुति करते हुए स्वयं कहा है—"हे महादेवि! केवल तुम्हारी शक्ति से संयुक्त होने के कारण ही मैं ईश्वर हूं। शक्ति के बिना तो शव रूप हूं। तुम्हारी शक्ति से युक्त होकर ही मैं सर्वकामनाओं को पूर्ण करने वाला और कल्याणकारी शिव हूं।"

इसी प्रकार संसार के पालन-धारण का कार्य यद्यपि भगवान विष्णु करते हैं, परन्तु यह कार्य लक्ष्मी के बिना सम्भव ही नहीं है। सभी साधनों और धन-धान्य की स्वामिनी विष्णुप्रिया लक्ष्मीजी हैं जो वास्तव में भगवान विष्णु की सम्पूर्ण सत्ता का आधार हैं।

भ्रम का निराकरण

पशु-पक्षी अभी तक अपने प्राकृतिक रूप में रहते हैं। उन्होंने जीवन प्रणाली के दैवी नियमों में कोई परिवर्तन नहीं किया है। यही कारण है कि उनमें परिवार का आधार अभी भी माता है। पिता अथवा नर पक्षी तो मात्र एक सहायक की भूमिका

निभाता है। प्राकृतिक रूप में मानव समाज भी मातृसत्तात्मक था, परन्तु सभ्यता के विकास के साथ ही जीवन में कृत्रिमता आने लगी। परिवार तथा समाज में पुरुष का स्थान बढ़ते-बढ़ते सम्पूर्ण सत्ता का केन्द्र बन गया। धीरे-धीरे पुरुष की सत्ता इस कदर हावी हो गई कि हम नारी को अबला तक कहने और मानने लगे। पुरुष के सत्तासीन होने के इस गर्व ने ही हमारी दृष्टि इतनी धूमिल कर दी कि हम उस निराकार आदिशक्ति को भी भगवान, ईश्वर और जगद्पिता जैसे पुरुषवाचक नामों से सम्बोधित करने लगे। ऐसी स्थिति में हम यह कल्पना तक नहीं कर पाते कि वह आदिशक्ति नारी रूप में हो सकती है। यही नहीं, भवानी दुर्गा और मातेश्वरी काली को हम भगवती कहते हैं। यह भगवती शब्द भगवान का स्त्रीलिंग है। अधिकांश व्यक्ति मातेश्वरी काली को सबसे शक्तिशाली देव और जगत की माता जगदम्बा तो कहते हैं, लेकिन ईश्वर का साक्षात् स्वरूप मानते समय प्राय: वे भ्रमित हो जाते हैं।

वेदों से लेकर अन्य सभी धर्मग्रन्थ कहते हैं कि इस सम्पूर्ण सृष्टि को उत्पन्न, पालन-धारण और लय करने वाला अथवा वाली वह परमशक्ति किस रूप में है, इस बारे में कोई कुछ नहीं जानता। ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर शिव साकार रूप में हैं, इसलिए उनके बारे में तो हम जान सकते हैं। परन्तु इन सबकी भी निर्माता वह निराकार आदिशक्ति पुरुष रूप में है अथवा नारी रूप में या फिर इन दोनों के सम्मिलित अर्द्धनारीश्वर के रूप में, इस विषय में विश्वासपूर्वक कुछ भी कहना संभव नहीं है। यही कारण है कि हमारे धर्मग्रन्थों में उसे परब्रह्म, परमेश्वर, ज्ञान, अक्षर और अगोचर आदि नाम दिए गए हैं जो न तो स्त्रीलिंग हैं और न ही पुल्लिग। ब्रह्मा, विष्णु, शिव और ईश्वर आदि उस परमशक्ति के पुरुषवाचक नाम हैं तो भगवती, चिति, दुर्गा, काली, महाकाली, योगमाया आदि स्त्रीवाचक नाम। वास्तव में ये सभी उस आदिशक्ति परमेश्वरी के ही विभिन्न नाम हैं। इनमें लिंग भेद से कोई अन्तर नहीं पड़ता। जिस प्रकार आदिशक्ति परमेश्वरी निराकार होते हुए दुर्गा, काली, महाकाली आदि साकार नारी रूपों में है, उसी प्रकार मातृशक्ति के रूप में होने के बावजूद परमात्मा-ईश्वर जैसे पुरुषवाचक और ब्रह्म एवं परमात्मा आदि लिंगविहीन नाम भी उन्हीं का प्रतिनिधित्व करते हैं। अत: हम मातेश्वरी के निराकार रूप का चिन्तन-अर्चन करें अथवा उनके काली, महाकाली, दक्षिण काली या अन्य किसी भी स्वरूप की आराधना-उपासना, वह समर्पित तो उस आदिशक्ति को ही होती है। यह साकार होते हुए भी निराकार, घटघटवासी होने के बावजूद अगोचर तथा आदि और अन्त से रहित होने के साथ ही सूक्ष्मातिसूक्ष्म एवं सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की निर्माता, पालन-धारण व लयकर्ता है।

मातेश्वरी के अनेक रूप

आदिशक्ति भगवती भवानी अपने स्वाभाविक मूल स्वरूप में अधिकतर निराकार ही रहती हैं, परन्तु प्रचण्ड दैत्यों के हनन हेतु कभी अपनी सम्पूर्ण शक्तियों सहित मातेश्वर काली और दुर्गा के रूप में प्रकट होती हैं तो कभी श्रीराम, योगेश्वर

कृष्ण, हनुमान, भैरवी, कात्यायनी आदि रूपों में अपनी कम अथवा अधिक शक्तियों के साथ। यद्यपि इन साकार रूपों में भी हम उन्हें इन नयनों से देख नहीं पाते, परन्तु प्रत्येक व्यक्ति अपने आराध्यदेव को भावनात्मक रूप में अपने निकट अनुभव करता रहता है। जहां तक उस आदिशक्ति और उसके साकार रूप काली का प्रश्न है, सभी देवी-देवताओं की प्रेरणा-शक्ति होने के कारण सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड ही उनका अंश रूप है। वास्तव में शक्ति और उस शक्ति को प्राप्त करने वाले शक्तिमान में भेद करना सम्भव ही नहीं है। परन्तु हम सांसारिक जीव उस शक्ति और शक्ति प्राप्तकर्ता की इस एकरूपता को आसानी से नहीं समझ पाते। यही कारण है कि हमारे धर्मग्रन्थों में सभी देवों के साथ उनकी शक्तियों को उनकी अर्धांगिनी के रूप में निरूपित किया गया है। इस रूप में भगवान विष्णु के साथ मातेश्वरी महालक्ष्मीजी और शिवजी के साथ पार्वतीजी तो आप हैं ही, महासरस्वती, सीता, राधा, दक्षपुत्री सती, दुर्गतिनाशिनी दुर्गा एवं राक्षसों के लिए कालरूप काली भी आप ही हैं। ऋद्धि-सिद्धि, ब्रह्मविद्या, शास्त्रकारा, शुद्ध ब्रह्म आदि जितनी भी शक्तियां हैं, वे इस आदि भवानी के ही विविध रूप हैं। पंच महाशक्ति नामक पांच प्रमुख शक्तियां, काली और महाकाली सहित दस महाविद्याएं तथा नव दुर्गाएं आदि मातृशक्तियां भी इसी आदि भवानी के विविध स्वरूप हैं। अन्नपूर्णा, जगद्धात्री कत्यायनी, दुर्गा, काली, महाकाली, गोरा, ललिता, भैरवी आदि जहां आपके प्रमुख स्वरूप और अवतार हैं, वहीं प्रत्येक जीव में आप अंश रूप में सदा विराजमान रहती हैं। इसीलिए विज्ञजन और मातेश्वरी के भक्त जहां प्रत्येक स्थान, प्रत्येक जीवधारी तथा वस्तु में अपनी आराध्यदेव काली के दर्शन करते हैं, वहीं संशयी, नास्तिक और आराधना-उपासना से रहित व्यक्ति व्यर्थ में भटकते हुए जीवन गुजार देते हैं।

उस आदिशक्ति को भगवती योगमाया कहा जाए अथवा परब्रह्म, उसका पूर्ण विवेचन तो सभी धार्मिक ग्रन्थ सम्मिलित रूप में मिलकर भी करने में समर्थ नहीं हैं। धर्मग्रन्थों के हजारों पृष्ठों में निहित हैं यह विवेचन और वर्णन। यही स्थिति भगवती काली और उनके विविध स्वरूपों की है। फिर इस अध्याय में तो अत्यन्त संक्षिप्त में ही है यह वर्णन-विवेचन। अत: समय-समय पर बारम्बार इस अध्याय का अध्ययन आप करते रहें, दुर्गा सप्तशती का गम्भीरतापूर्वक स्तवन भी आप अवश्य कीजिए। वैसे शिवपुराण तथा अनेक धार्मिक ग्रन्थों में भी आदिशक्ति, निराकार ब्रह्म, ईश्वर के विविध रूपों और मातेश्वरी काली के बारे में पर्याप्त सामग्री उपलब्ध है। मातेश्वरी को समझने और उनके चरणों में प्रीति बढ़ाने में यह अध्ययन-मनन एक गम्भीर भूमिका निभाता है, जो आराधना, उपासना एवं तन्त्र-साधना में सफलता की अनिवार्य शर्त ही नहीं, बल्कि मूल आधार है।

❑❑

2

काली के विविध स्वरूप

मातेश्वरी काली के समान ही भगवती दुर्गा, भगवान राम, महावीर हनुमान, भगवान भैरवदेव और भगवान कृष्ण आदि भी ईश्वर के अवतार हैं। ये सभी अवतार महान हैं और हमारे लिए समान रूप से पूज्यनीय भी। परन्तु शक्ति और महिमा में सबसे अधिक होने के साथ-साथ मां काली में एक अन्य अद्भुत विशेषता है। आपके एक-दो नहीं, दर्जनों रूप-स्वरूप हैं जिनमें से कुछ एक-दूसरे के पूरक हैं, कुछ पूर्णतया पृथक-पृथक तो कुछ एक-दूसरे के प्रतिनिधि और परस्पर संयुक्त। एक ओर आप जहां रक्तबीज के वध के समय काली के रूप में प्रकट होती हैं, वहीं दूसरी ओर चण्ड-मुण्ड को समाप्त करने के लिए चामुण्डा का रूप धारण करती हैं। भगवान शिव के महाकाल रूप के समय आप महाकाली का अवतार धारण करती हैं और अधिकांश समय शिव की शक्ति पार्वती के रूप में उनके साथ रहती हैं। इसी प्रकार दस महाविद्या, नौ दुर्गाओं आदि में भी आप हैं और अदृश्य रूप से तो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में व्याप्त हैं ही।

त्रिमूर्ति रूप में मातेश्वरी काली

जिस प्रकार ब्रह्मा, विष्णु और महेश की त्रिमूर्ति ईश्वर-रूप हैं, ठीक उसी प्रकार मातेश्वरी दुर्गा, अम्बिका एवं काली उस आदिशक्ति की त्रिमूर्ति हैं। अम्बिका अथवा अम्बा आपका सबसे सौम्य रूप है। सिंहवाहनी दुर्गा आपकी शक्ति और तेज से भरपूर असुर संहारक रूप है, तो काली स्वरूप काल को नियंत्रण में रखने वाला रौद्र एवं विकराल रूप है। सामान्यतया इस काली स्वरूप की ही पूजा, आराधना और उपासना अधिकांश भक्तों द्वारा की जाती है। दुर्गा सप्तशती में काली के इसी रूप का वर्णन है। चौथे अध्याय में हम इन्हीं काली-अवतरण और उनके कृत्यों की कथा पढ़ेंगे। जिस प्रकार एक सच्चा हरिभक्त भगवान विष्णु और आशुतोष भगवान शिव में कोई अन्तर नहीं करता, वह हरि एवं हर को एक-दूसरे का प्रतिरूप मानता है, ठीक उसी प्रकार उसके लिए मातेश्वरी काली, अम्बिका और दुर्गा में भी रंचमात्र

भेद नहीं है। आदिशक्ति भगवती भवानी ने ही देवताओं की रक्षा और असुरों के विनाश के लिए अम्बिका, दुर्गा और काली के रूप धारण किए थे। मूल रूप में ये तीनों एक हैं ही, शास्त्रीय दृष्टि से भी इनमें अधिक अन्तर नहीं है। भगवती दुर्गा का अधिक प्रचण्ड और तीव्र क्रियाशील रूप काली है, तो काली का सौम्य व अपेक्षाकृत शान्त रूप दुर्गा। वैसे भी एक आस्थावान और श्रद्धालु भक्त को इन विश्लेषणों में अधिक गहरे उतरने की आवश्यकता नहीं है। एक कुशल गृहिणी जहां अपने पति को सर्वस्व मानकर हृदय की सम्पूर्ण गहराई से उससे प्यार-सेवा करती है, वहीं परिवार के अन्य सदस्यों को यथायोग्य सम्मान और सत्कार देने में कोई कसर नहीं रखती। इसी प्रकार हम भी मातेश्वरी काली को अपनी माता-पिता, गुरु, रक्षक और सर्वस्व मानकर हर समय उनका स्मरण, ध्यान व सेवा करते रहेंगे। साथ ही अन्य देवों पर भी श्रद्धाभाव बनाए रखेंगे।

काली और दुर्गा माता

आद्याकाली के नौ स्वरूप

श्री राम, श्री कृष्ण और हनुमान आदि अवतारों का तो एक-एक रूप है, परन्तु भगवान भैरवदेव और मातेश्वरी दुर्गा के अनेक रूप शास्त्रों में वर्णित हैं। धर्मग्रन्थों के अनुसार जिस प्रकार मातेश्वरी दुर्गा के नवदुर्गा नामक नौ स्वरूप हैं, ठीक उसी

प्रकार भगवती काली के भी नौ रूप कहे गए हैं। यह एक ही काली के नौ विविध रूप हैं, जो उनके सौम्य से लेकर भीषण तक विविध रूपों को प्रकट करते हैं—

1. काली, 2. महाकाली, 3. भद्र काली, 4. दक्षिण काली, 5. श्मशान काली, 6. गुह्य काली, 7. सिद्ध काली, 8. कामकला काली और 9. हंस काली। इन नौ रूपों में भद्र काली और श्मशान काली देवी के रौद्रतम रूप हैं तो हंस काली एवं दक्षिण काली सौम्य रूप। इनमें से सिद्धि काली, कामकला काली और गुह्य काली की पूजा अधिकतर तन्त्र साधनाओं में की जाती है। यहां विशेष ध्यान रखने की बात यह है कि अधिकांश आराधक-उपासक और धर्मग्रन्थ इन नौ रूपों को त्रिमूर्ति की काली के नौ स्वरूप मानते हैं, वहीं कुछ शास्त्रों में इन्हें आदिशक्ति का नौ रूप भी कहा गया है।

काली के चार रौद्र रूप

यह चारों ही रूप हमारे द्वारा पूजा-आराधाना की जाने वाली उस काली के हैं जो मातेश्वरी दुर्गा के मस्तक से प्रकट हुई थीं और जिन्होंने अनेक असुरों को मारने के साथ ही रक्तबीज के रक्त का पान किया था। यद्यपि महालक्ष्मी जैसे वैभवशाली और सरस्वती जैसे अत्यन्त सौम्य रूप भी उस आदिशक्ति के हैं, परन्तु आपने काली का रूप असुरों के संहार एवं रक्तबीज के रुधिर के पान हेतु धारण किया था। अत: आपके इस स्वरूप अर्थात् काली अवतार के रूप में रौद्र और वीभत्स रसों का समावेश होना अनिवार्य है। इस रूप में आपके महाकाली, चामुण्डा, सिद्ध काली और श्मशान काली अधिक रौद्र स्वरूप माने जाते हैं। अपने इन रौद्र रूपों में आप खड्ग और खप्पर के साथ ही नरमुण्डों की माला तो पहनती ही हैं, कमर में मनुष्यों के हाथों को पिरोकर बनाई गई माला भी धारण करती हैं। इन रूपों में आपका निवास श्मशानों का माना गया है और चिताओं की ज्वाला के प्रकाश में क्रीड़ा करना आपका प्रमुख मनोरंजन। सामान्य गृहस्थ इन रौद्र रूपों की आराधना-उपासना अधिक नहीं करते, परन्तु तन्त्र साधक और तान्त्रिक सबसे अधिक आराधना इन रूपों की ही करते हैं। तन्त्र शास्त्र की अधिकांश साधनाएं भी इन रूपों के इर्द-गिर्द केन्द्रित हैं।

काली के आठ सौम्य स्वरूप

मातेश्वरी काली का अवतरण दैत्यों के संहार और रक्तबीज जैसे असुर के समूल नाश के लिए हुआ था। यही कारण है कि वे ऊपर से देखने में क्रोधवन्त बड़ी सीमा तक वीभत्स और भयंकर नजर आती हैं। परन्तु अन्दर से परम उदार एवं सब पर करुणा बरसाने वाली हैं। एक तरफ जहां काली रूप में आप दैत्यों के लिए काल का भी काल महाकाली हैं, वहीं दूसरी तरफ भक्तों के लिए दया और ममता की साक्षात् मूर्ति हैं। आपके महाकाली, श्मशान काली, सिद्ध काली और चामुण्डा रूप

कुछ भयंकर हैं, लेकिन आठ रूप अत्यन्त मधुर, मृदुल एवं दयावन्त हैं। शास्त्रों में भगवती के आठ सौम्य स्वरूप इस प्रकार कहे गए हैं—

1. चिन्तामणि काली, 2. स्पर्शमणि काली, 3. सन्ततिप्रदा काली, 4. सिद्धिदा काली, 5. दक्षिण काली, 6. कामकला काली, 7. हंसासना काली तथा 8. गुह्य काली।

भगवती दक्षिण काली के बारे में शास्त्रों का कहना है कि दक्षिण दिशा में रहने वाले यमराज और उनके दूत भगवती 'दक्षिण काली' का नाम सुनते ही भयभीत होकर भाग जाते हैं अर्थात् वे काली-उपासकों को नरक में नहीं ले जा सकते। इसके साथ ही आराधना-उपासना का प्रतिफल भी तुरन्त दे देती हैं भगवती दक्षिण काली। इसीलिए अधिकांश आराधक-उपासक या तो महाकाली अर्थात् काली माई की सामान्य रूप से आराधना-उपासना करते हैं या फिर उनके दक्षिण काली स्वरूप की।

दस महाविद्या स्वरूप में काली

आद्याशक्ति भगवती भवानी निराकार हैं और काली आपका साकार स्वरूप। काली के उपरोक्त सभी स्वरूप तो साकार काली के हैं, परन्तु दस महाविद्या के नाम से पुकारे जाने वाले रूप निराकार आद्याशक्ति के हैं। ये सभी स्वरूप अपरिमित शक्तिशाली, परम तेजस्वी, सर्वसिद्धि प्रदायक, सभी कामनाओं की पूर्ति करने वाले और अन्त में मोक्ष प्रदायक हैं। आराधकों और तन्त्र साधकों में सबसे अधिक लोकप्रिय व पूज्यनीय इन दस रूपों को उपरोक्त गुणों के कारण ही दस महाविद्याएं कहा जाता है। ये दस रूप हैं—

1. काली, 2. तारा, 3. षोडशी, 4. भुवनेश्वरी, 5. भैरवी, 6. छिनमस्ता, 7. धूमावती, 8. बगुलामुखी, 9. मातंगी और 10. कमलालिका।

दस महाविद्याओं में भी पहला नाम मातेश्वरी काली का है, परन्तु धर्मशास्त्र इस काली को दुर्गा के मस्तक से उत्पन्न होने वाली काली से पृथक मानते हैं। वे इसे आदिशक्ति की तरह निराकार मानकर इसकी आराधना-उपासना करते हैं। वैसे आप इससे भ्रम में न पड़ें। निराकार-साकार दोनों ही रूपों में काली का शास्त्रों में वर्णन है तथा मातेश्वरी की आराधना, उपासना एवं तन्त्र साधना आपकी महानता और सर्वोच्चता का प्रमाण है। अपने इन्हीं विभिन्न स्वरूपों और शक्तियों के कारण ही मातेश्वरी काली को सभी धर्मग्रन्थों ने सबसे अधिक शक्तिशाली देव ही नहीं, बल्कि ईश्वर का साक्षात् रूप कहा है।

शिवजी की शक्ति अर्थात् पार्वतीजी

मातेश्वरी काली के उपरोक्त सभी रूप विभिन्न शास्त्रों में वर्णित हैं। परन्तु

जहां तक सामान्य आराधकों-उपासकों का प्रश्न है, वे इस बारे में इतना ही जानते हैं कि भगवान भोलेशंकर की अर्द्धांगिनी पार्वतीजी ने ही दैत्यों के संहार के लिए मातेश्वरी दुर्गा और काली के रूप धारण किए थे। इस बारे में हमारे धर्म शास्त्र कहते

भगवान शिव एवं मातेश्वरी पार्वती

हैं कि यद्यपि प्राण हरण करने का कार्य यमराज करते हैं, परन्तु इस काल के भी महाकाल और प्रलय के समय अपने तांडव नृत्य द्वारा महाप्रलय लाने वाले भगवान शिव ही हैं। भगवान शिव की भार्या होने के कारण ही मातेश्वरी का एक नाम महाकाली है।

शास्त्र यह भी कहते हैं कि आदिशक्ति भगवती योगमाया का ही एक सबसे सशक्त व दिव्य रूप है—भगवती दुर्गा और दूसरा स्वरूप है काली। वास्तव में मातेश्वरी काली और दुर्गा अलग-अलग नहीं, एक ही शक्ति के दो रूप हैं। राक्षसों के वध करने अथवा किसी अन्य विशिष्ट प्रयोजन के लिए ही वे भगवती दुर्गा या काली के साकार रूप में प्रकट होती हैं, जबकि अधिकांश समय आप शिवजी की शक्तिस्वरूपा मातेश्वरी पार्वती के रूप में उनके साथ रहती हैं।

उपरोक्त विवेचन यद्यपि पूर्णतया शास्त्र सम्मत हैं और दुर्गा सप्तशती, शिव पुराण तथा तन्त्र शास्त्र के ग्रन्थों में इन सभी रूपों का वर्णन विशद रूप में उपलब्ध

है, परन्तु हमने इस अध्याय में अत्यन्त संक्षेप में इनका उल्लेख किया है। इसका कारण यह है कि हम और आप कोई तर्कशास्त्री नहीं हैं। दूसरे, इसके गहन अध्ययन का मातेश्वरी की पूजा, आराधना अथवा उपासना में कोई विशिष्ट महत्व भी नहीं है। हम मातेश्वरी के एक सीधे-सादे और अज्ञानी बालक हैं। वे हमारी ममतामयी मातेश्वरी हैं और हम हैं उनके पुत्र-पुत्री। हम तो बस इतना ही जानते हैं कि उनके जिस रूप-स्वरूप की झांकी मन-मन्दिर में बसाकर उनकी आराधना-उपासना करेंगे, वे उसे स्वीकार कर लेंगी। मातेश्वरी काली के किसी भी स्वरूप की किसी भी नाम से पूजा-उपासना की जाए, वह होती तो मातेश्वरी काली की ही आराधना है। वे सगुण रूप में भगवती काली हैं तो निर्गुण रूप में आदिशक्ति भगवती भवानी और परब्रह्म परमेश्वरी।

❑❑

3

काली स्वरूपों के गूढ़ार्थ

भगवान विष्णु के अवतार अयोध्या-नरेश श्रीराम और द्वारकाधीश श्रीकृष्ण के रूप में वैभव से परिपूर्ण तथा पूर्णतया राजस हैं। बाल रूप में श्रीकृष्ण और वनवासी श्रीराम भी अत्यन्त सौम्य रूप में हैं, यद्यपि उन्होंने बड़े-बड़े राक्षसों का वध इन अवस्थाओं में भी किया था। इनके विपरीत भगवान शिवजी के अवतार भैरवदेवजी का रूप पूर्णतया औघड़ है जबकि आदिशक्ति जगदम्बा के साकार रूप काली का स्वरूप वीभत्स की सीमा तक भयोत्पादक है। आप अपने सौम्य रूपों में भी कण्ठ में नरमुण्डों की माला और हाथों में खड्ग एवं खप्पर धारण करती हैं। आपके सभी स्वरूपों में आपका रंग अत्यन्त काला, आंखें क्रोध से रक्तवर्ण और खुले मुंह से जिह्वा बाहर निकली होती है।

जहां तक रौद्र रूपों का प्रश्न है, आप मनुष्यों के कुहनी से कटे हुए हाथों की माला अधोवस्त्र की तरह कमर में बांधती हैं और छोटे बालकों के दो शव कुण्डलों के रूप में कानों में धारण करती हैं। इसके साथ ही बाहर को लपलपाती लाल जिह्वा, होंठों के दोनों किनारों से निरन्तर बहती रुधिर की धारा और हाथ में लटक रहा नरमुण्ड आपके रूप को अत्यधिक विकराल बना देता है। इसी प्रकार श्मशान आपका निवास, शव को वाहन और मनुष्यों की जलती हुई चिता के मध्य नृत्य करना आपका प्रिय क्रीड़ा माना जाता है। रही-सही कसर अघोरियों, स्वार्थी तान्त्रिकों तथा लोक-प्रणालियों से भगवती काली की आराधना तथा काली सिद्धि करने वाले अज्ञानियों ने पूरी कर दी है।

सम्पूर्ण भारत में अर्थात् उत्तर से दक्षिण और पूर्व से पश्चिम तक मातेश्वरी काली की पूजा-आराधना व्यापक स्तर पर की जाती है। अन्य देवों-अवतारों के समान ही सद्गृहस्थ मातेश्वरी काली की पूजा, उपासना और साधना करते ही हैं, वनांचलों में रहने वाले आदिवासियों एवं क्षेत्रवासियों द्वारा भी भगवती काली की आराधना बहुतायत रूप से की जाती है। वास्तविकता तो यह है कि कुछ वर्षों पूर्व जो वर्ग समाज में उपेक्षित थे तथा देवी-देवताओं के मन्दिरों में जा तक नहीं सकते

थे, वे सभी भगवती काली और भगवान भैरवदेव की पूजा-आराधना करते थे। उन्हें न तो धर्मशास्त्र पढ़ने की आज्ञा थी और न ही साधू-सन्तों के प्रवचन तथा कथा-भागवद् सुन पाने की सुविधा। इसीलिए उन्होंने काली-आराधना की अपनी प्रणालियां विकसित कर लीं। वे मातेश्वरी को भोग-प्रसाद के रूप में बकरे, भैंसे तथा मुर्गे आदि की बलि चढ़ाते हैं और पीने के लिए उन्हें मदिरा तक अर्पित करते हैं। मातेश्वरी काली के नाम पर हिंसा करना और उनके स्वरूप को वीभत्स समझना हमारा अज्ञान ही है, जबकि वे तो करुणा का सागर तथा सभी प्राणियों की ममतामयी मां हैं। शास्त्रों में भगवती काली के श्मशान निवास, नरमुण्ड धारण, मुख से टपकते रुधिर आदि सभी प्रतीकों की पूर्णतया तर्कसम्मत व्याख्याएं हैं। इनके वे अर्थ और अभिप्राय नहीं, जो ऊपर से देखने में नजर आते हैं। प्रत्येक प्रतीक का आध्यात्मिक विवेचन है जो मातेश्वरी के विभिन्न गुणों एवं शक्तियों को प्रकट करता है।

शव-आसन, श्मशानवास और चिता की ज्वालाएं

मनुष्य के शरीर से प्राण निकल जाने पर वह शव मात्र रह जाता है और उसे चिता में रखकर श्मशान में जला दिया जाता है। मनुष्य का शरीर पांच तत्वों—भूमि, जल, वायु, अग्नि एवं आकाश—से मिलकर बना है। चिता में शव जलाकर इन पांच तत्वों को उनमें ही विलीन किया जाता है। मातेश्वरी के श्मशानवास और चिता की ज्वालाओं के मध्य नृत्य करने का अभिप्राय सामान्य श्मशान और चिताएं नहीं हैं। इसका आध्यात्मिक अर्थ यह है कि जो व्यक्ति भगवती की आराधना-उपासना करने के साथ ही अपने लोभ, मोह, क्रोध, अहंकार और काम जैसे पंच विकारों तथा घृणा, हिंसा, छल, झूठ एवं अज्ञान जनित अन्य विकृतियों को ज्ञान की अग्नि में जलाता रहता है, उसी पर भगवती काली कृपा करती हैं। जिस प्रकार श्मशान में निरन्तर चिताएं जलती रहती हैं, उसी प्रकार जो व्यक्ति हर समय अपने हृदय में ज्ञान की अग्नि जलाए रखकर अपने मन और आत्मा को भगवती के प्रेम की अग्नि में तपाता रहता है, उसके मन-मन्दिर में ही भगवती काली अपना निवास बनाती हैं।

इसका दूसरा अभिप्राय यह है कि श्मशानों में शवों की त्वचा, मांस-मज्जा आदि तो पूर्णतया जल जाते हैं, परन्तु कुछ अस्थियां (हड्डियां) शेष रह जाती हैं। इस रूप में श्मशान इस बात का प्रतीक है कि जो व्यक्ति अपने हृदय रूपी श्मशान में बाह्य आडम्बर रूपी त्वचा और रजोगुण एवं तमोगुण रूपी मांस-मज्जा को जलाकर पूर्णतया नष्ट कर देता है, परन्तु दूधिया सफेद हड्डियों के समान केवल सतोगुण को ही बचाकर रखता है, उसके हृदय में मातेश्वरी काली सतत् रूप से निवास करती हैं। इसी बात को श्रीमद्भगवद् गीता में भगवान कृष्ण ने इन शब्दों में कहा है—"हे

अर्जुन! जो साधक अपनी आत्मा की अग्नि में अपने विकारों का यज्ञ-होम करते रहते हैं, वे भक्त मुझे अत्यन्त प्रिय हैं।'' बात एक ही है, श्रीकृष्ण ने जिसे यज्ञ और होम कहा है, काली-आराधकों ने उसे श्मशान एवं चिता कहा है। अन्तर मात्र शब्दों का है, दोनों का भाव समान है।

काली द्वारा वाहन के रूप में शव अर्थात् मृत शरीर पर आरूढ़ होने का रहस्य तो इससे भी गहन-गम्भीर है। शव का आसन और वाहन इस आध्यात्मिक तथ्य का प्रतीक है कि जब तक व्यक्ति के शरीर में भगवती काली की शक्ति अपने अंश रूप में विराजमान रहती है, तभी तक वह जीवित रहता है। उस शक्ति के शरीर से बाहर निकलते ही वह शव हो जाता है। इसीलिए हमारे धर्मग्रन्थ कहते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति को हर समय भगवती काली के चिन्तन में लीन रहना चाहिए,

शव पर सवार मातेश्वरी काली का अद्भुत रौद्र रूप

जिससे भगवती की शक्ति प्राण के रूप में उसे मिलती रहे। इस प्रतीक का दूसरा अभिप्राय यह है कि व्यक्ति जब अपने आपको भूलकर, अपने सभी कार्य भगवती का आदेश मानकर करता है और उनका फल उन पर छोड़ देता है, तभी वे उसके ऊपर अपनी कृपाओं की वर्षा करती हैं। यह शरीर मुख्य नहीं, मुख्य आत्मा है और जीवात्मा के निकलते ही शरीर शान्त हो जाता है। जब व्यक्ति अपनी आत्मा को

पूर्णतया भगवती को अर्पित कर देता है, उसकी आत्मा हर समय भगवती के ध्यान और चिन्तन में लगी रहती है। ऐसी अवस्था में पहुंचे योगी ही भगवती का साक्षात् सान्निध्य प्राप्त कर पाते हैं। प्राणीमात्र को यह संदेश देने के लिए ही भगवती काली ने शव को अपने आसन के रूप में निरूपित किया है।

काला रंग तथा खुले केश

भगवान विष्णु, शिवजी और राम का वर्ण नीलाम्बर के समान नीलाभ शुभ्र है जबकि श्री कृष्ण का रंग सांवला-सलोना। परन्तु भगवती काली का रंग तो कोयले की तरह काला है। भगवती के इस स्वरूप को काली अथवा महाकाली उनके अत्यधिक काले वर्ण के कारण ही कहा जाता है।

आपके शरीर का यह काला रंग इस बात का प्रतीक है कि जिस प्रकार सफेद, पीला, हरा, सुनहरा आदि कोई भी रंग काले रंग पर नहीं चढ़ता, ठीक उसी प्रकार भगवती काली भी सृष्टि के सभी प्रभावों से मुक्त हैं। काला रंग अन्य सभी रंगों पर चढ़ जाता है। यदि काले रंग में कोई और रंग मिला दिया जाए, तो वह भी काले रंग में मिलकर उसका एक भाग बन जाता है। भगवती के शरीर का यह काला रंग इस बात का भी द्योतक है कि प्रलय के समय स्थावर-जंगल आदि सभी वस्तुएं ही नहीं, सभी देवता और ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव तक इस आदिशक्ति में समा जाते हैं। सृष्टि की दोबारा रचना होने तक सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड आदिशक्ति भगवती भवानी की निराकार ज्योति में ही समाहित रहता है। इस प्रकार वे सबका आधार हैं, परन्तु उनका आधार अथवा उनसे बड़ा कोई नहीं है।

खुले और लहराते हुए केशों का रहस्य तो इससे भी गम्भीर है। इस सम्पूर्ण सृष्टि की आधार, लयस्थल और उत्पन्नकर्ता होने के कारण भगवती काली ने जहां स्वयं अपने रंग को काला निरूपित किया है, वहीं अपने केशों को भी खुला छोड़ दिया है। खुले केश इस बात का प्रतीक हैं कि भगवती काली हर प्रकार के बन्धनों से मुक्त हैं। मोह, लोभ, अहंकार, क्रोध और आवेग जैसे विकारों से तो आप रहित हैं ही, आपसे बड़ा अथवा आपको किसी वचन-बन्धन में बांधने में भी कोई सक्षम नहीं है। इसी प्रकार आपकी भयंकर आकृति दुष्टों और दैत्यों को सावधान करने के लिए है कि वे पाप एवं अत्याचार करने की चेष्टा न करें, वर्ना मैं उन्हें नष्ट कर दूंगी। वैसे एक भक्त के लिए तो सौन्दर्य, स्निग्धता और दया की साक्षात् मूर्ति ही हैं भगवती काली।

दिगम्बर रूप एवं महाघोरा अट्टहास

हमारे सभी देवी-देवता पर्याप्त वस्त्र धारण करते हैं। शिवजी गजचर्म अथवा मृगछाला लपेटते हैं। हनुमानजी और भैरवदेवजी यद्यपि अधूरे वस्त्र पहनते हैं, परन्तु दिगम्बर कोई नहीं है। इन सभी के विपरीत मातेश्वरी काली कोई वस्त्र, बाघाम्बर या

मृगछाला नहीं धारण करतीं। वे अपनी कटि में कटे हुए हाथों की माला पहनती हैं और बाकी शरीर अनावृत रखती हैं। परन्तु उनके इस दिगम्बर रूप का भी एक गम्भीर रहस्य है। यह भौतिक नग्नता नहीं है, बल्कि आध्यात्मिक स्तर पर इस बात का प्रतीक है कि मातेश्वरी काली सभी प्रकार के विकारों, बंधनों एवं आडम्बरों आदि से पूर्णत: रहित हैं। दसों दिशाएं ही उनका अम्बर अर्थात् वस्त्र हैं। वे योगमाया के रूप में स्वयं तो त्रैलोक्य के सभी प्राणियों को अपनी माया में लपेटे हुए हैं, परन्तु माया उन्हें छू भी नहीं सकती। यह भी दार्शनिक अभिप्राय है, उनके इस दिगम्बर रूप का। मातेश्वरी का विग्रह षोडशी बाला का है, उम्र का उन पर कोई अन्तर नहीं पड़ता।

कारण स्पष्ट है—वे अजर, अमर और नित्य यौवनमयी हैं। समय अथवा काल का उन पर कोई असर नहीं होता। इस प्रकार वे किसी भी रूप में काल के वशीभूत नहीं, बल्कि समय और मृत्यु दोनों ही रूपों में काल उनके पूर्णत: अधीन है। इसके
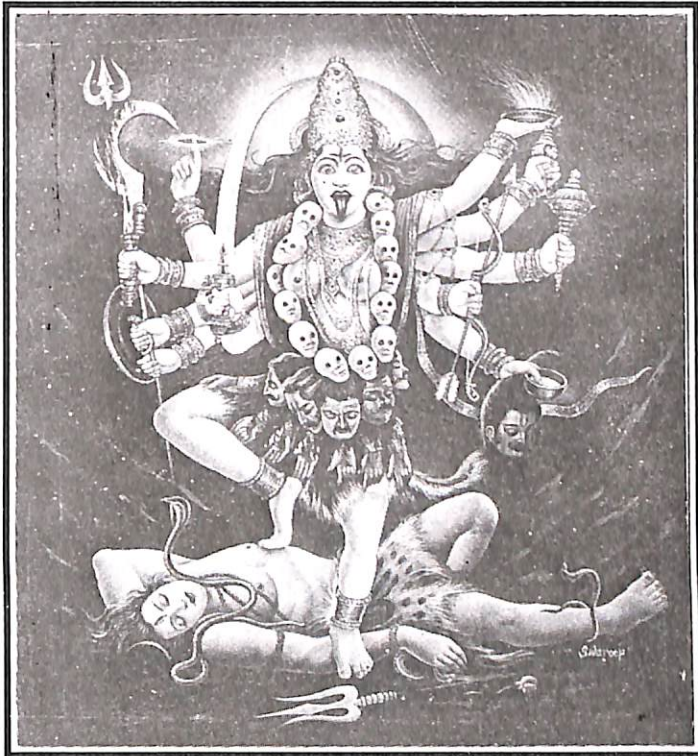
भगवती भवानी का सबसे शक्तिशाली रूप हैं मां काली

साथ ही भगवती काली महाघोरा अर्थात् बादलों के गर्जन के सदृश्य घनघोर शब्द करने वाली हैं। परन्तु आप दैत्यों और दुष्टों पर ही सिंह के समान गरजती हैं, भक्तों से तो स्मित हास्य के साथ अत्यन्त मधुर स्वर में वार्तालाप करती हैं।

मुंडमाला, हस्तकरधनी और कपाल धारण

मातेश्वरी के इन तीनों प्रतीकों के गलत अर्थ लगाए जाते हैं, क्योंकि वे इन वस्तुओं के धारण करने के कारण ही इतनी वीभत्स दृष्टिगोचर होती हैं। भगवती काली अपने गले में न तो पुष्पहार अथवा मोतियों की माला धारण करतीं है और न ही कोई वस्त्र। वे अपने कण्ठ में पचास नरमुण्डों की माला और कमर में मनुष्यों के कुहनी पर से कटे हुए हाथों की माला को अधोवस्त्र के रूप में धारण करती हैं। उनके नीचे वाले बाएं हाथ में रुधिर टपकता हुआ नरमुण्ड है। उन्होंने कानों में कुण्डलों के स्थान पर शिशुओं के दो शव धारण कर रखे हैं। अपने गले में पहनी मुण्डमाला के ये पचास मुण्ड पचास मातृकावर्णों के प्रतीक हैं। मस्तिष्क ज्ञान का द्योतक है। अत: मुण्डों की यह माला इस बात का प्रतीक है कि भगवती ज्ञानवान व्यक्तियों को ही पसन्द करती हैं और ज्ञानी भक्तों को ही अपने हृदय के निकट स्थान देती हैं। सभी शुभ कार्य दाएं हाथ से किए जाते हैं और छोटे तथा अशुभ कार्य बाएं हाथ से। मातेश्वरी काली ने अपने नीचे की ओर लटके हुए बाएं हाथ में भी ज्ञान का प्रतीक नरमुण्ड धारण किया हुआ है। यह इस बात का प्रतीक है कि मातेश्वरी काली का छोटे-से-छोटा कार्य भी शुद्ध ज्ञान से परिपूर्ण होता है। इस मस्तक से निरन्तर टपकता हुआ रुधिर तमोगुण तथा रजोगुण का प्रतीक है। लहू से टपकता हुआ मस्तक इस बात का प्रतीक है कि जो व्यक्ति अपने रजोगुण और तमोगुण को मस्तक से टपकते हुए इस रक्त के समान ही अपने मन-मस्तिष्क से निकाल देता है, उसे भगवती काली स्वयं थाम लेती हैं।

मातेश्वरी काली ने कानों में कुण्डलों के रूप में छोटे बालकों के जो दो शव पहने हुए हैं, उनका अभिप्राय भी इसी प्रकार आध्यात्मिक और भावनात्मक है। कानों में कुण्डलों के समान पहने हुए बालकों के शव इस तथ्य को घोषित करते हैं कि जो भक्त छोटे बालकों की तरह निश्चल और निर्विकार है, उसकी प्रार्थनाओं को जगदम्बा सुनती हैं। जिस प्रकार मस्तिष्क को ज्ञान का द्योतक माना जाता है, उसी प्रकार हाथों को कर्म और क्रियाशीलता का प्रतीक कहा जाता है। यही कारण है कि मातेश्वरी काली द्वारा कमर में पहनी गई हाथों की करधनी उनकी क्रियाशीलता का प्रतीक-स्वरूप है। इसके साथ ही यह इस बात का भी द्योतक है कि ब्रह्माण्ड के सभी जीव भगवती से ही कर्म की प्रेरणा लेते हैं और प्रलयकाल में उन्हीं में समाहित हो जाएंगे।

बाहर निकली जिह्वा एवं दांत

मातेश्वरी काली का उपरोक्त स्वरूप उनके रौद्र रूपों के चित्रों और शास्त्रों में ही वर्णित है। परन्तु उनके सौम्य से भी सौम्य स्वरूपों में उनकी जीभ बाहर निकली हुई और चमकते हुए दांत चित्रित हैं। मातेश्वरी के सौम्य रूपों के

आराधक जहां उनकी मूर्ति को वस्त्र एवं आभूषण पहनाकर पूर्ण शृंगार करते हैं, वहीं उन विग्रहों में भी उनका मुंह खुला हुआ और जीभ बाहर निकली हुई प्रदर्शित की जाती है। मातेश्वरी की बाहर निकली जीभ का रंग ऊपर की तरफ लाल और नीचे की ओर कालिमायुक्त है। अपनी जीभ को बाहर निकालकर देवी ने इसे अपने मोती जैसे धवल-श्वेत दांतों से दबाया हुआ है। यहां भी जिह्वा का लाल और काला रंग क्रमश: रजोगुण एवं तमोगुण का प्रतीक है, जबकि दांतों का दूधिया-सफेद रंग सत्वगुण का। इस रूप में मातेश्वरी काली हमें सन्देश देती हैं कि अपने रजोगुणों और तमोगुणों को न केवल बाहर निकालने की चेष्टा करते रहो, बल्कि सत्वगुणों से काटकर इन्हें दूर भी फेंक दो। इसी प्रकार मातेश्वरी काली के होंठों के दोनों किनारों से रक्त की धाराएं बहती रहती हैं। यह बहता हुआ रक्त भी सामान्य रुधिर नहीं, भक्तों के लिए इस बात का आदेश है कि वे अपने मन-मस्तिष्क से लोभ, मोह, अहंकार, काम व क्रोध आदि विकारों और हिंसा, छल, कपट, घृणा, झूठ तथा अज्ञान जैसी दुष्प्रवृत्तियों को सतत् चेष्टा करके बाहर निकालते रहें। परन्तु यह हमारा दुर्भाग्य ही है कि हम मातेश्वरी के इस रूप-स्वरूप के आध्यात्मिक सन्देश को समझने के स्थान पर इनके बाह्य रूप में ही उलझे रहते हैं।

मातृयोनि, लिंग, बलिदान तथा मद्यपान

शिवजी के परम पुनीत प्रतीक को शिवलिंग कहा जाता है और इसको धारण करने वाली मेखला को मातृयोनि। इसी प्रकार जप और भजन में काम आने वाली माला के दानों को योनि कहा जाता है और माला के सुमेरु को मातृयोनि। यही नहीं, मानव शरीर में मूलाधार स्थित त्रिकोण को भी मातृयोनि कहा जाता है। तान्त्रिक साधनाओं में मूलाधार स्थित इस त्रिकोण को उचित स्थिति में रखकर वांछित आसन में बैठने का बहुत अधिक महत्व है। जिस प्रकार शिवजी के परम पवित्र प्रतीक को शिवलिंग कहा जाता है, ठीक उसी प्रकार काली तन्त्र साधना में लिंग का अभिप्राय है जीवात्मा। इसी प्रकार साधना में कुण्डलिनी को जीवात्मा की भागिनी माना जाता है। तन्त्र साधना की किसी पुस्तक में यदि यह लिखा है कि मातृयोनि स्थित भगिनी को उद्वेलित करके लिंग का उससे सम्पर्क करें, तो उसका अभिप्राय यही है कि मूलाधार के त्रिकोण में स्थित कुण्डलिनी को जाग्रत करके आत्मा से उसे एकाकार कर भगवती का ध्यान और मन्त्र साधना कीजिए। परन्तु कुछ अज्ञानी और दुष्ट साधक इनके लैंगिक मतलब लगाकर सम्पूर्ण अर्थ का अनर्थ कर रहे हैं।

पूजा-आराधना और तन्त्र साधना के अन्त में किए जाने वाले मद्यपान एवं बलिदान शब्दों का भी विशिष्ट अभिप्राय है। अन्य प्रतीकों के समान ही मद्यपान का अर्थ मदिरा का सेवन और बलिदान का अर्थ पशु हिंसा कदापि नहीं है। मातेश्वरी काली तो परम सात्विक आद्या मातृशक्ति हैं, फिर मद्यपान जैसे आसुरी कर्म की आज्ञा वे दे ही नहीं सकतीं। आराधना और तन्त्र साधना में मद्यपान का अभिप्राय है,

कुण्डलिनी को जाग्रत करने के बाद षटचक्र भेदन करते हुए उसे सहस्राधार में ले जाकर भगवती से एकाकार होकर उनके दर्शन एवं कृपाओं के परमानन्द रूपी अमृत का पान करना। इसी प्रकार बलिदान का अर्थ भी पशु हिंसा अथवा पशुओं का देवी के निमित्त बलि चढ़ाना नहीं है। बलिदान का अभिप्राय है—काम, क्रोध, अहंकार, दुर्व्यसनों आदि का मर्दन और हनन करके निष्काम भाव से मातेश्वरी की आराधना एवं साधना करना। मातेश्वरी सम्पूर्ण सृष्टि की निर्माता तथा पालनकर्ता हैं। सभी जीवधारी उनके पुत्र और पुत्रियां हैं, फिर वे अपनी आराधना-साधना में अपने बच्चों की हत्या की आज्ञा कैसे दे सकती हैं?

मातेश्वरी काली द्वारा धारण किए जाने वाले सभी पदार्थों तथा उनके रूप-स्वरूप के प्रत्येक पहलू का आध्यात्मिक महत्व है और इसे समझना प्रत्येक काली उपासक-आराधक का अनिवार्य कर्तव्य। मातेश्वरी काली का शरीर पुष्ट नहीं, अस्थिपंजर मात्र है, जबकि वक्षस्थल अत्यन्त पुष्ट और उन्नत है। यह भी इस बात का प्रतीक है कि मातेश्वरी ही इस त्रैलोक्य की पालन-पोषणकर्ता हैं। वे अपना दुग्धपान कराकर ब्रह्माण्ड के सभी जीवों को पाल रही हैं। वास्तविकता तो यह है कि मातेश्वरी का यह रूप-स्वरूप भी केवल बाह्य ही है, अपने भक्तों के लिए तो वे दया से भरपूर, सर्वदा प्रसन्न रहने और सभी पर करुणा बरसाने वाली मां हैं। इस स्वरूप का चिन्तन करते हुए ही, मातेश्वरी की आराधना-उपासना करने में हमारा और सम्पूर्ण विश्व का कल्याण है।

❑❑

4

मातेश्वरी काली की कथा

गत तीन अध्यायों में हमने मातेश्वरी काली के आदिशक्ति, निराकार रूप, विभिन्न शास्त्रों में वर्णित उनके विविध रूप और स्वरूप के आध्यात्मिक पक्षों का अवलोकन किया है। इनका शास्त्रों में बड़े विशद रूपों में वर्णन है। इन सभी विवेचनों को वर्षों तक अध्ययन-मनन करने के पश्चात् भी कोई इन्हें पूर्णरूपेण समझने का दावा नहीं कर सकता। मातेश्वरी को अच्छी प्रकार समझने और उनके बारे में भ्रान्त धारणाओं के निराकरण के लिए जितना अधिक-से-अधिक अध्ययन-मनन किया जाए, उतना ही कम है। वैसे मातेश्वरी काली परम उदार और भक्त वत्सल हैं। वे ज्ञानी-अज्ञानी भक्तों पर समान भाव से अपनी कृपादृष्टि बनाए रखती हैं। इस अध्याय में हम मातेश्वरी के रूप-स्वरूप के आध्यात्मिक चिन्तन के बाद उस सीधी-सादी कथा को पढ़ेंगे, जिसे प्रत्येक काली और दुर्गाभक्त ही नहीं, बल्कि भारत का बच्चा-बच्चा जानता है। इस कथा का भी अपना विशिष्ट महत्व है, क्योंकि हम में से अधिकांश लोग मातेश्वरी के इसी अवतार की आराधना-उपासना करते हैं। अन्य रूपों के आराधक तो इसे मातेश्वरी काली का सबसे प्रमुख स्वरूप मानते हैं।

अवतरण का प्रयोजन

रावण और कंस जैसे दानवों को समाप्त कर धर्म एवं सन्तजनों की रक्षा के लिए भगवान विष्णु स्वयं श्रीराम तथा सोलह कला निधान पूर्णावतार भगवान कृष्ण के रूप में अवतार धारण करते हैं। इन दोनों रूपों के अतिरिक्त भी भगवान विष्णु और आशुतोष शिवजी ने अन्य कई बार भी अवतार धारण किया है। परन्तु जब कभी दानवों का दल इतना शक्तिशाली हो जाता है कि स्वर्ग पर भी आधिपत्य कर लेता है और सभी देव एक साथ मिलकर उनका सामना नहीं कर पाते, तो यह आदिशक्ति महामाया कभी दुर्गा, कभी काली, कभी महाकाली एवं कभी दक्षिण काली के रूप में अवतार धारण करती है। जब-जब देवताओं पर कोई भीषण संकट आया है अथवा राक्षसों ने देवताओं से स्वर्ग तक छीन लिया है, तब-तब आदिशक्ति

महामाया ने अपने सबसे प्रचण्ड रूप—काली अथवा महाकाली—में प्रकट होकर देवताओं, धर्म और सन्तजनों की रक्षा एवं दैत्यों का विनाश किया है। यही कारण है कि काली, महाकाली, आद्याकाली, दक्षिण काली और चामुण्डा आदि अनेक नाम-स्वरूप हैं, हमारी उपास्यदेव मातेश्वरी काली के। वैसे ये सभी पृथक-पृथक देवियां नहीं, मातेश्वरी दुर्गा के मस्तक से उत्पन्न होने वाली काली के ही विविध रूप हैं। दुर्गा सप्तशती के सातवें और आठवें अध्याय में वर्णित मातेश्वरी काली के प्रकट होने तथा चण्ड, मुण्ड एवं रक्तबीज सहित हजारों दैत्यों को समाप्त करने की कथा संक्षेप में इस प्रकार है—

अवतरण कथा

एक बार दैत्यों की शक्ति बहुत अधिक बढ़ गई। उन्होंने देवराज इन्द्र का सिंहासन छीनकर, सभी देवताओं को स्वर्ग से निकाल वहां अधिकार कर लिया। इन दैत्यों के राजा शुम्भ और निशुम्भ नामक दो भाई थे। महिषासुर, रक्तबीज, चण्ड, मुण्ड व धूम्रलोचन जैसे दर्जनों सेनानायक और करोड़ों दैत्यों की सुसज्जित सेना उनके पास थी। पराजित देवताओं द्वारा प्रार्थना किए जाने पर आदिशक्ति भगवती भवानी ने दुर्गा के रूप में अवतरित होकर उन दैत्यों का संहार किया था। इस युद्ध के मध्य ही देवी दुर्गा ने अपनी सहायता के लिए अपने ललाट से एक अत्यन्त शक्तिशाली और विकराल देवी को प्रकट किया। काली, कालिका, चामुण्डा, महाकाली आदि इसी देवी के अनन्त नामों में से कुछ नाम हैं। गत अध्याय में, हमने आपके रूप-स्वरूप का जो अवलोकन किया है, वह इन्हीं रूपों का है।

मातेश्वरी दुर्गा के अवतार धारण और उनके द्वारा शुम्भ-निशुम्भ की सम्पूर्ण सेना के विनाश की कथा काफी लम्बी है। जब भगवती भवानी दुर्गा ने, शुम्भ-निशुम्भ के सेनापति धूम्रलोचन को सेना सहित यमपुरी पहुंचा दिया, तो दैत्यराज शुम्भ ने चण्ड-मुण्ड को आदेश दिया कि वे देवी को पकड़कर उसके पास लाएं।

आज्ञा पाते ही दैत्यों ने जगदम्बा दुर्गा को चारों ओर से घेर लिया और उन्हें पकड़ने-मारने की चेष्टा करने लगे। यह देख देवी को बहुत क्रोध आया। क्रोध के कारण उनका मुखमण्डल काला पड़ गया। भौंहें वक्र हो उठीं। उसी समय उनकी भौंहों के मध्यवर्ती भाग और ललाट से विकराल मुख वाली काली नामक देवी प्रकट हुईं। अत्यन्त भयंकर और शक्तिशाली होने के बावजूद काली माई का शरीर अत्यन्त कृशकाय था। उनके शरीर में नाममात्र का मांस था। केवल अस्थिपंजर नजर आता था, जिससे वे अत्यन्त भयावह दिखाई पड़ रही थीं। काली, कालिका, महाकाली, चण्डिका और चामुण्डा आदि नामों से विख्यात चार भुजा वाली यह देवी अपने हाथों में तलवार, पाश और विचित्र खटवांग धारण किए हुए थीं। वह चीते के चमड़े की साड़ी पहने नरमुण्डों की माला से अलंकृत थीं।

भवानी दुर्गा के मस्तक से प्रकट होने के बावजूद काली माई का स्वरूप अत्यन्त विकराल था। वे काफी लम्बी-पतली थीं और किसी भी वाहन पर सवार नहीं थीं। उनका मुखमण्डल बहुत अधिक बड़ा था। उनकी लम्बी जीभ काफी बाहर तक निकली हुई थी। उनकी आंखें अंगारों की तरह दहक रही थीं और अपनी भीषण गर्जना से पृथ्वी-आकाश को कंपा रही थीं। अपनी घोर गर्जना से सभी दिशाओं को गुंजाते हुए मातेश्वरी काली बड़े वेग से दैत्यों की सेना पर टूट पड़ीं और उनका भक्षण करने लगीं। वे पार्श्वरक्षकों, अंकुशधारी महावतों, योद्धाओं तथा अनेक हाथियों को एक ही हाथ से पकड़कर अपने मुख का ग्रास बना रही थीं। किसी को बालों से पकड़ लेतीं, किसी का गला दबोच देतीं, किसी को पैरों से कुचल डालतीं और किसी को छाती के धक्के से गिराकर मार रही थीं। वे असुरों के फेंके हुए बड़े-बड़े अस्त्र-शस्त्र मुंह से पकड़ लेतीं और रोष में भरकर उनको दांतों से चकनाचूर कर डालतीं। काली द्वारा अनेक दैत्य तलवार के घाट उतारे गए। अनेक खटवांग से पीटे गए और कितने ही असुर दांतों के अग्रभाग से कुचले जाकर मृत्यु को प्राप्त हुए। इस प्रकार देवी ने असुरों की उस समस्त सेना को क्षणभर में ही धराशायी कर दिया। अपनी सेना का विनाश होते देख चण्ड काली देवी की ओर दौड़ा। महादैत्य मुण्ड ने भी अत्यन्त भयंकर बाणों की बौछार तथा हजारों चक्रों एवं अन्य शस्त्रों से भयानक नेत्रों वाली देवी को आवृत कर दिया। वे चक्र देवी के मुख में समाते हुए ऐसे जान पड़ रहे थे, मानो सूर्य के बहुतेरे मण्डल बादलों के उदर में प्रवेश कर रहे हों।

मातेश्वरी काली दैत्य सेनापति मुण्ड द्वारा चलाए गए अस्त्र-शस्त्रों का भक्षण करते और अनेक राक्षसों को अपने शस्त्रों से समाप्त करते हुए विकट अट्टहास करती जा रही थीं। इसी समय भगवती काली ने दूसरे दैत्य सेनापति चण्ड को अपनी ओर आते देखा। क्रोध में भरकर काली माई ने चण्ड पर आक्रमण कर दिया। एक हाथ से उसके केश पकड़कर दूसरे हाथ से उसकी गर्दन काट उसे यमलोक पहुंचा दिया। अपने भाई चण्ड को देवी के हाथों मरता देख मुण्ड अनेक भयावह दैत्यों के साथ मातेश्वरी काली की ओर दौड़ पड़ा। तब देवी ने रोष में उसे भी तलवार से मारकर धरती पर सुला दिया। महापराक्रमी चण्ड और मुण्ड के मरते ही शेष सेना आतंकित होकर भाग गई। उसी समय काली ने चण्ड और मुण्ड के मस्तक हाथ में लेकर जगदम्बा दुर्गा के पास जाकर प्रचंड अट्टहास करते हुए कहा—"देवि! मैं चण्ड-मुण्ड नामक इन दो भयानक महाअसुरों के मस्तक आपको भेंट करने के लिए लाई हूं।"

इस पर कल्याणमयी दुर्गा ने काली से मधुर वाणी में कहा—"देवि! तुम चण्ड और मुण्ड को मारकर मेरे पास आई हो, इसलिए संसार में तुम्हारा एक नाम चामुण्डा भी होगा।"

मातेश्वरी काली द्वारा चण्ड-मुण्ड और अनेक सैनिकों के मारे जाने पर दैत्यराज शुम्भ स्वयं अपने सभी सेनापतियों सहित युद्ध के लिए वहां आ गया। कई करोड़ असुर सैनिक उसके साथ थे। उस समय सभी मातृशक्तियां भी देवी की सहायता के लिए युद्ध क्षेत्र में आ गईं। दोनों ओर से भीषण अस्त्र-शस्त्र चलने लगे। इस समय मातेश्वरी काली सभी मातृशक्तियों से आगे रहकर रणभूमि में विचरने लगीं। अपने खटवांग, त्रिशूल एवं अन्य अस्त्र-शस्त्रों से वे असंख्य दैत्यों को काल के गाल में पहुंचा रही थीं। यद्यपि सभी मातृशक्तियां, मातेश्वरी दुर्गा एवं उनका सिंह अनेक दैत्यों को समाप्त कर रहे थे, परन्तु मातेश्वरी काली साक्षात् रणचण्डी बनकर दैत्यों को गाजर-मूली की तरह काट रही थीं। मातेश्वरी काली इस समय इतने क्रोध में भरी हुई थीं कि वे दैत्यों को अस्त्र-शस्त्रों से मारने के साथ ही उनका भक्षण भी करती जा रही थीं। अत्यन्त भयंकर और विकराल रूप था, इस समय मातेश्वरी काली का। अनेक राक्षस तो आपके इस रूप को देखकर तथा उनके द्वारा लगाए जा रहे अट्टहासों की भीषण आवाज सुन-सुनकर ही यमलोक सिधार गए।

मातेश्वरी काली का अवतरण मात्र इन दैत्यों को मारने के लिए ही नहीं हुआ था। उनका इससे भी अधिक महान कार्य था, दैत्य सेनापति रक्तबीज के वध में भगवती दुर्गा की सहायता करना। उस प्रचण्ड दैत्य रक्तबीज को एक अद्‌भुत वरदान प्राप्त था। जहां भी उसके रक्त की एक बूंद गिरती थी, वहीं तत्काल उतना ही शक्तिशाली एक असुर उत्पन्न हो जाता था।

मातेश्वरी काली, भगवती दुर्गा और अन्य मातृशक्तियों के हाथों दैत्यों को मरते एवं घायल होते देख महादैत्य रक्तबीज ने मातेश्वरी पर हमला कर दिया। वह अपनी गदा से सभी मातृशक्तियों पर एक साथ प्रहार करने लगा। जब मातृशक्तियों ने उस पर प्रहार किए, तो उसके शरीर का रक्त जहां-जहां गिरता, वहां-वहां उसके समान ही एक अन्य बलशाली दैत्य पैदा हो जाता। इस प्रकार वहां असंख्य दैत्य उत्पन्न हो गए, जो रक्तबीज के समान ही बलशाली, भीषण और युद्धकला में निपुण थे। इस समस्या का एकमात्र समाधान यही था कि रक्तबीज के अंग-प्रत्यंग तो काटे जाएं, परन्तु उसके शरीर से निकलने वाले रक्त की एक बूंद भी भूमि पर न गिरने दी जाए। इस प्रयोजन की पूर्ति के लिए भगवती भवानी दुर्गा ने काली को चामुण्डा नाम से सम्बोधित करते हुए कहा—"चामुण्डे ! तुम अपने मुख को अधिक विस्तृत करो तथा मेरे शस्त्र-पात से गिरने वाले रक्तबिन्दुओं एवं उनसे उत्पन्न होने वाले महादैत्यों को अपने इस भयानक मुख से खा जाओ। इस प्रकार रक्त से उत्पन्न होने वाले महादैत्यों का भक्षण करती हुई तुम रण में विचरती रहो ! ऐसा करने से उस दैत्य का सारा रक्त खत्म हो जाने पर वह स्वयं भी नष्ट हो जायेगा। जब तुम उन भयंकर दैत्यों को खा जाओगी, तो दूसरे दैत्य नहीं उत्पन्न हो सकेंगे।"

मातेश्वरी दुर्गा की यह बात सुनकर भगवती काली ने अपना आकार बहुत

अधिक बढ़ा लिया। इस प्रकार उन्होंने रक्तबीज के रुधिर के पान और दैत्यों के भक्षण हेतु महाकाली का विकराल रूप धारण कर लिया।

भगवती दुर्गा, जो इस समय क्रोध के आवेग में रणचण्डी अर्थात् देवी चण्डिका बनी हुई थीं, ने अपने भीषण शूल से उस महादैत्य रक्तबीज पर प्रहार किया। फलस्वरूप उसके शरीर से रक्त की धार बहने लगी जिसे तत्काल ही मातेश्वरी काली ने अपनी लपलपाती जिह्वा द्वारा उदरस्थ कर लिया। भगवती भवानी ने रक्तबीज पर प्रहार जारी रखे। उसके शरीर में स्थान-स्थान से रक्त की धारा बहने लगी। रक्तबीज महाबलशाली और भयंकर दैत्य था, अतः उसके शरीर से बहुत अधिक रक्त बह रहा था। परन्तु उसका जितना भी रक्त बह रहा था, काली माई अर्थात् देवी चामुण्डा उसे तत्काल पीती जा रही थीं। इस रक्त को पीते समय रुधिर से काली के मुख में जो महादैत्य उत्पन्न हुए, उन्हें भी वे उदरस्थ करती चली गईं। इस प्रकार भगवती दुर्गा रक्तबीज पर प्रहार करती रहीं और मातेश्वरी काली उस रुधिर का पान करती रहीं। इस समय रक्तबीज के रक्त और उससे उत्पन्न असंख्य दैत्यों को भक्षण करने के लिए भगवती काली ने अपने मुख का आकार अत्यन्त विस्तृत कर लिया था। उन्होंने सम्पूर्ण रणभूमि में अपनी जिह्वा को फैला दिया था। रक्तबीज तथा अन्य सभी असुरों को मारने के पश्चात् मातेश्वरी काली सभी मातृशक्तियों सहित भगवती दुर्गा में लीन हो गईं।

शास्त्रों में मातेश्वरी काली के इस स्वरूप को चामुण्डा कहा गया है जबकि जन-सामान्य उन्हें मातेश्वरी काली, काली माई अथवा महाकाली ही कहता है। मां काली के अधिकांश आराधक, उपासक और तन्त्र-साधक मातेश्वरी के इसी रूप की पूजा, आराधना और उपासना करते हैं। वैसे भगवती काली का यह रौद्र रूप दुष्टों और असुरों के लिए ही विकराल है, भक्तों के लिए तो आप दया का सागर हैं। वे कल भी ममतामयी मातेश्वरी थीं, आज भी हैं और जब तक यह सृष्टि है तब तक रहेंगी।

❑ ❑

5

चण्डी चरित

समस्त हिन्दू समाज में सभी देवी-देवताओं और अवतारों से अधिक पूज्यनीय देव भगवती भवानी दुर्गा तथा जगदम्बा काली हैं। मुस्लिम शासकों ने भी मातेश्वरी के मन्दिरों में छत्र चढ़ाए हैं। हमारे यहां बौद्ध धर्म के समान ही सिख धर्म भी है, जो निर्गुण ब्रह्म की उपासना का समर्थन करता है। सिख भाई अन्य देवी-देवताओं की मूर्ति-पूजा नहीं करते, परन्तु मातेश्वरी की शक्तियां व प्रताप इतना प्रभावशाली है कि सिखों के दसवें गुरु गोविन्द सिंहजी ने भी भगवती भवानी दुर्गा के अवतरण, रक्तबीज तथा अन्य दैत्यों के संहार में उनकी भूमिका के बारे में वर्णन किया है। इसी प्रकार अनेक भक्त कवियों ने भी मातेश्वरी के इन कृत्यों और यशों को विविध प्रकार से गाया है। इस अध्याय में आपके नित्य पाठ हेतु गायन की दृष्टि अत्यन्त मधुर एक चण्डी चरित तथा गुरु गोविन्द सिंहजी द्वारा विरचित चण्डी चरित का संकलन किया गया है। आप इन दोनों का नित्य पाठ करें अथवा किसी एक का, आपको संस्कृत के स्तोत्रों के पाठ के समान ही पुण्यफलों की प्राप्ति होगी।

चण्डी चरित्र

श्री भाल लसत विशाल शशि, मृग मीन खंजन लोचनी।
बाल वदन विशाल कोमल, वचन विघ्न विमोचिनी॥
सिंह वाहन धनुष धारण, कनक से तन सोहनी।
मुण्डमाल सरोज राजत, मुनिन के मन मोहनी॥
तू है एक रूप अनेक तेरे, गुणन की गिनती नहीं।
कुछ ज्ञान था सुजान भक्तन, भाव से विनती कही॥
वर विष्णु नवधा खड्ग खप्पर, अभय अंकुश धारिणी।
कर काज लाज जहाज जननी, जनन के हितकारिणी॥
मन्द हास प्रकाश चण्डी को, सो विन्ध्यवासिनी गाइये।
क्रोध तजि अभिमान हर, पर दुष्ट बुद्ध नसाइये॥

उठत बैठत चलत सोहत, बारम्बार मनाइये।
चण्ड मुण्ड विनाशिनी के, चरण चित्त लगाइये॥
चरण मुनि और बिन्दुहूते अधिक आनन्द रूप हैं।
सर्व सुख धाता विधाता, सर्व दर्श अनूप हैं॥
तू ही योग भोग विलासिनी, शिव पास हिमगिरि-नंदिनी।
तुरत दुःख निवारिणी, जगतारिणी अभिनन्दिनी॥
आदि माया ललित काया, प्रथम मधुकैटभ छले।
त्रिभुवन भाव उतारवे को, मान महिषासुर मले॥
इन्द्र चन्द्र कुबेर बन्धन, सुरन के आनन्द भये।
भुवन चौदह दशों दिशन के, सुनत ही सब दुःख गये॥
धूम्रलोचन भस्म कीन्हों, क्रोध की हुंकार से।
हनी है सेना सकल वाकी, सिंह की फुंफकार से॥
चण्ड मुण्ड प्रचण्ड दोनों, प्रबल थे अति भ्रष्ट थे।
मुण्ड उनके किये खण्डन, असुर मुण्डन दुष्ट थे॥
रक्तबीज असुर अधर्मी, कुकर्मी घनघोर के।
शोर कर लड़ने को धायो, अपना रणदल जोड़ के॥
श्री भवानी युद्ध ठानी, सकल शक्ति बुलाय के।
योगनिन को रक्त पियाओ, अन्तरिक्ष उठाय के॥
महामूढ़ निशुम्भ योद्धा, हनो है खड्ग बजाय के।
सुनत ही राजा शुम्भ धायो, सैन सकल सजाय के॥
परस्पर जब युद्ध मचो, दिवस से रजनी भई।
हास कारण असुर मारे, पुष्प धन बरसा भई॥
चितलाय यह चण्डी चरित्र, पढ़े जो प्रेम से सदा।
पुत्र मित्र कुलत्र सुख हो, दुःख न आये ढिंग कदा॥
भक्ति मुक्ति सुबुद्धि बहु, धन-धान्य सुख सम्पत्ति मिले।
शत्रु नाश प्रकाश चण्डी, आनन्द मंगल नित करे॥

गुरु गोविंद सिंह विरचित

चण्डी चरित्र

सवैया छन्द

क्रुद्धकै युद्ध किये बहु चण्डी ने एतो किये मधु सो अविनाशी।
दैत्यन के वध कारण को निज भाल के ज्वाल की लाट निकासी॥
कालि प्रत्यक्ष भाई तिह ते रण फैलि रही भय वीर प्रभा सी।
मानहु श्रृंग सुमेरु को फोरिकै धार परी धर पै यमुना सी॥

मेरू हल्यो दहल्यो सुरलोक दशोदिशि भूधर भाजत भारी।
चाल परय्यो तब चौदह लोक में ब्रह्म भयो मन में भ्रम भारी॥
ध्यान रह्यो न जटी सु फटी धर यौं वलकैरण में किलकारी।
दैत्यन के वध कारण को कर काल सी काली कृपान संभारी॥

दोहा

चंडी काली दुहूं मिलि कीनो इहै विचार।
हौं हनहों तूं श्रोण पी, अरदल डारहिं मार॥

सवैया छन्द

काली औ केहरि संग लै चंडि सु घेरे सभै वन जेसि दवा पै।
चंडि के वानन तेज प्रभाव ते दैत्य जरे जिमि ईंट अबा पै॥
कालिका श्रोण पियो तिनको कवि ने मन में लियो भाव भवा पै।
मानहु सिन्धुकु नीर सभै मिलि धायकि जाय पर्‌यो है तवा पै॥
चंडि हने अरु कालिका कोपिकै शोणितबिन्दुन सों यह कीनो।
खग्ग संभार हकार तबै किलकार विदार सभै दल दीनो॥
आमिष शोण अचा बहु कालिका ता छवि को कवि यों मन चीनों।
मानु क्षुधातुर होय मनुष्य सु सालन लासहि सो बहु पीनो॥
युद्ध सु शोणित बीज कियो धरणी पर यों सुर देवता सारे।
जेतक शोण कि बून्द गिरें उठि तेतक रूप अनेकहिं धारे॥
योगिन आय फिरी चहुं ओर ते शीश जटा कर खप्पर भारे।
शोणित बून्द परे अचवै सभ खड्ग ले चंडि प्रचंड संहारे॥
कालिरु चंड कुवंड सभारकै दैत्य सो युद्ध निशंक सजा है।
मार महा रण मध्य भई पहरेक लौ सार सों सार बजा है॥
शोणित बिन्दु गिरा धरणी पर यौं असि सों अरि शीश मजा है।
मानु अतीत कियो चित्त को धनवन्त सभै निज माल तजा है॥

सोरठा

चण्डि दियो विडार, शोण पान काली कियो।
क्षण मंह डारय्यो मार, शोणबिन्दु दानव महा॥

इस अध्याय में संकलित पहले चण्डी चरित्र में मातेश्वरी के दुर्गा और काली स्वरूपों की भव्य झांकी तथा कृत्यों का वर्णन है। गुरु गोविन्द सिंह द्वारा रचित चण्डी चरित्र से केवल उस भाग का संकलन किया गया है जो मातेश्वरी काली के अवतरण, रक्तबीज तथा अन्य असुरों के हनन में उनकी भूमिका से सम्बन्धित है। लेकिन ये समान नाम होते हुए भी एक-दूसरे के पूरक नहीं है। आप इन दोनों का ही नियमित पाठ कीजिए। मातेश्वरी के चरणों में हृदय रूपी भ्रमर को बसाने और भक्ति-भाववर्द्धन में तन्मयतापूर्वक किया गया इनका नियमित पाठ आपके साधक जीवन में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

❑❑

6

ध्यान के मंत्र एवं स्तवन

मानसिक उपासना बिना किसी बाह्य उपादान के एकाग्र मन से की जाने वाली लम्बी चरणबद्ध प्रक्रिया है, जिसमें एक से डेढ़ घण्टे तक का समय लगता ही है। बाद में घण्टों तक सहस्रनाम और विभिन्न स्तोत्रों का मन ही मन स्तवन तथा मातेश्वरी काली के किसी मन्त्र का जप भी किया जाता है। नयन बन्द करके पूर्ण एकाग्र भाव से ये सभी कार्य किए जाते हैं। इसके लिए मन्त्रों का कण्ठस्थ याद होना आवश्यक है ही, विविध वस्तुओं के समर्पण के भावों का एक चलचित्र की भांति मन-मस्तिष्क में चलते रहना भी अनिवार्य है। चन्द मास तक मन्त्रों के स्तवन के साथ भगवती काली की षोडशोपचार आराधना और उसके पश्चात् उपासना के समान ही सहस्रनाम आदि का मन में पाठ कीजिए। पहले दिन तो हम यह षोडशोपचार आराधना भी पूरे विधान के साथ तन्मयतापूर्वक नहीं कर पाते। लेकिन कुछ मास तक मन्त्रों के स्तवन के साथ दशोपचार पूजा करने के बाद हम षोडशोपचार आराधना के क्षेत्र में कदम बढ़ाने में सक्षम हो जाते हैं।

दशोपचार पूजा के सभी मन्त्र और समर्पित की जाने वाली वस्तुओं का विवेचन 'आराधना-उपासना का उत्तरार्द्ध' नामक पंद्रहवें अध्याय में किया गया है। आप उस विधि-विधान से यह दशोपचार पूजा तो करें ही, प्रारम्भ में भगवती काली का ध्यान और अन्त में स्तवन तथा उनके किसी मन्त्र की कम से कम एक माला का जप अवश्य कीजिए। समय के साथ-साथ इस जप की संख्या बढ़ाते जाइए। आगामी अध्यायों में संकलित विभिन्न स्तोत्रों का स्तवन भी इसमें बढ़ाते जाइए। मानसिक उपासना के विश्वविद्यालय में प्रवेश के लिए आपको दशोपचार पूजा और षोडशोपचार आराधना की महत्वपूर्ण परीक्षाएं तो पास करनी ही होंगी। प्रारम्भिक अवस्था के लिए मातेश्वरी के ध्यान के तीन मन्त्र उनके अर्थ सहित दिए जा रहे हैं। ध्यान के ये मन्त्र पढ़ते समय इनके अर्थ और व्याख्या का चिन्तन भी आप करते रहिए। इसी अध्याय में शुद्ध हिन्दी जैसे आसान संस्कृत में मातेश्वरी काली का एक स्तवन भी संकलित किया गया है। मातेश्वरी की दशोपचार पूजा के साथ ही उनकी

विधिवत आराधना, उपासना, मन्त्रों के विशिष्ट जप और तान्त्रिक साधनाएं करते समय भी आप इन दोनों का प्रयोग कर सकते हैं। समदर्शी और परम कृपालु हैं, दया की सागर मातेश्वरी काली। वह मन्त्रों और स्तोत्रों की लम्बाई अथवा भाषा की दुरूहता को नहीं बल्कि भक्त के भावों, श्रद्धा एवं तन्मयता को देखती हैं। अतः आप प्रथम दिवस से ही तन्मयतापूर्वक आराधना करने का विशेष प्रयास करें। पूजा-आराधना में लगने वाला समय और अन्य स्तोत्रों का समावेश समय के साथ-साथ स्वयं होता जाएगा।

संक्षिप्त-सुगम मंत्र

गलद्रक्त मुण्डावली कण्ठमाला, महाघोररावा सुदंष्ट्रा कराला।
विवस्त्रा श्मशानालया मुक्तकेशी, महाकाल कामाकुलाकालिकेयम्॥ 1॥

मातेश्वरी काली अपने कण्ठ में रक्त टपकते हुए मुण्डों की माला पहने हैं। वे अत्यन्त घोर शब्द कर रही हैं। उनकी सुन्दर दाढ़ें भयानक हैं। वे वस्त्रहीना हैं और श्मशान में निवास करती हैं। उनके केश बिखरे हुए हैं। काली देवी महाकाल के साथ काम-कलाओं में रत हैं।

भुजेवामयुग्मे शिरोसिं दधाना, वरं दक्षयुग्मेभयं वै तथैव।
सुमध्यापि तुंगस्तना भारनम्रा, लसद्रक्तक सृक्कद्वया सुस्मितास्या॥ 2॥

मां काली अपने दोनों बाएं हाथों में नरमुण्ड तथा खड्ग लिए हुए हैं। दोनों दाएं हाथों से वरदान प्रदायक अभयमुद्रा धारण किए हैं। वे सुन्दर कटि वाली हैं। वे उत्तंग स्तनों के भार से झुकी हुई, दो रक्त-मालाओं से सुशोभित तथा मधुर-मुस्कान से युक्त हैं।

शवद्वन्द्वकर्णावतंसा सुकेशी, लसत्प्रेतपाणिं प्रयुक्तैककांची।
शवाकारमञ्चाधिरूढा शिवाभिश्चतुर्दिक्षु शब्दायमानाभिरेजे॥ 3॥

मातेश्वरी काली के कानों में बालकों के शवरूपी आभूषण हैं। उनके केश सुन्दर हैं। वे शवों के हाथों से निर्मित करधनी धारण किए हुए हैं। शव रूपी मंच पर आरूढ़ मां काली के चारों ओर सियारिनियों की आवाजें गूंज रही हैं।

श्री कालिका स्तवन

अयि गिरि नन्दिनि नन्दित मेदिनि, विश्व विनोदिनि नन्दिनुते।
गिरिवर विन्ध्यशिरोधिनिवासिनि, विष्णु विसालिनि जिष्णुनुते॥
भगवति हे शितकण्ड कुटुम्बिनि, भूरि कुटुम्बिनि भूत कृते।
जय जय हे महिषासुर मर्दिनि, रम्य कपर्दिनि शैलसुते॥

अयि जगदम्ब कदम्ब वनप्रिय, वासिनि पासिनि वासरते।
शिखर शिरोमणि तुंग हिमालय, शृंग निजालय मध्यगते॥
मधुमधुरे मधुरमधुरे मधुकैटभ भञ्जनि रासरते।
जय जय हे महिषासुर मर्दिनि, रम्य कपर्दिनि शैलसुते॥
सुर वर वर्षिणि दुर्धर घर्षिणि, दुर्मुखमर्षिणि घोषरते।
दनुजन रोषिणि दुर्मुखशोषिणि, भवभयमोचनि सिन्धुसुते॥
त्रिभुवन पोषिणि शंकर तोषिणि, किल्विषमोचनि हर्षरते।
जय जय हे महिषासुर मर्दिनि, रम्य कपर्दिनि शैलसुते॥
अयि शतखण्ड विखण्डितरुण्ड, वितुण्डित शुण्ड गजाधिपते।
रिपुगजदंड विदारण खंड, पराक्रम चण्ड मठाधिपते॥
दनुजन रोषिणि दुर्मुखशोषिणि, भवभयमोचनि सिन्धुसुते।
जय जय हे महिषासुर मर्दिनि, रम्य कपर्दिनि शैलसुते॥
अयि सुमनः सुमनः सुमनः, सुमनः सुमनोरम कान्तियुते।
श्रुति रजनी रजनी रजनी, रजनी रजनीकर चारुयते॥
सुनयन विभ्रमर भ्रमर भ्रमर, भ्रमर विभ्रमर भ्रमराधिपते।
जय जय हे महिषासुर मर्दिनि, रम्य कपर्दिनि शैलसुते॥
सुरललना प्रतिथे वितथे, वितथेनियमोत्तर नृत्यरते।
धुधुकट धुंगड़ धुंगड़दायक, दानकुतूहल गान रते॥
धंकुट धुंकुट धिद्धि मितिध्वनि, धीर मृतंग निनादरते।
जय जय हे महिषासुर मर्दिनि, रम्य कपर्दिनि शैलसुते॥
जय जय जाप्यजये जयशब्द, परिस्तुति तत्पर विश्वनुते।
झिणि झिणि झिणि झिंकृत नूपुर, झिञ्झिते मोहित भूत रते॥
धुनटित नाटार्द्धनटी नट नायक, नायक नाटितनुपुरुते।
जय जय हे महिषासुर मर्दिनि, रम्य कपर्दिनि शैलसुते॥
महित महाहवमल्लिम तल्लिम, दल्लित वल्लज़ भल्लरते।
विचरित पल्लिक पुल्लिक मल्लिक, झिल्लिक मल्लिक वर्गयुते॥
कृत कृत कुल्ल समुल्लस तारण, तल्लिज वल्लव साललते।
जय जय हे महिषासुर मर्दिनि, रम्य कपर्दिनि शैलसुते॥
यामाता मधुकैटभ प्रमथिनी या महिषोन्मूलनी।
या धूम्रेक्षण चण्डमुण्ड मथिनी या रक्तबीजाशनी॥
शक्तिः शुम्भ निशुम्भ दलिनि या सिद्धि लक्ष्मी परा।
सा चण्डी नवकोटि शक्ति सहिता मां पातु विश्वेश्वरी॥

❑❑

7
भगवती काली के विशिष्ट मंत्र

परब्रह्म परमेश्वर के किसी भी स्वरूप, अवतार अथवा देवी-देवता की उपासना के अन्तिम चरण में उनके किसी मन्त्र की कम से कम एक माला का जप अवश्य किया जाता है। प्राय: उनके नाम के साथ 'ॐ' तथा 'नम:' लगाकर यह जप करने का विधान है। इस रूप में यह नाम ही उस देवता के मन्त्र का रूप ले लेता है। इसके साथ ही हनुमानजी, भगवान भैरवदेवजी, मातेश्वरी काली और भवानी दुर्गा के कुछ चेटक मन्त्र भी होते हैं। विशिष्ट कामनाओं की आपूर्ति के लिए इस प्रकार के मन्त्रों का उनकी निर्धारित संख्या में जप और उसके बाद उसका दशांश हवन किया जाता है। मातेश्वरी काली के ऐसे दर्जनों मन्त्र हैं। इसके साथ ही सबसे अधिक तान्त्रिक सिद्धियां मातेश्वरी काली या फिर भगवान भैरवदेवजी की ही की जाती हैं। तान्त्रिक सिद्धियों का तो मुख्य आधार ही यन्त्र को सम्मुख रखकर मन्त्रों का बहुत बड़ी संख्या में जप है। यन्त्र सिद्धि, मन्त्र जप और तान्त्रिक साधनाओं की पूर्ण जानकारी आप पुस्तक के अन्तिम अध्यायों में प्राप्त करेंगे, क्योंकि ये तीनों साधनाएं उपासना का भी आगामी चरण हैं।

जहां अन्य देवी-देवताओं के दो-चार और कुछ के एक दर्जन तक मन्त्र हैं, वहीं मातेश्वरी काली के सौ से भी अधिक विशिष्ट मन्त्र हैं। ऐसा होना स्वाभाविक ही है। जिस प्रकार मातेश्वरी काली के स्वरूप और शक्तियां सभी देवों से अधिक हैं, ठीक उसी प्रकार सबसे अधिक हैं मातेश्वरी काली के मन्त्र भी। इस अध्याय में मातेश्वरी काली के शीघ्र फलप्रदायक और प्रबल शक्तिशाली दो दर्जन से अधिक मन्त्रों तथा उनके विभिन्न रूपों के भी दो दर्जन मन्त्रों का संकलन किया गया है। मातेश्वरी काली के लगभग सभी मन्त्रों में *क्रीं, हूं, ह्रीं* और *स्वाहा* शब्दों का प्रयोग होता है। इनमें *'क्रीं'* का तो अत्यन्त विशिष्ट महत्व है। इसमें अक्षर 'क' जलस्वरूप और मोक्ष प्रदायक माना जाता है। 'क्र' में लगा आधा 'र' अग्नि का प्रतीक तथा सभी प्रकार के तेजों का प्रदायक है। 'ई' की मात्रा मातेश्वरी के तीनों कार्यों—सृष्टि की उत्पत्ति, पालन-धारण और लयकर्ता—की प्रतीक है जबकि 'मात्रा' के साथ

लगा हुआ 'बिन्दु' उनके ब्रह्म स्वरूप का द्योतक है।

इस प्रकार केवल 'क्रीं' शब्द ही मातेश्वरी के एक पूर्ण मन्त्र का रूप ले लेता है। 'हूं' का प्रयोग अधिकांश मन्त्रों में बीजाक्षर के रूप में होता है। इसे ज्ञान प्रदायक माना जाता है। 'ह्रीं' शब्द 'ई' की मात्रा के समान आद्याशक्ति के सृष्टि-रचयिता, धारणकर्ता और लयकर्ता रूपों का प्रतीक तथा ज्ञान का प्रदायक है। जहां तक मन्त्रों के अन्त में लगने वाले 'स्वाहा' शब्द का प्रश्न है, यह सभी मन्त्रों का मातृस्वरूप है तथा सभी पापों का नाशक माना जाता है। मन्त्रों में प्रयुक्त होने वाले अन्य अक्षरों के भावार्थ भी इसी प्रकार गूढ़ और रहस्यपूर्ण होते हैं। उन अक्षरों और उनसे प्राप्त ध्वनि का यह रहस्य ही इन मन्त्रों की शक्ति का आधार है।

एकाक्षर मन्त्र : **क्रीं**

यह काली का एकाक्षर मन्त्र है, परन्तु इतना शक्तिशाली है कि शास्त्रों में इसे महामन्त्र की संक्षा दी गई है। इसे मातेश्वरी काली का 'प्रणव' कहा जाता है और इसका जप उनके सभी रूपों की आराधना, उपासना और साधना में किया जा सकता है। वैसे इसे चिन्तामणि काली का विशेष मन्त्र भी कहा जाता है।

द्विअक्षर मन्त्र : **क्रीं क्रीं**

इस मन्त्र का भी स्वतन्त्र रूप से जप किया जाता है। लेकिन तान्त्रिक साधनाएं और मन्त्र सिद्धि हेतु बड़ी संख्या में किसी भी मन्त्र का जप करने के पहले और बाद में सात-सात बार इन दोनों बीजाक्षरों के जप का विशिष्ट विधान है।

त्रिअक्षर मन्त्र : **क्रीं क्रीं क्रीं**

यह काली की तान्त्रिक साधनाओं और उनके प्रचण्ड रूपों की आराधनाओं का विशिष्ट मन्त्र है। द्विअक्षर मन्त्र के समान ही इन दोनों में से किसी एक को मन्त्र सिद्धि अथवा मन्त्रों का बड़ी संख्या में जप करते समय अनेक तन्त्र-साधक प्रारम्भ और अन्त में सात-सात बार इसका स्तवन करते हैं।

सर्वश्रेष्ठ मन्त्र : **क्रीं स्वाहा**

महामन्त्र 'क्रीं' में 'स्वाहा' से संयुक्त यह मन्त्र उपासना अथवा आराधना के अन्त में जपने के लिए सर्वश्रेष्ठ माना जाता है।

ज्ञान प्रदाता मन्त्र : **ह्रीं**

यह भी एकाक्षर मन्त्र है। मातेश्वरी काली की आराधना अथवा उपासना करने के पश्चात् इस मन्त्र के नियमित जप से साधक को सम्पूर्ण शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त हो जाता है। इसे विशेष रूप से दक्षिण काली का मन्त्र कहा जाता है।

चेटक मंत्र

उपरोक्त सभी मन्त्रों का जप विशेष प्रयोजनों के लिए विशिष्ट संख्या में किया जा सकता है। वैसे सभी कामनाओं की पूर्ति, हर प्रकार के कष्टों के निवारण और

मातेश्वरी की विशेष कृपाओं के लिए इन चेटक मन्त्रों को उनके साथ वर्णित संख्या में जपा जाता है। छह से इक्कीस अक्षरों तक के ये मन्त्र निम्नवत हैं—

क्रीं क्रीं क्रीं स्वाहा।

पांच अक्षर के इस मन्त्र के प्रणेता स्वयं जगद्पिता ब्रह्माजी हैं। यह सभी दु:खों का निवारण करके धन्य-धान्य बढ़ाता है।

क्रीं क्रीं फट् स्वाहा।

छह अक्षरों का यह मन्त्र तीनों लोकों को मोहित करने वाला है। सम्मोहन आदि तान्त्रिक सिद्धियों के लिए इस मन्त्र का विशेष रूप से जप किया जाता है।

क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं क्रीं स्वाहा।

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—जीवन के चारों ध्येयों की आपूर्ति करने में समर्थ है आठ अक्षरों का यह मन्त्र। उपासना के अन्त में इस मन्त्र का जप करने पर सभी मनोकामनाएं पूर्ण हो जाती हैं।

ऐं नमः क्रीं क्रीं कालिकायै स्वाहा।

ग्यारह अक्षरों का यह मन्त्र अत्यन्त दुर्लभ और सर्वसिद्धियों को प्रदान करने वाला है। उपरोक्त पांच, छह, आठ और ग्यारह अक्षरों के इन मन्त्रों को दो लाख की संख्या में जपने का विधान है। तभी यह मंत्र सिद्ध होता है।

क्रीं हूं हूं ह्रीं हूं हूं क्रीं स्वाहा।

क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

नमः ऐं क्रीं क्रीं कालिकायै स्वाहा।

नमः आं आं क्रों क्रों फट् स्वाहा कालिका हूं।

क्रीं क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं हूं हूं क्रीं क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं हूं हूं स्वाहा।

मातेश्वरी कालिका के ये पांच मन्त्र समान रूप से प्रभावशाली हैं। इनमें से प्रत्येक को एक लाख की संख्या में जपकर सिद्ध करने का विधान है।

विशिष्ट तांत्रिक मंत्र

चेटक मन्त्रों का जप सामान्यत: किसी आकांक्षा की पूर्ति अथवा उद्देश्य की प्राप्ति के लिए किया जाता है, जबकि तान्त्रिक साधनाएं प्राय: मातेश्वरी की विशेष कृपाएं और विशिष्ट शक्तियां प्राप्त करने के लिए की जाती हैं। यही कारण है कि तान्त्रिक साधनाओं में नीचे दिए गए मन्त्रों का जप ही प्रमुख रूप से किया जाता है। वैसे चेटक मन्त्रों और इन तान्त्रिक मन्त्रों के मध्य विभाजन की कोई स्पष्ट सीमा रेखा नहीं है। चेटक मन्त्रों का उपयोग भी अनेक साधक तान्त्रिक साधनाओं के समय करते हैं। ठीक इसी प्रकार कुछ उपासक उपासना के अन्तिम चरण में भी इनमें से किसी मन्त्र की एक, पांच, ग्यारह अथवा इक्कीस मालाएं नियमित रूप से जपते हैं। वैसे यह विभाजन यद्यपि पूर्णतया शास्त्र सम्मत है, परन्तु ये भी हैं मातेश्वरी काली के ही मन्त्र। अत: आप किसी का भी जप सभी रूपों में कर सकते हैं। कुछ तान्त्रिक मन्त्र निम्नवत हैं—

ॐ ह्रीं क्रीं में स्वाहा।
क्रीं हुं ह्रीं।
क्रीं क्रीं क्रीं स्वाहा।
क्रीं क्रीं क्रीं फट् स्वाहा।
ऐं नमः क्रीं क्रीं कालिकायै स्वाहा।
क्रीं ह्रीं ह्रीं कालिका स्वाहा।
क्रीं हुं ह्रीं कालिके फट्।
क्रीं हूं ह्रीं स्वाहा।
क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

इनमें से नीचे के दो मन्त्रों के प्रणेता स्वयं भगवान शिव हैं। इन सभी मन्त्रों को सवा लाख की संख्या में जप करके सिद्ध किया जाता है।

सर्वाधिक शक्तिशाली मंत्र

चौदह से तेइस अक्षर तक के इन तीन मन्त्रों को सभी साधक सर्वाधिक शक्तिशाली और तुरन्त फलदायक मानते हैं। जहां विशिष्ट प्रयोजनों की आपूर्ति के लिए चेटक मन्त्रों के रूप में और काली सिद्धि करते समय तन्त्र साधना में इनको बड़ी संख्या में जप कर सिद्ध किया जाता है, वहीं अधिकांश उपासक उपासना के अन्तिम चरण में निम्न मन्त्रों में से किसी भी एक की एक या अधिक मालाएं भी जपते हैं—

क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

आराधना-उपासना के अन्त में उक्त चतुर्दशाक्षर महामन्त्र का जप करने से इस लोक में सभी सुख और अन्त में मोक्ष की प्राप्ति होती है। सिद्ध करने के लिए इस मंत्र को एक लाख जपने का विधान है।

क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

यह षोडशाक्षर मन्त्र कल्पवृक्ष की भांति है। जिस कामना से इस मन्त्र का जप किया जाता है, वह अभिलाषा अवश्य पूर्ण होती है।

ॐ ह्रीं ह्रीं हूं हूं क्रीं क्रीं क्रीं दक्षिण कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं।

यह इक्कीस अक्षरों का मन्त्र है। एक लाख संख्या में जप के बाद दशांश हवन करने पर यह मन्त्र सिद्ध हो जाता है। हवन करते समय सभी मन्त्रों के समान इसके साथ स्वाहा जोड़ा जाता है। मन्त्र जपते समय भी अन्त में स्वाहा जोड़कर जप करने से तेइस अक्षर का बन जाता है यह मन्त्र। इसी प्रकार प्रारम्भ का प्रणव ॐ हटाकर और अन्त में स्वाहा जोड़कर इसे बाईस अक्षर के मन्त्र के रूप में भी जप कर सिद्ध किया जा सकता है। यही नहीं, प्रणव ॐ और अन्त में स्वाहा हटा देने पर बीस अक्षर के मन्त्र के रूप में भी अनेक तन्त्र साधक इसे सिद्ध करते हैं। इस मन्त्र की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसके ये चारों रूप शास्त्र सम्मत और पूर्ण शुद्ध हैं। आप किसी भी रूप में इनका जप कर सकते हैं।

चामुण्डा कालिका के विशिष्ट मंत्र

मातेश्वरी काली को चामुण्डा नाम स्वयं भगवती दुर्गाजी ने दिया था। माता के चण्ड-मुण्ड विनाशिनी स्वरूप का यह एक अत्यन्त शक्तिशाली तीन अक्षरों का मन्त्र है—

क्लीं क्लीं हूं।

ॐ ह्रीं क्रीं में स्वाहा।

पांच अक्षरों के दूसरे मन्त्र के रचयिता भगवान भैरवदेवजी को माना जाता है। *चामुण्डा तन्त्र* नामक ग्रन्थ में इन दोनों मन्त्रों को काली के चामुण्डा स्वरूप का विशिष्ट तान्त्रिक मन्त्र कहा गया है।

दक्षिण कालिका के विशिष्ट मंत्र

मातेश्वरी काली का तुरन्त फलप्रदायक और भक्तों को अकाल मृत्यु के भय से बचाने वाला स्वरूप है दक्षिण कालिका। सामान्य साधक मातेश्वरी के इस सौम्य और भक्त-वत्सल रूप की ही प्राय: अधिक आराधना-उपासना करते हैं। वैसे मां काली के सामान्य स्वरूप की उपासना और मन्त्रों के जप में भी इन मन्त्रों का जप सफलतापूर्वक किया जा सकता है—

क्रीं दक्षिणे कालिका स्वाहा।

क्रीं हूं ह्रीं दक्षिण कालिके फट्।

क्रीं क्रीं क्रीं ह्रीं दक्षिण कालिके स्वाहा।

क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं दक्षिण कालिके क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

महाकाली के विशिष्ट मंत्र

मातेश्वरी काली का एक नाम महाकाली भी है। मातेश्वरी के रौद्र स्वरूप के इन मन्त्रों का प्रयोग तान्त्रिक साधनाओं में बहुत अधिक होता है। इनमें से पहला तीन अक्षरों का मन्त्र तो महाकाल अर्थात् स्वयं भगवान शंकर द्वारा रचित है, जबकि अन्य मन्त्रों की शक्ति भी कुछ कम नहीं है—

क्रीं ह्रीं ह्रीं।

क्रीं क्रीं क्रीं स्वाहा।

क्रीं क्रीं क्रीं फट् स्वाहा।

फ्रें फ्रें क्रों क्रों पशून गृहाण हुं फट् स्वाहा।

ऐं नमः क्रीं ऐं नमः क्रीं कालिकाये स्वाहा।

क्रीं क्रीं क्रीं हूं ह्रीं क्रीं क्रीं क्रीं हूं ह्रीं स्वाहा।

क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं महाकाली क्रीं क्रीं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं महाकाली क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

भद्रकाली के विशिष्ट मंत्र

भद्र काली के तीन मंत्र नीचे दिए जा रहे हैं। यह मंत्र भी सर्वकामना की पूर्ति और कष्टों को हरने वाला है—

क्रीं हुं ह्रीं भद्रकाल्यै फट्।

क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं भद्रकाल्यै क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

ॐ ह्रीं ह्रीं हुं हुं क्रीं क्रीं क्रीं भद्रकालिका क्रीं क्रीं क्रीं हुं हुं ह्रीं ह्रीं।

गुह्य काली के विशिष्ट मंत्र

मातेश्वरी काली का अत्यन्त सौम्य और शीघ्र प्रसन्न होने वाला स्वरूप है गुह्य काली। महापापों को नष्ट करने, समस्त सिद्धियों का प्रदाता और मोक्ष प्रदायक माना जाता है गुह्य काली के इन विशिष्ट मन्त्रों को—

क्रीं गुह्ये कालिके क्रीं स्वाहा।

हूं ह्रीं गुह्ये कालिके क्रीं क्रीं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं गुह्ये कालिके क्रीं क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं स्वाहा।

मातेश्वरी काली के दक्षिण काली या दक्षिण कालिका व गुह्य काली अधिक सौम्य तथा शीघ्र प्रसन्न होने वाले रूप हैं जबकि महाकाली और चामुण्डा थोड़े उग्र एवं अधिक शक्तिशाली स्वरूप हैं। मां काली भक्तों और सन्त स्वभाव वाले श्रद्धालुओं के लिए अपने सभी रूपों में परम उदार तथा शीघ्र प्रसन्न होकर उनकी मनोकामनाएं पूर्ण करने वाली ममतामयी मातेश्वरी हैं। यही कारण है कि अधिकांश आराधक-उपासक इन विविध रूपों में कोई अन्तर नहीं मानते। वे मातेश्वरी की सामान्य रूप से काली माई कहकर ही आराधना-उपासना करते हैं।

यहां मातेश्वरी काली के विभिन्न रूपों के जो मन्त्र संग्रहीत हैं, उनका जप उस विशेष स्वरूप की आराधना-उपासना और तन्त्र साधना में तो किया ही जाता है, सामान्य रूप से उपासना करते समय भी आप अन्त में किसी मन्त्र का जप करें। आपको समान फलों की प्राप्ति होगी। किसी विशिष्ट प्रयोजन के लिए निश्चित संख्या में मन्त्र विशेष के जप, मन्त्र सिद्धि और यन्त्र सम्मुख रखकर मन्त्रों के जप तथा विभिन्न तान्त्रिक साधनाओं में इन सभी के अलग-अलग विधान एवं विधियां हैं। ये विधियां पर्याप्त जटिल और विस्तृत हैं, अतः उनका अध्ययन हम पुस्तक के अन्तिम तीन अध्यायों में करेंगे। परन्तु इनमें से किसी भी एक मन्त्र का जप आप आज से ही प्रारम्भ कर दीजिए, मातेश्वरी की विशेष कृपाएं आपको अवश्य प्राप्त होंगी। मानसिक उपासना का अभ्यास और मन की एकाग्रता बढ़ाने का एकमात्र मार्ग मन्त्रों का नियमित जप एवं स्तोत्रों का मन ही मन स्तवन भी है।

❑❑

8

आराधना के स्वरूप

सबसे प्राचीन, सर्वश्रेष्ठ और सर्वगुण होने के साथ ही बहुआयामी भी है हमारा हिन्दू धर्म। अन्य सभी धर्मों के संस्थापक कोई एक मसीहा, पैगम्बर, महान सन्त अथवा तपस्वी चिंतक ही हैं। प्रत्येक धर्म का आधार कोई एक धार्मिक पुस्तक है ही, उनमें पूजा-आराधना की भी कोई एक निश्चित पद्धति है। परन्तु हमारा धर्म तो स्वयं ईश्वर द्वारा निर्मित है, वेदों की रचना स्वयं भगवान ने की है। यही नहीं, वेदों के साथ ही उपनिषदों, पुराणों, मीमान्साओं और भाष्यों के रूप में अन्य सैकड़ों धर्मग्रन्थ भी हमारे यहां हैं जो समान रूप से सत्य, सनातन एवं महत्वपूर्ण हैं। जिस प्रकार हमारे धर्म में तैंतीस कोटि देवता, ईश्वर के अनेक अवतार और सैकड़ों धर्मग्रन्थ हैं, ठीक उसी प्रकार आराधना-उपासना के भी एक दर्जन से अधिक मार्ग हैं। संसार में ईश-आराधना की जितनी भी पद्धतियां हैं, वे सभी हमारे धर्म में प्रचलित हैं। अत: यह कहा जा सकता है कि जिस प्रकार परमपिता परमात्मा ने वेदों में संसार का सम्पूर्ण ज्ञान समाहित किया है, ठीक उसी प्रकार अपने तक पहुंचने के सभी मार्ग भी हमको बतला दिए हैं।

निराकार ब्रह्म के चिन्तन से लेकर आराध्यदेव की मूर्ति की पूजा करने तक, कायाकष्ट पर आधारित वर्षों की कठोर तपस्या से लेकर भरपूर धन द्वारा किए जाने वाले यज्ञों तक, दान-पुण्य और तीर्थ स्थानों की यात्रा से लेकर व्रतों-उपवासों तक ईश-आराधना के अनेक मार्ग हमारे धर्म में हैं। इनके साथ ही भजन-कीर्तन, सत्संग, धर्मग्रन्थों का अध्ययन-मनन, साधु-सन्तों की सेवा आदि अनेक उपाय भी धार्मिक कृत्यों के अन्तर्गत आते हैं। यन्त्रसिद्धि, मन्त्रों का जप, तान्त्रिक साधनाएं तथा मूर्ति-पूजा तो हमारे धर्म की वे विशेषताएं हैं, जिनके बारे में अन्य धर्मों को मानने वाले कुछ जानते तक नहीं। ईश-आराधना के इन विभिन्न मार्गों में कुछ एक-दूसरे के सहायक और पूरक हैं, तो कुछ मार्ग किसी अन्य मार्ग का आगामी चरण व विकसित रूप। यही नहीं, कुछ मार्ग तो एक-दूसरे के विरोधी तक हैं। यद्यपि वे आराध्यदेव तक पहुंचने के मार्ग हैं परन्तु उन दोनों के रास्ते बिल्कुल

अलग-अलग हैं। यदि हम निराकार ब्रह्म के चिन्तन और अनेक देवों की आराधना अथवा मूर्तिपूजा के साथ तन्त्र साधना जैसे दो विरोधी कार्य एक साथ करें तो सफल हो ही नहीं सकते, दिग्भ्रमित होकर भटक भी जाएंगे। इसी प्रकार यदि हम मूर्तिपूजा जैसे एक ही मार्ग पर अटके रहें तो जीवनभर पूजा-पाठ करने के पश्चात् भी वहीं रह जाएंगे, जहां से चले थे। इनमें से किस मार्ग का चयन किया जाए और किस प्रकार उस पर धीरे-धीरे आगे बढ़ा जाए, इसके निर्धारण के लिए आवश्यक है कि इन सभी मार्गों का हमें शास्त्रसम्मत और तथ्यपरक ज्ञान हो। अत: मातेश्वरी काली की आराधना-उपासना का विधान समझने से पहले इस विषय पर कुछ विचार-विमर्श करना उचित रहेगा।

सामूहिक एवं विशिष्ट पूजा

बंगाल और पूर्वी भारत के अन्य राज्यों में काली पूजा तथा शेष भारत में दुर्गा पूजा के रूप में प्रतिवर्ष बड़े पैमाने पर मातेश्वरी की सामूहिक पूजा एवं मूर्ति विसर्जन होता है। वर्ष के सभी महीनों में समय-समय पर विशाल पण्डालों में माता की भव्य झांकियां सजाकर जागरण के आयोजन भी लगभग प्रत्येक स्थान पर होते रहते हैं। इन आयोजनों में भक्ति-भावना का प्रदर्शन और उत्सव का माहौल हावी रहता है। सामूहिक पूजा के ये आयोजन और पूरी रात होने वाले भगवती जागरण अत्यन्त भव्य होते हुए भी आराधना-उपासना के पर्याय नहीं है। श्रोताओं का मन मातेश्वरी के चरणों में रमने और ध्यान माता के गुणानुवाद सुनने में कम, इधर-उधर भटकने में अधिक लगा रहता है। फिर भी इनकी उपयोगिता तो है ही, क्योंकि उतने समय तक माता का नाम कानों में पड़ता रहता है। नयनों के सामने रहती है उनकी विशाल-अद्भुत झांकी। धर्मग्रन्थों का कथन है कि जो व्यक्ति एक बार भूल से भी सच्चे मन से माता को पुकार लेता है, मातेश्वरी उसके सभी पाप हरकर उसका उद्धार कर देती हैं। यह अनुभवसिद्ध सच्चाई है कि जब तक हम इस प्रकार के आयोजनों में उपस्थित रहते हैं, कम से कम उतने समय तक अनेक बुरे कार्यों और पापों से बचे रहते हैं। सबसे बड़ी बात तो यह है कि इस प्रकार के आयोजनों में मातेश्वरी से सम्बन्धित अनेक नए-नए भजन, भेंटें और कथाएं हमें सुनने को मिलती हैं तथा अन्य भगवती प्रेमी सज्जनों से परिचय भी बढ़ता है। अत: आराधना अथवा उपासना हेतु शान्त वातावरण न होने के बावजूद ऐसे आयोजन मातेश्वरी के चरणों में प्रीति बढ़ाने में सहायता प्रदान करते हैं।

नवरात्रों की पूजाएं

मातेश्वरी काली और भगवती भवानी दुर्गा की सामूहिक पूजा के आयोजन तो वर्ष में एक बार ही होते हैं, वर्ष में दो बार नौ-नौ दिन तक प्रत्येक परिवार में मातेश्वरी की विशेष पूजाएं भी की जाती हैं। नवरात्र नामक इन नौ दिनों में देवी के

मन्दिरों में भक्तों की अपार भीड़ तो होती ही है, प्रत्येक सद्गृहस्थ पूरे परिवार के साथ अपने घर में भी देवी की पूजा-आराधना पूर्ण भक्तिभाव से करता है। नवरात्र के नौ दिनों में मातेश्वरी के नौ प्रमुख स्वरूपों में से प्रतिदिन एक की पूजा की जाती है। परन्तु यह पृथक-पृथक नौ देवियों की पूजा नहीं, मातेश्वरी के नौ रूपों की पूजा है। अधिकांश परिवारों द्वारा नवरात्र में की जाने वाली इस पूजा में देवी की आराधना के विधि-विधानों का पालन पूरे भक्तिभाव से किया जाता है। पहले दिन कलश स्थापना करके पूजा का श्रीगणेश किया जाता है और अन्तिम दिन कन्या पूजन के साथ इसकी इतिश्री। मातेश्वरी के निमित्त प्रतिदिन हवन तो किया ही जाता है, अधिकांश व्यक्ति व्रत भी रखते हैं। मांसाहारी व्यक्ति भी इन नौ दिनों में मांस, अण्डे, मदिरा तो क्या प्याज और लहसुन तक का सेवन नहीं करते। हम देवी के आराधक-उपासक हैं, अतः नवरात्रों के समान की जाने वाली पूजा-आराधना प्रतिदिन करेंगे। नवरात्रों का सबसे बड़ा सन्देश हम मातेश्वरी-प्रेमी बच्चों के लिए यही है कि हम अपने प्रतिदिन के खान-पान, आचार-विचार और व्यवहार में वही सुचिता एवं पवित्रता लाने की सतत् चेष्टा करते रहें जो नवरात्रों में निभाई जाती है।

अध्ययन-मनन, सत्संग व भेंटों का गायन

मनुष्य जैसी सोहबत में बैठता है, वैसा ही बन जाता है। पढ़ी जाने वाली पुस्तकों तथा देखे जाने वाले दृश्यों का प्रभाव भी उसके मन-मस्तिष्क पर अवश्य ही पड़ता है। धार्मिक पुस्तकों व मातेश्वरी से सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन, साधु-सन्तों, ज्ञानियों और मां के भक्तों से साथ उनके स्वरूप-शक्तियों की चर्चा तथा उनके भजनों, भेंटों, आरतियों एवं चालीसों आदि के गायन हमारे हृदय में भक्ति की भावना बढ़ाने या दृढ़ करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। मन्दिरों में ऐसे सत्संग सुबह-शाम होते ही हैं। यही है मन्दिरों तथा सार्वजनिक पूजा स्थलों की सबसे बड़ी उपयोगिता। यह आवश्यक नहीं है कि हम मन्दिर में जाकर केवल मातेश्वरी काली की मूर्ति के ही दर्शन करें अथवा केवल भगवती काली के भक्तों के साथ ही धार्मिक चर्चाएं करें। मातेश्वरी के किसी भी रूप-स्वरूप, अवतार अथवा अन्य देवी-देवता की आराधना-उपासना करने वालों का सत्संग भी समान रूप से लाभकारी सिद्ध होता है। सभी देवी-देवता उस आदिशक्ति भगवती भवानी के ही अंश-रूप हैं, अतः ऊपर से पृथक-पृथक दृष्टिगोचर होने के बावजूद मूल रूप में सभी एक हैं।

भक्ति-भाववर्द्धन की सबसे सुगम और प्रभावशाली राह यह है कि धर्मग्रन्थों का अध्ययन-मनन और धार्मिक चर्चाएं आप जितनी अधिक कर सकें, अवश्य करें। धार्मिक ज्ञान की वृद्धि, भक्ति-भाववर्द्धन और सात्विक विचारों के उदय में ऐसी चर्चाएं एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। परन्तु अपने ज्ञान के प्रदर्शन अथवा

दूसरों के विचारों एवं आस्थाओं के खण्डन-मनन और विवाद के लिए धार्मिक चर्चाएं करना वास्तव में सत्संग नहीं बल्कि धर्म, ईश्वर, मातेश्वरी एवं मानवता का अपमान है, साथ ही नर्क का द्वार भी। इसी प्रकार धर्मग्रन्थों का अध्ययन-मनन भी पूर्ण श्रद्धा-भाव से ही करें। तर्क की कसौटी पर प्रत्येक बात को कसना श्रद्धा के स्थान पर शंका उत्पन्न करता है। आज विज्ञान की तरक्की ने जहां अनेक तनाव और बुराइयां दी हैं, वहीं कुछ विशिष्ट सुविधाएं भी प्रदान की हैं। आजकल टेप रिकॉर्डर प्रत्येक स्थान पर सर्वसुलभ हैं जिनमें मातेश्वरी दुर्गा और काली के भजनों, भेंटों आदि के कैसेट बजते रहते हैं। इन्हें घर में बजाना धार्मिक भावों के संचार का सबसे सशक्त माध्यम सिद्ध हो सकता है।

जप, तप, भजन और चिंतन

उपरोक्त सभी कार्य सामूहिक रूप से अथवा दूसरों के सहयोग से किए जाने वाले कार्य हैं, परन्तु ये चारों कार्य पूर्ण एकान्त में मन-ही-मन की जाने वाली क्रियाएं हैं। मातेश्वरी के रूप-स्वरूप, कृत्यों-शक्तियों, महिमाओं और भक्तों पर उनके उपकारों के बारे में श्रद्धा-भाव से सोचते-विचारते रहना भक्ति-भाववर्द्धन में सबसे अधिक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। वास्तव में यह सतत् चिन्तन भी उपासना का एक रूप है। इस प्रकार हम दिल की गहराई से माता के ख्यालों में डूबे रहते हैं और उन्हें अपने निकट अनुभव करते रहते हैं। परन्तु इसके लिए मन के भटकने पर नियन्त्रण की आत्मशक्ति के साथ ही पर्याप्त ज्ञान की भी आवश्यकता होती है। अत: प्रारम्भ में ही नहीं, लम्बे समय तक निरन्तर आराधना-उपासना करने के बाद ही व्यक्ति इस स्तर तक पहुंच पाता है। इसके विपरीत मातेश्वरी के किसी भी नाम या मन्त्र का जप अथवा भजन करना कीर्तन-गायन के उसी प्रकार आगामी कदम हैं, जिस प्रकार मन्दिर में देव-दर्शन का आगामी चरण घर में मातेश्वरी का चित्र अथवा मूर्ति स्थापित करके उसकी विधिवत आराधना करना है। यद्यपि मातेश्वरी की भेंटों, भजनों, पद्य रूप में कथाओं और आरतियों आदि के मन्द स्वर में स्तवन अथवा गायन को भी कुछ व्यक्ति भजन कहते हैं, परन्तु ये क्रियाएं भजन नहीं, बल्कि कीर्तन-गायन के अन्तर्गत आती हैं। कीर्तनों, भेंटों और भजनों का गायन सामूहिक रूप में और उच्च स्वरों में किया जाता है जबकि जप, भजन और तप एकांत में मन-ही-मन की जाने वाली क्रियाएं हैं।

वैदिक काल में तो सभी ऋषि-मुनि और तपस्वी तप अर्थात् तपस्या करते थे तथा इसके बल पर ही बड़ी-बड़ी सिद्धियां व भगवान के साक्षात् दर्शन तक करते थे। परन्तु भीषण कायाकष्ट पर आधारित कठिन मार्ग होने के कारण उस पर हमारा-आपका चल पाना सम्भव नहीं है। महीनों तथा वर्षों की कठोर तपस्या को तप कहा जाता है। इसका सूक्ष्म रूप है भजन और जप। इष्टदेव के किसी मन्त्र अथवा उनके

नाम का मन–ही–मन सतत् स्तवन जप कहलाता है। वैसे जब किसी मंत्र का हजारों की संख्या में प्रतिदिन जप किया जाता है अथवा इष्टदेव के नाम का मन–ही–मन एक स्थान पर बैठकर घण्टों तक स्मरण किया जाता है तो वह जप कहलाता है। थोड़े समय तक उपरोक्त विधि से मातेश्वरी के नाम के जप को भजन कहते हैं। हम मातेश्वरी की विधिवत पूजा, आराधना या उपासना करें अथवा कोई भी तान्त्रिक साधना, मातेश्वरी के नाम तथा उनके किसी मन्त्र का नियमित जप उसका अनिवार्य और सबसे महत्वपूर्ण भाग होता है।

भण्डारे, तीर्थाटन, दानपुण्य तथा यज्ञादि

बड़े-बड़े यज्ञ पहले सम्राट ही करते थे लेकिन आज चन्दा करके ये किए जाते हैं। इनका लघु रूप हवन है जो तान्त्रिक साधनाओं, मन्त्रों की सिद्धि और किसी प्रयोजन के लिए बड़ी संख्या में मन्त्रों का जप करते समय किया जाता है। नवरात्रों में प्राय: सभी व्यक्ति प्रतिदिन आहूतियां देकर हवन करते हैं। मातेश्वरी की पूजा–आराधना और तान्त्रिक साधनाओं में इस हवन का पूर्ण महत्व है, परन्तु उपासना करते समय इसे नहीं किया जाता। भण्डारों का आयोजन श्रद्धालुओं और गरीबों को भोजन कराने के उद्देश्य से ही प्राय: किया जाता है। यही उपयोगिता दान के रूप में दिए जाने वाले धन तथा वस्तुओं की है। तीर्थाटन और भगवती भवानी के शक्तिपीठों में जाकर दर्शन–पूजा करना प्राचीन काल से ही हमारे धर्म का आधार रहा है तथा आज भी लगभग प्रत्येक व्यक्ति की सबसे बड़ी कामना यही होती है। वैसे यह तीर्थाटन मुख्य रूप से भ्रमण और कुछ समय के लिए काम–धन्धे से अलग रहने का अच्छा साधन है, परन्तु वास्तव में आराधना अथवा उपासना का पर्याय नहीं है।

यद्यपि ये सभी कार्य जन–सामान्य और मातेश्वरी की भक्ति की प्रथम सीढ़ी पर खड़े पूजा–आराधना करने वालों की दृष्टि में अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं तथा वे इन्हें पूरे प्रदर्शन के साथ करते भी हैं। परन्तु मातेश्वरी के एक सच्चे आराधक और उपासक की दृष्टि में इनका रंचमात्र भी महत्व नहीं है। सिद्ध साधक और उपासक इन्हें प्रदर्शन से भरपूर लौकिक कर्म मात्र मानते हैं। सबसे बड़ी बात तो यह है कि नित्य हवन, यज्ञ और विभिन्न तीर्थों की यात्राओं के लिए भगवती जागरण के समान ही पर्याप्त धन चाहिए, जो प्रत्येक व्यक्ति के पास नहीं होता। मातेश्वरी की आराधना-उपासना करते हुए और सत्य एवं सदाचार के मूल नियमों पर चलते हुए, ईमानदारीपूर्वक स्वयं के श्रम से इतना धन तो अर्जित किया ही ज़ा सकता है कि व्यक्ति अपने परिवार का भरण–पोषण कर सके। परन्तु भगवती जागरण, तीर्थाटन, यज्ञ, हवन और दान आदि करने के लिए पर्याप्त धन कमाना तो लगभग असम्भव ही है। पापाचार, धोखाधड़ी, बेईमानी अथवा दूसरों का हक मारकर यदि हम विपुल धन

अर्जित कर भी लें, तो वह पापाचार ही हमारे सभी पुण्य फलों को समाप्त कर देगा। यही कारण है कि तपस्या और यज्ञ के समान ही इस कलिकाल में इन कार्यों को भी नियमित रूप से कर पाना सहज संभव नहीं है। वैसे साधन होने पर दान-पुण्य और भण्डारों का आराधक-उपासक के लिए कोई निषेध भी नहीं है। क्योंकि इस रूप में ये दीन-हीनों की सेवा और सहायता ही हैं। जरूरतमन्दों की सहायता, भूखों को भोजन खिलाना और सुपात्र को दान देना एक अच्छा कार्य ही नहीं, वास्तव में मातेश्वरी के पुत्र-पुत्रियों की सेवा है। परन्तु इन कार्यों को करते समय गर्व की भावना, वैभव के प्रदर्शन अथवा एहसान करने का भाव एक बड़ा पाप है।

काली बाड़ी में पूजा एवं प्रसाद चढ़ाना

सभी देव स्थानों को मन्दिर कहते हैं। परन्तु जिस प्रकार शिवजी के मन्दिरों को शिवालय कहा जाता है, ठीक उसी प्रकार काली मन्दिरों का विशिष्ट नाम काली बाड़ी है। मूर्तिपूजा के समान ही मन्दिरों में जाकर देवी-देवताओं के दर्शन करना और उन पर धूप-दीप-नैवेद्य चढ़ाना आदि हमारे धर्म की प्रमुख विशेषता है। यह मूर्तिपूजा हमारी आराधना और उपासना की सफलता में कितनी सहायक सिद्ध हो सकती है, इस पर मत भिन्नता तो हो सकती है, परन्तु फिर भी इनका बड़ा भारी महत्व है। यह सत्य है कि नित्य नियमपूर्वक मन्दिर में जाकर मातेश्वरी काली और अन्य देवों के दर्शन व पूजा आदि करना हमारी मंजिल नहीं है, परन्तु भक्ति के मार्ग की प्रथम सीढ़ी तो है ही। जिस प्रकार पढ़ने-लिखने के लिए वर्णमाला का ज्ञान आवश्यक है, ठीक उसी प्रकार पूजा-आराधना और उपासना के लिए जरूरी है कि हम में अपने उपास्यदेव के प्रति दृढ़ आस्था और विश्वास हो। उनके रूप-स्वरूप की झांकी हमारे मन-मन्दिर में अंकित रहे। यह एक ध्रुव सत्य है कि जो बालक प्रतिदिन मन्दिर जाते हैं, कालान्तर में वे बिना किसी प्रयास के ही परम आस्तिक और मातेश्वरी के भक्त बन जाते हैं।

मन्दिर में प्रतिदिन जाकर भगवती काली, महाकाली, दुर्गाजी एवं अन्य देवी-देवताओं के दर्शन करने से जहां उनके रूप-स्वरूप की एक झांकी हमारे हृदय में बस जाती है, वहीं धर्म के प्रति हमारी आस्था और समझ में भी स्वत: ही वृद्धि होती रहती है। मन्दिर में होने वाली आरतियां, भेंटों, भजनों एवं चालीसों का गायन तथा कथा-कीर्तन आदि अपने उपास्यदेव के प्रति हमारी प्रीति को दृढ़ तो करते ही हैं, हम कम-से-कम उतने समय तक बुरे कार्यों से भी बचे रहते हैं। यह सत्य है कि मन्दिर में जाकर मातेश्वरी के दर्शन करना, दीपक जलाना और प्रसाद चढ़ाना जैसे कार्य आराधना अथवा उपासना तो क्या सामान्य पूजा भी नहीं हैं। परन्तु धर्म के मार्ग में प्रवेश की प्रथम सीढ़ी और भक्ति-भाववर्द्धन का सबसे आसान मार्ग यह देवदर्शन और मन्दिर जाना है, इसमें भी कोई सन्देह नहीं।

पंचोपचार और दशोपचार आराधना

मातेश्वरी के शक्तिपीठों की तो बात ही क्या, अधिकांश मन्दिरों में भक्तों की लम्बी कतारें होती हैं और आप पुजारी को प्रसाद की थैली अथवा पूजा की थाली देकर प्रसाद वापस ले लेते हैं। वहां पूजा तो क्या, भक्त अच्छी तरह मातेश्वरी के दर्शन तक नहीं कर पाते। छोटे मन्दिरों में भी विधि-विधानपूर्वक पूजा करने का अवसर प्राय: भक्तों को नहीं मिल पाता। वैसे भी मन्दिर के कोलाहल से परिपूर्ण वातावरण में आप धूप-दीप जलाकर मातेश्वरी को प्रसाद तो चढ़ा सकते हैं, परन्तु एकाग्र मन से ध्यानमग्न होकर पूजा-आराधना करने का वातावरण नहीं पा सकते। यही कारण है कि जब मन पूजा-आराधना में जमने लग जाता है, तब अधिकांश भक्त घर पर ही मातेश्वरी की मूर्ति, उनका कोई चित्र अथवा पिण्डी रखकर पूजा-आराधना करने लगते हैं। अधिकांश भक्त ये कार्य आराधना के सबसे छोटे और सरल रूप पंचोपचार पूजा से प्रारम्भ करते हैं और कुछ वर्षों में मानसिक उपासना की मंजिल तक पहुंच जाते हैं।

पंचोपचार पूजा में साधक मातेश्वरी काली अथवा किसी भी अन्य आराध्यदेव की मूर्ति, चित्र या प्रतीक पिण्डी के चरणों में अथवा समीप ही भूमि पर चंद बूंदें जल चढ़ाने के बाद चन्दन अथवा सिन्दूर का तिलक लगाते हैं। इसके पश्चात् मातेश्वरी को पुष्प माला और पुष्प अर्पित किए जाते हैं तथा धूप-दीप जलाकर आरती उतारते हैं। आरती से पहले मातेश्वरी को नैवेद्य भी अर्पित किया जाता है। अन्त में आरती के बाद इस नैवेद्य को प्रसाद के रूप में बालकों एवं अन्य भक्तों में बांट दिया जाता है।

दशोपचार पूजा इसका आगामी चरण है। इस पूजा में पंचोपचार पूजा के उपरोक्त पांच कार्यों के पूर्व मातेश्वरी के चरण पखारने, उन्हें अर्घ्य समर्पित करने और आचमन हेतु जल प्रदान करने के कार्य भी किए जाते हैं। इसके साथ ही मातेश्वरी की मूर्ति अथवा चित्र को स्नान कराने के बाद वस्त्र अथवा वस्त्र के रूप में कलावे का टुकड़ा भी अर्पित किया जाता है। यहां मुख्य ध्यान रखने की बात यह है कि उपासना और पूर्ण आराधना में चरणबद्ध रूप में सोलह प्रक्रियाएं होती हैं। इनमें से जब हम दस क्रियाएं पूर्ण करते हैं तो वह दशोपचार पूजा कहलाती है। दशोपचार पूजा के स्तर तक पहुंच जाने पर भक्त वस्तुएं अर्पित करते समय उनसे सम्बन्धित मन्त्रों का स्तवन भी करते जाते हैं। इन प्रक्रियाओं में भी उन्हीं मंत्रों का स्तवन किया जाता है जिनका स्तवन षोडशोपचार आराधना और मानसिक उपासना करते समय होता है। आप इन मंत्रों को कंठस्थ करने के साथ ही उन्हें भाव सहित अच्छी तरह समझ लीजिए। फिर प्रत्येक वस्तु के समर्पण के समय मन-ही-मन अथवा अत्यन्त मंद स्वर में लयबद्ध रूप से संबंधित मन्त्र का स्तवन अवश्य कीजिए। दशोपचार पूजा के लिए वस्तुओं के अर्पण का क्रम इस प्रकार है—

1. पाद्य अर्थात् चरणों को पखारना, 2. अर्घ्य अर्थात् जल चढ़ाना, 3. आचमन, 4. स्नान कराना, 5. वस्त्र पहनाना, 6. चन्दन लगाकर चावल चढ़ाना, 7. पुष्प एवं पुष्पाहार अर्पण, 8. धूप एवं दीप जलाना, 9. नैवेद्य अर्पण या भोग लगाना तथा 10. आरती।

षोडशोपचार पूजा अर्थात् आराधना

मूर्तिपूजा की पराकाष्ठा और मानसिक उपासना का पूर्वाभ्यास है मन्त्रों का स्तवन करते हुए पूर्ण विधि-विधान के साथ की जाने वाली यह षोडशोपचार आराधना। इस षोडशोपचार आराधना में मातेश्वरी काली के आह्वान से लेकर प्रदक्षिणा तक सोलह वस्तुएं अर्पित की जाती हैं। इसके साथ ही मातेश्वरी के ध्यान से भी पहले कुछ अन्य कृत्य और गणेशजी का पूजन किया जाता है। यद्यपि पंचोपचार और दशोपचार पूजा के समान ही षोडशोपचार आराधना में मातेश्वरी काली की मूर्ति और सभी लौकिक उपादानों का उपयोग किया जाता है, परन्तु सीधे ही विग्रह की पूजा प्रारम्भ नहीं कर दी जाती। सभी धार्मिक कार्यों में अनिवार्य रूप से किए जाने वाले स्वस्तिवाचन, भूतशुद्धि, शान्तिपाठ और गणेशजी के ध्यान-पूजन के बाद मातेश्वरी काली का ध्यान किया जाता है। जब भावलोक में हम उन्हें अपने निकट महसूस करने लगते हैं, तभी स्तवन करते हैं आसन-समर्पण के मंत्र का। स्नान कराने और वस्त्र-समर्पण के पश्चात् उन्हें कुंकुम, कज्जल एवं आभूषण भी समर्पित किए जाते हैं। तिलक में चन्दन के साथ-साथ केशर कुंकुम आदि का प्रयोग भी होता है। मातेश्वरी को सिन्दूर और काजल के साथ ही श्रृंगार की विविध वस्तुएं भी आराधक अपनी भावना के अनुसार अर्पित करते हैं। धूप, दीप व नैवेद्य के बाद ताम्बूल और पुंगीफल अर्थात् पान-सुपारी के साथ दक्षिणा भी समर्पित की जाती है। धूप, दीप एवं आरती के बाद प्रदक्षिणा और क्षमा-याचना भी की जाती है। पूजा के अन्त में कुछ भक्त तो भगवती काली के चालीसे, भेंटों, भजनों, विनतियों और आरतियों आदि का गायन करते हैं, जबकि अधिकांश आराधक काली सहस्त्रनाम अथवा काली शतनाम का पाठ तथा उनके किसी मंत्र का जप करते हैं। आराधना के मुख्य भाग के सोलह संस्कारों का क्रम इस प्रकार है—

1. ध्यान एवं आह्वान, 2. आसन, 3. पाद्य, 4. अर्घ्य, 5. आचमन, 6. स्नान अर्थात् अभिषेक, 7. वस्त्र, 8. श्रृंगार की वस्तुएं एवं आभूषण, 9. गन्ध-चन्दन, केशर, कुंकुमादि व अक्षत, 10. पुष्प समर्पण, अंग पूजा एवं अर्चना, 11. धूप, 12. दीप, 13. नैवेद्य, 14. तांबूल, दक्षिणा, नीरांजन, जल-आरती आदि, 15. प्रदक्षिणा तथा 16. पुष्पांजलि, नमस्कार, स्तुति, राजोपचार, जप, क्षमापन, विशेषार्घ्य और समर्पण।

मानसिक उपासना

इस अध्याय के प्रारम्भ में वर्णित सभी कार्य जहां भक्ति-भाववर्द्धन के

माध्यम मात्र हैं, वहीं षोडशोपचार आराधना भी हमारी मंजिल नहीं, रास्ते का अन्तिम पड़ाव भर है। किसी भी भक्त के लिए अन्तिम लक्ष्य तो मातेश्वरी काली की मानसिक उपासना और उनकी सिद्धि ही है। लम्बे समय तक आराधना करते रहने के पश्चात् स्थिति यह हो जाती है कि भक्त को प्रत्येक वस्तु में और प्रत्येक स्थान पर मातेश्वरी काली का प्रभाव एवं अंश दृष्टिगोचर होने लगता है। इस अवस्था के आने पर हमारी पूजा-आराधना में सभी लौकिक वस्तुएं तो हट ही जाती हैं, आराधना-उपासना करते समय भगवती काली अथवा अपने किसी भी अन्य उपास्यदेव की मूर्ति, चित्र या प्रतीक तक की आवश्यकता नहीं रहती। उपासक मन में मातेश्वरी काली का चिन्तन करते हुए उनके ध्यान के मन्त्रों का स्तवन करता है। ध्यान के मन्त्रों का स्तवन करने के बाद उपासक देखता है कि मातेश्वरी काली उसकी सेवा-पूजा को स्वीकार करने के लिए उसके पास आ गईं हैं। भावलोक में वह मातेश्वरी काली को अपने सम्मुख विराजमान मानकर भावनात्मक रूप में ही सभी वस्तुएं अर्पित करता है। उपासना के अन्तिम चरण में उपासक भेंटों, भजनों, चालीसे और आरतियों के गायन के स्थान पर काली सहस्रनाम अथवा अन्य स्तोत्रों का पाठ करने के पश्चात् उनके नाम एवं किसी मन्त्र का जप भी करता है। धीरे-धीरे मन्त्रों के जप की यह संख्या बढ़ती जाती है। फिर अधिकांश उपासक काली-उपासना के साथ ही उनकी तान्त्रिक सिद्धियां भी करने लगते हैं।

तांत्रिक साधनाएं तथा काली सिद्धि

अपने उपास्यदेव के किसी मन्त्र का जप तो सभी उपासक करते हैं और प्रायः जीवनभर उपासना के एक भाग के रूप में मन्त्र-जप करते रहते हैं। अधिकांश देवी-देवताओं और अवतारों की उपासना व मन्त्रों के जप ही किए जाते हैं। परन्तु मातेश्वरी काली और भगवान भैरवदेवजी दो ऐसे देव हैं जिनकी तान्त्रिक साधना प्रायः ही की जाती है।

जिस प्रकार पूजा-आराधना का आगामी कदम मानसिक उपासना है, ठीक उसी प्रकार उपासना का आगामी चरण यन्त्र-मन्त्र की सिद्धि और तान्त्रिक साधना है। इस कलिकाल में मातेश्वरी काली की अर्चना और सभी सिद्धियों की प्राप्ति का रामबाण उपाय है जगदम्बा काली की तन्त्र साधना। यह हमारा दुर्भाग्य ही है कि जन-सामान्य ही नहीं, मातेश्वरी काली के आराधक तक तन्त्र सिद्धि तथा सभी प्रकार की तान्त्रिक साधनाओं को जादू-टोना समझते हैं और तान्त्रिकों को दूसरों को हानि पहुंचाने वाला एक असामान्य व्यक्ति। वास्तविकता इसके ठीक विपरीत है। मन्त्र जप का आगामी चरण है यन्त्र को सम्मुख रखकर बड़ी संख्या में किसी मन्त्र का जप करना, यही कार्य मन्त्र सिद्धि कहलाता है। जब यन्त्र की प्राण-प्रतिष्ठा करने के बाद उस पर नजरें जमाकर किसी मन्त्र का जप किया जाता है, तब यन्त्र-मन्त्र

की सम्मिलित शक्ति के कारण उसका प्रभाव कई गुना अधिक बढ़ जाता है। इस प्रक्रिया में यन्त्र के पूजन और उसकी प्राण-प्रतिष्ठा क्रिया को यन्त्र सिद्धि कहा जाता है तथा मन्त्रों के जप को मन्त्र सिद्धि। ये दोनों कार्य कुछ वर्षों तक उपासना करने के बाद अधिकांश उपासक करने लगते हैं।

तान्त्रिक साधनाएं और तन्त्र सिद्धि, जिसे कुछ भक्त काली सिद्धि भी कहते हैं, आराधना-उपासना की चरम सीमा है। जगदम्बा काली अथवा किसी भी अन्य देव की तान्त्रिक साधनाएं प्राण-प्रतिष्ठित यन्त्र, मातेश्वरी काली का विग्रह और सम्पूर्ण पूजन सामग्री का प्रयोग करके की जाती हैं। मातेश्वरी के विग्रह आपके लौकिक और आध्यात्मिक प्रतीक हैं। यन्त्र उनकी अलौकिक शक्तियों के जीवन्त रूप हैं, तो मन्त्रों में वे स्वयं निवास करती हैं। यही कारण है कि यन्त्र, मन्त्र, मूर्ति और सम्पूर्ण पूजन सामग्री के सम्मिलित प्रयोग से तन्त्र साधना देवाराधना की सबसे शक्तिशाली और तुरन्त फलप्रदायक विधि मानी गई है। कोई भी तन्त्र साधना करते समय केवल साधक पर ही नहीं, आसपास के वातावरण पर भी उसका प्रभाव अनिवार्य रूप से पड़ता है। परन्तु तन्त्र साधना की पूर्ण प्रक्रिया काफी जटिल और लम्बी है, अतः इसका पूर्ण विवेचन पुस्तक के अन्तिम तीन अध्यायों में दिया जा रहा है।

❑❑

9
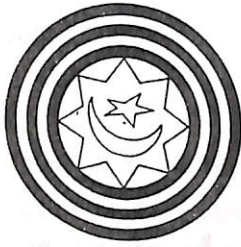
उपासना का विधान और महत्व

अनेक वर्षों तक मातेश्वरी की पूजा-आराधना करने के पश्चात् हम जगदम्बा काली अथवा किसी अन्य उपास्यदेव की मानसिक उपासना के क्षेत्र में कदम रखते हैं। मानसिक उपासना में किसी लौकिक वस्तु तो क्या, मातेश्वरी के किसी विग्रह, चित्र, पिण्डी अथवा अन्य प्रतीक तक का प्रयोग नहीं किया जाता। बचपन से ही मूर्तिपूजा के संस्कार मन-मस्तिष्क में जमे होने के कारण, उपासना के क्षेत्र में कदम रखते समय हमारे दिमाग में एक झिझक और हल्की-सी शंका भी हो सकती है। इसके साथ ही उपासना कैसे और कब की जाए, इसका पूर्ण विधि-विधान एवं महत्व क्या है, इस बारे में शास्त्रोक्त जानकारियां भी आवश्यक हैं।

अर्थ एवं अभिप्राय

उपासना अर्थात् अपने उपास्यदेव का भावलोक में सान्निध्य और भावनात्मक सेवा-पूजा आराधना की पूर्णतया सन्तुलित, तुरन्त फलदायक एवं प्राचीनतम पद्धति है। भाषा विज्ञान की दृष्टि से संस्कृत भाषा के तीन शब्दों उप+अस+नम के योग से 'उपासना' बना है। प्राचीन महर्षियों और विद्वानों ने इन शब्दों की व्याख्या करते हुए कहा है—''उपगम्य असनम्—इति उपासना'' अर्थात् समीप जाकर बैठने को 'उपासना' कहा जाता है। यहां समीप बैठना वैध इष्ट होने से यह शब्द परिचर्या व पूजा के अर्थ में परिवर्तित हो जाता है। यही कारण है कि वरिवस्या, शुश्रुषा, परिचर्या, आराधना, सेवा आदि शब्द उपासना के पर्यायवाची हैं तथा पूजा, भक्ति, तपस्या, अपचिति, सपर्या, अर्हणा, नमस्क्रिया, ध्यान और अनुष्ठान आदि शब्द इसके अत्यन्त निकटार्थक एवं सामान्य अन्तरंगार्थक हैं। उपास्ति, उपासा और उपासना आदि भी इसी के रूप हैं।

हमारे धर्मशास्त्रों में 'श्रीमद्भागवत्' को सभी पुराणों, स्मृतियों एवं उनके भाष्यों से अधिक महत्व प्राप्त है। धर्म की दुरूह राहों और गूढ़ रहस्यों को सरल भाषा में समझाना श्रीमद्भागवत् की प्रमुख विशेषता है। इस ग्रंथ में भी उपासना शब्द का अनेक स्थानों पर विशद वर्णन है और इसके आयामों को प्रकट करने वाले

अनेक अर्थ बताए गए हैं। परन्तु उन व्याख्याओं के शब्द अलग-अलग होने के बावजूद परस्पर विरोधी नहीं, एक दूसरे के पूरक हैं। एक स्थान पर कहा गया है कि पूजा भी उपासना ही है तो दूसरे स्थान पर लिखा है—सेवा भी उपासना है। ध्यान करना अर्थात् अपने आराध्य के चरण-कमलों में अपने मन रूपी भ्रमर को अवस्थित करना ही सच्ची उपासना है और प्रेमपूर्वक अपने इष्टदेव अथवा देवी के ध्यान-भजन में रम जाना उपासक का परम लक्ष्य। श्रीमद्भागवत् में इन सभी व्याख्याओं को अलग-अलग देने के साथ ही सार-रूप में एक स्थान पर कहा गया है—''उपासितो यत्पुरुषः पुराण'' अर्थात् पूर्ण भक्ति भाव से अपने इष्ट की सेवा और ध्यान द्वारा इष्ट को प्रसन्न करना ही उपासना है। यही नहीं, हमारे धर्म, संस्कृति और भाषा विज्ञान के विशिष्ट शब्दों का अभिप्राय निरूपित करने वाले प्रमुख ग्रन्थ *अमर कोष* में उपासना शब्द का अर्थ एवं व्याख्या इस प्रकार बताई गई है—

पूजा नमस्या पचितिः सपर्याचर्हणाः समाः।
वरिवस्या तु शुश्रुषा परिचर्याप्युपासना॥

प्राचीनतम आराधना पद्धति

जप-तप, पूजा-आराधना, मन्त्र सिद्धि और ध्यान के आसान रूपों का सन्तुलित मिश्रण है उपासना। परन्तु तपस्या की तरह कायाकष्ट, यज्ञों और हवन के साथ धन का व्यय तथा मूर्तिपूजा के समान कर्मकाण्ड इसमें नहीं है। यही कारण है कि कुछ व्यक्ति उपासना को कोई नई अथवा शास्त्रीय मान्यताओं से रहित आराधना पद्धति समझते हैं, परन्तु यह उनका भ्रम है। वैदिक काल में भी मानसिक उपासना व्यापक स्तर पर की जाती थी। बड़े-बड़े तपस्वी तो तपस्या करते थे और आश्रमों में रहने वाले ऋषि-मुनि यज्ञ, हवन व उपासना। जन-सामान्य में भी अधिकांश व्यक्ति उपासना ही करते थे। इसका संसार के प्रथम लिखित साहित्य में पर्याप्त वर्णन है। स्वयं भगवान के मुखारबिन्दु से उद्घटित और हमारे धर्म-संस्कृति एवं दर्शन के आधारग्रन्थ वेदों में अनेक स्थानों पर उपासना शब्द का प्रयोग हुआ है जिसका अर्थ साथ रहने, सामने प्रस्तुत होने, उपस्थित होने, सेवा-शुश्रूषा, ध्यान और पूजा करने से है।

इसके अलावा लगभग सभी प्राचीन धर्मग्रन्थों में उपासना की विधि एवं महत्व का यथेष्ठ वर्णन है। *योगवाशिष्ठ, ब्रह्मसूत्र* आदि भाष्यों में उपास्यदेव के ध्यान को सर्वोपरि उपासना कहा गया है, तो *मनुस्मृति* में भी उपासना का अर्थ 'ध्यान' है। *आपस्तम्ब धर्मसूत्र* के अनुसार अपने उपास्यदेव की सच्चे मन से सेवा करना उपासना है तो *गौतम धर्मसूत्र* में उपासना का अर्थ प्रणाम करना है। भगवान श्रीकृष्ण ने *गीता* में उपासना शब्द को 'सेवा और भक्ति' के अर्थ में प्रयोग किया है, जबकि *वाल्मीकि रामायण* में उपासना का अर्थ समीप रहना है। इन सभी

धर्मग्रन्थों ने उपासना को सर्वश्रेष्ठ आराधना पद्धति तो कहा ही है, इसके व्यापक क्षेत्र को अपने-अपने ढंग से निरूपित करने की भी चेष्टा की है। विभिन्न ग्रन्थों में उपासना शब्द को पृथक-पृथक अर्थों में उल्लिखित किया गया है, परन्तु सभी का भावार्थ और निष्कर्ष एक ही है। सभी धर्मग्रन्थों, ऋषि-मुनियों और महर्षियों का कहना है कि किसी भी विधि से अपने इष्टदेव की प्रसन्नता के लिए जो भी क्रिया की जाए, वही उपासना है। इष्टदेव का ध्यान, प्रणाम, नमस्कार, पूजा, जप, होम, भक्ति, समीप समझने की भावना, सेवा-शुश्रूषा, परिचर्या, आराधना, चिन्तन-मनन आदि सभी क्रियाएं उपासना के ही विभिन्न रूप हैं।

एक शंका का समाधान

आराधना करते समय सभी वस्तुएं मूर्ति अथवा विग्रह को स्थूल रूप में अर्पित की जाती हैं, परन्तु उपासना करते समय उपास्यदेव का कोई चित्र तक हमारे पास नहीं होता। भावलोक में अपने आराध्यदेव को निकट बुलाकर और काल्पनिक आसन पर उन्हें विराजमान करके केवल भावनात्मक रूप में ही उन्हें सभी वस्तुएं एवं सेवाएं अर्पित की जाती हैं। इसलिए नास्तिक और कुतर्की व्यक्ति ही नहीं, जीवनभर मूर्ति-पूजा में अटके रहने वाले आस्तिक भी प्राय: एक शंका का शिकार बने रहते हैं। वे कहते हैं कि ईश्वर और सभी देवी-देवता तो निराकार, अविनाशी, अनन्त एवं अदृश्य हैं। अत: उन्हें किस प्रकार अपने निकट बुलाकर बैठाया जा सकता है और कैसे की जा सकती है उनकी सेवा, पूजा-अर्चना एवं उपासना। मातेश्वरी काली ही नहीं, सभी देवता अपने-अपने लोकों और स्वर्ग में निवास करते हैं। भगवान विष्णु के अवतार श्रीराम अथवा श्रीकृष्ण और मातेश्वरी दुर्गा या काली माई की उपासना करते समय तो यह समस्या ज्यादा जटिल रूप धारण कर लेगी, क्योंकि युगों पूर्व वे इस भूमण्डल से प्रस्थान कर चुके हैं। जब स्वयं ईश्वर, उसका कोई भी अवतार अथवा देवी-देवता पृथ्वी पर नहीं है, तो हम उन्हें कैसे अपने निकट बुला सकते हैं। किस प्रकार कर सकते हैं उनकी सेवा-शुश्रूषा एवं उपासना। शास्त्र इस शंका का समाधान करते हुए कहते हैं—''यह सत्य है कि ईश्वर और अन्य सभी देव सर्वव्यापी होते हुए भी दृष्टिगोचर नहीं होते, परन्तु उनकी शक्ति को महसूस किया जा सकता है। मातेश्वरी काली अथवा कोई भी देवी-देवता कहां हैं और कहां नहीं, इसका निर्धारण मानव नहीं कर सकता। अत: स्थूल रूप से तो उनके निकट बैठना, उनकी सेवा करना अथवा अपने उपास्य का सामीप्य प्राप्त करना सम्भव नहीं है। परन्तु भावलोक में तो ऐसा किया ही जा सकता है।''

हमारे धर्मशास्त्रों में इस शंका का समाधान बहुत ही तर्कपूर्ण तरीके से किया गया है। धर्मशास्त्रों का तर्क है कि यद्यपि हम किसी भी देवी-देवता को स्थूल रूप से अपने निकट नहीं बुला सकते और न ही उन्हें इन नयनों से देख सकते हैं, परन्तु

भावलोक में उन्हें अपने निकट अनुभव करते रहते हैं। एक सांसारिक उदाहरण देते हुए शास्त्र कहते हैं कि जब हमारे परिवार का कोई सदस्य, मित्र अथवा अन्य प्रिय व्यक्ति हमसे काफी दूर होता है, तो हम उसके चित्र, उससे संबंधित वस्तुओं और उसकी याद के सहारे ही अपने मन की आंखों से उसे देखते रहते हैं। यही नहीं, उसके रूप-स्वरूप, उससे अपने सम्बन्धों और उसके कार्यकलापों का ध्यान कर-करके हम उसकी याद को ताजा करते रहते हैं। अपनी शुभकामनाओं द्वारा उसे शक्ति प्रदान करने की चेष्टा भी करते हैं। इस प्रकार स्थूल रूप से वह व्यक्ति हमसे दूर होता है, परन्तु हमारा मन उसके पास ही होता है। अत: हमारा उससे आत्मिक संबंध बना रहता है। ठीक यही स्थिति उपासक और उपास्यदेव के मध्य रहती है। हम जैसे-जैसे उपासना के पथ पर आगे बढ़ते हैं, यह दूरी धीरे-धीरे कम होकर अन्त में लगभग मिट जाती है। फिर हम उन्हें हर समय अपने निकट ही अनुभव करते रहते हैं।

आराधना, उपासना तथा तंत्र साधना

गत अध्याय में हमने धर्म की विभिन्न राहों का अवलोकन करते समय देखा कि कुछ मार्ग एक-दूसरे के पूरक और सहायक हैं तो कुछ पूर्णतया पृथक-पृथक। यहां तक कि तप और यज्ञ अथवा ब्रह्म के चिन्तन एवं मूर्तिपूजा के समान कुछ मार्ग एक-दूसरे के विरोधी भी हैं। परन्तु ये तीनों मार्ग न तो एक-दूसरे के पूरक हैं, न ही सहायक और न ही विरोधी, बल्कि वास्तव में दूसरा मार्ग अर्थात् उपासना पहले मार्ग— विधिवत आराधना—का आगामी चरण तथा तान्त्रिक साधनाओं का मूल आधार है।

पूजा-आराधना में आराध्य देवी-देवता के विग्रह अथवा चित्र को सभी वस्तुएं स्थूल रूप में अर्पित की जाती हैं, जबकि तन्त्र साधना करते समय देवता से सम्बन्धित यन्त्र को सम्मुख रखकर विविध लौकिक उपादानों का प्रयोग भी तन्त्र-साधक करता है। परन्तु तपस्या और भजन के समान ही उपासना एकांत स्थान में बैठकर शान्त मन-मस्तिष्क से पूर्ण एकाग्रता के साथ की जाने वाली एक मानसिक प्रक्रिया है। इसमें किसी लौकिक वस्तु तो क्या, अपने उपास्यदेव की किसी मूर्ति अथवा चित्र तक का प्रयोग अनिवार्य नहीं है। उपासना के लिए मन्दिर जाना तो दूर, किसी भी विशिष्ट स्थान तक की आवश्यकता नहीं है। घर के किसी भी कोने अथवा शांत स्थान पर बैठकर मातेश्वरी काली या अन्य देवी-देवता की उपासना आसानी से की जा सकती है। यद्यपि प्रारम्भ में उपासना करते समय अधिकांश उपासक अपने उपास्यदेव का एक विग्रह अथवा चित्र अपने सामने रखते हैं, परन्तु उसकी पूजा नहीं की जाती। उस चित्र की उपयोगिता मात्र भटकते हुए मन को मातेश्वरी काली अथवा किसी भी उपास्यदेव के चरणों में लगाना और मन- मन्दिर में उनकी मधुर मूरत बसाना होता है।

उपासना की शास्त्रोक्त विधि

मन्त्रों के जप की उपासना पूर्ण रूप से एक मानसिक प्रक्रिया है, परन्तु यह भजन और जप के समान एक सीधी-सादी प्रक्रिया नहीं है। इसका एक निश्चित एवं निर्धारित विधि-विधान है। इसमें षोडशोपचार आराधना के सभी मन्त्रों और सम्पूर्ण विधान का पालन किया जाता है, परन्तु किसी उपास्यदेव के चित्र तक का प्रयोग अनिवार्य नहीं होता। कुछ काल तक निरन्तर सच्चे मन से उपासना करते रहने पर उपासक और उपास्यदेव के मध्य ऐसा सान्निध्य स्थापित हो जाता है कि वह उपासना करते समय अपने आराध्य को एकदम निकट अनुभव करने लगता है तथा एक-एक कर सभी वस्तुएं समर्पित भी करता जाता है। यही कारण है कि उपासना करते समय किसी स्वच्छ और शान्त स्थान पर बैठकर एकाग्र भाव से सर्वप्रथम भूमि, अपने आसन और तन-मन की शुद्धि हेतु मन्त्रों का स्तवन किया जाता है। शान्तिपाठ के बाद गणेशजी की पूजा-वंदना की जाती है, फिर अपने उपास्यदेव का ध्यान। इस समय उपासक भावनात्मक रूप में अपने उपास्यदेव को अपने सम्मुख साक्षात् रूप में उपस्थित अनुभव करते हुए उनसे काल्पनिक आसन पर विराजमान होने के लिए प्रार्थना करता है। फिर अर्पित करता है एक-एक करके एक निश्चित क्रम में अपनी सभी सेवाएं। मूर्ति की षोडशोपचार आराधना करते समय तो ये सभी कार्य स्थूल रूप में भी किए जाते हैं। आराधक जब मुंह से मन्त्रों का स्तवन कर रहा होता है, उसी समय एक-एक कर सभी वस्तुएं भी मूर्ति को अर्पित करता रहता है।

चरम स्थिति

महाभारत के युद्ध के प्रथम दिन अर्जुन के दिग्भ्रमित हो जाने पर भगवान श्रीकृष्ण ने उनको व्यावहारिक, सांसारिक व धार्मिक पक्षों और मानव जीवन के चरम लक्ष्य के बारे में बड़े स्पष्ट रूप में समझाया था। *श्रीमद्‌भगवद् गीता* के रूप में भगवान कृष्ण द्वारा स्वयं अपने श्रीमुख से दिया गया यह उपदेश सभी धर्मों, कर्मों और कर्मयोग के सिद्धान्तों का सार है। भगवान श्रीकृष्ण ने इसमें ईश्वर, धर्म, सांसारिक कर्मों, व्यक्ति और समाज के परस्पर सम्बन्धों, जीवन के उद्देश्य तथा चरम लक्ष्य जैसे गूढ़ रहस्यों को अत्यन्त सरल भाषा में समझाया है। यही कारण है कि श्रीमद्‌भगवद्‌गीता जहां हमारे धर्म का प्रधान ग्रन्थ है, वहीं प्रत्येक महापुरुष ने इसका अध्ययन कर इससे ज्ञान प्राप्त किया है। गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने उपासना को सबसे श्रेष्ठ आराधना पद्धति कहा है। उन्होंने निष्काम कर्मयोग को उपासना की चरम स्थिति तथा जीवन में सभी आनन्द और अन्त में मोक्ष प्राप्ति का द्वार बताया है। इस बारे में भगवान श्रीकृष्ण का कहना है कि नियमित उपासना करने वाला व्यक्ति अपने सभी कार्यों को अपने इष्टदेव को अर्पित करके निष्काम भाव से कर्म करता है और अपने मन को अपने उपास्यदेव में लगाए रखता है। अतः उसकी सभी क्रियाएं

उपासना का रूप धारण कर लेती हैं, जो मुक्ति का द्वार है और अन्त में वह मुझको ही प्राप्त होता है।

भगवान श्रीकृष्ण के उपरोक्त कथन को अधिक स्पष्ट करते हुए विद्वानों ने कहा है कि निरन्तर उपासना करते रहने पर उपासक के समस्त कार्य-व्यवहार और आचार-विचार में स्वयं ही शुचिता का संचार होने लगता है। इस प्रकार वह अनेक पाप कर्मों से स्वयं ही बचा रहता है। उसके कार्यों की यह पवित्रता धीरे-धीरे मोह एवं लोभ जैसी दुष्प्रवृत्तियों पर अंकुश लगाने में भी समर्थ हो जाती है। फिर वह लोभ, मोह और आकांक्षा से रहित कर्तव्य समझकर करता है सभी कार्य और उनका फल अपने उपास्यदेव पर छोड़ देता है। इस प्रकार उसके सभी कार्य ईश्वर अथवा उपास्यदेव के प्रति समर्पित हो जाते हैं, अत: उसका प्रत्येक कर्म उपासना का रूप ले लेता है। अब वह परिवार में रहते हुए पूर्णरूपेण क्रियाशील है, फिर भी आकांक्षा, मोह एवं लोभ से रहित होने के कारण उसका ध्यान हर समय अपने उपास्यदेव अथवा ईश्वर में लगा रहता है। वह अपने सभी कार्य उपास्यदेव की आज्ञा समझकर करता है और उनसे प्राप्त फलों को मानता है अपने आराध्यदेव की कृपा का प्रसाद। इस प्रकार उसके सभी क्रिया-कलाप स्वयं के लिए नहीं, बल्कि उपास्यदेव की प्रेरणा से, उनके निमित्त और उनके द्वारा ही होने लगते हैं। अब उसे न तो लाभ होने पर हर्ष होता है और न ही हानि होने पर विषाद। आकांक्षा, कामना और उपलब्धि की इच्छा से रहित होकर कर्म करने की इसी भावना का नाम निष्काम कर्मयोग है, जिसने राम एवं श्रीकृष्ण को भगवान तथा महाराज जनक को विदेह का उच्च आसन प्रदान किया।

जीवन पर प्रभाव

मरने के बाद स्वर्ग मिलता है, जहां आनन्द ही आनन्द है। परन्तु एक सच्चा उपासक इस संसार में रहते हुए भी निरन्तर उस स्वर्ग का परमानन्द प्राप्त करता रहता है। आज हमारे सभी दुःखों, तनावों, पीड़ाओं और क्लेशों का एकमात्र कारण हमारा ईश-उपासना से विमुख हो जाना ही है।

सुख-सुविधाओं की लालसा और धन के लिए अंधी दौड़ ने आज मानव को पशुवत बनाकर रख दिया है। पशु भी थोड़ा-बहुत आराम और मनोविनोद कर लेता है, परन्तु अधिकांश व्यक्तियों का जीवन एक मशीन बनकर रह गया है। मानसिक शांति, परस्पर मधुर संबंध और भाईचारा अब बीते युग की बात हो गई है। इसका एकमात्र कारण है, भौतिक उपलब्धियों की प्राप्ति की अंधी-असीम आकांक्षा। तन-मन के सभी क्लेशों-संतापों, समाज में हिंसा-अनाचार तथा व्यक्तिगत विद्वेष एवं असंतोष का मूल कारण धन के प्रति यह अंधी दौड़ ही है। इन सभी समस्याओं का एकमात्र समाधान है, मातेश्वरी काली अथवा परब्रह्म परमेश्वर के किसी भी रूप-

स्वरूप, अवतार अथवा देवी-देवता की नियमित उपासना। नित्य उपासना करने से ज्ञान एवं कार्यशक्ति का विकास होता है और जीवात्मा तथा परमात्मा के मध्य स्थित जगत की माया तिरोहित हो जाती है। उपासना से भगवत-सान्निध्य की प्राप्ति होती है। उसी के फलस्वरूप जीव भव-बन्धनों से मुक्त होता है। इस कलिकाल में उपासना को ही सर्वदु:खभंजक एवं आराधना का सर्वश्रेष्ठ और आसान माध्यम कहा गया है। उपासना के द्वारा ही जीवात्मा के अन्त:करण की शुद्धि तथा उपास्यदेव के प्रति प्रेम, विश्वास एवं श्रद्धा की वृद्धि होती है। उपासना से उपासक अपनी रक्षा का सम्पूर्ण भार अपने आराध्यदेव और उसके माध्यम से परमात्मा पर डाल देता है। इस प्रकार वह उनका विशेष कृपापात्र बनने के साथ ही सभी तनावों से दूर होकर अलौकिक शान्ति और आनन्द पाता हुआ अन्त में हरिचरणों में वास करता है। यह हमारा नहीं, सभी धर्मशास्त्रों का कथन है।

उपासना ईश-आराधना की सर्वश्रेष्ठ पद्धति है और मातेश्वरी ईश्वर का साक्षात् स्वरूप तथा शीघ्र प्रसन्न होने वाली मां हैं। आपकी उपासना इस जीवन में सभी सफलताएं, सिद्धियां और सर्वानन्द दिलाने के साथ ही अन्त में मोक्ष प्रदान करने में सहज-समर्थ है। परन्तु प्रारम्भ में न तो हमारी दृष्टि इतनी निर्मल होती है कि हम कण-कण में मातेश्वरी को देख सकें और न ही हृदय इतना पवित्र होता है कि हर समय उनके रूप-स्वरूप की झांकी हमारे मन-मन्दिर में बसी रहे। सबसे बड़ी बात तो यह है कि उपासना ही नहीं, सामान्य पूजा में भी हमारा मन भली प्रकार रम नहीं पाता। परन्तु जब एक बार हमारे हृदय में ज्ञान का दीप प्रज्वलित हो जाता है, मातेश्वरी की भक्ति से प्राप्त शक्ति हमें उनका प्रिय पुत्र बना देती है, तो हमें न केवल उपासना में आनन्द आने लगता है, बल्कि हम अपने सभी कार्य मातेश्वरी का आदेश मानकर करने लगते हैं। परन्तु इस मंजिल पर पहुंचने के लिए प्रारम्भ में हमें गत अध्याय में वर्णित लगभग सभी विधियों का सहारा लेना पड़ेगा।

यह सत्य है कि पूजा-आराधना, भगवती की भेंटों, भजनों और आरतियों का गायन, धार्मिक साहित्य का अध्ययन-मनन एवं सत्संग हमारी उपासना की मंजिल नहीं, परन्तु राह को सहज बनाने वाले सहायक तत्त्व तो हैं ही। उपासना के मार्ग पर हम सटीक रूप से कैसे आगे बढ़ सकें और इस जीवन में मातेश्वरी काली की असीम कृपाएं तथा अन्त में मोक्ष प्राप्त कर सकें, अब हम इस संदर्भ में चर्चा करेंगे। यह चर्चा कुछ ऐसी भौतिक और मानसिक तैयारियों की है जो उपासना ही नहीं, सामान्य आराधना से लेकर तान्त्रिक साधनाओं तक की सफलता में प्रमुख भूमिका निभाते हैं।

❑❑

10

सफलता के कुछ सूत्र

हम में से अधिकांश व्यक्ति जीवनभर मूर्तिपूजा, स्नान-ध्यान और व्रत-उपवास जैसे कर्मों में ही अटके रहते हैं तथा उपासना अथवा यन्त्र-मन्त्र की साधना की ओर एक कदम भी आगे नहीं बढ़ पाते। जो व्यक्ति मानसिक उपासना अथवा यन्त्र-मन्त्र की साधना और तान्त्रिक सिद्धियां करते हैं, वे भी प्राय: उतनी सफलता नहीं प्राप्त कर पाते, जितनी के वे अधिकारी हैं। इसकी सबसे बड़ी हानि यह है कि ऐसे व्यक्ति संशयशील और असन्तुष्ट बने रहते हैं। कुछ व्यक्ति बीच में ही आराधना-उपासना बन्द करके अपना यह लोक और परलोक दोनों ही बिगाड़ लेते हैं। जब नई पीढ़ी अपने बुजुर्गों को इस अवस्था में देखती है, तो धर्म-कर्म और आराधना-उपासना में उसकी रुचि जाग्रत ही नहीं हो पाती। वह इन कार्यों से विमुख भी बनी रहती है। जन-सामान्य में धार्मिक क्रियाओं के प्रति घट रही आस्थाओं का यह भी एक प्रमुख कारण है। साथ ही हम लोगों के लिए चिन्तन-मनन और इस समस्या के समाधान हेतु विचार-विमर्श का एक गम्भीर विषय भी है। आइए, अब कुछ उन तथ्यों, कृत्यों और उपादानों की चर्चा कर ली जाए, जो साधना-उपासना में सफलता के लिए आवश्यक ही नहीं, बल्कि अनिवार्य भी हैं।

उपासना हेतु स्थान एवं समय का चयन

मन्दिर व सार्वजनिक पूजा स्थल इष्टदेव के साकार रूप के दर्शन-नमन करने, अधूरे रूप में पूजा करने, सत्संग-प्रवचन सुनने, भजनों-आरतियों के गायन तथा धर्म-चर्चा एवं विचार-विमर्श के तो सशक्त केन्द्र हैं, परन्तु मन्त्रों का जप और उपासना वहां सम्भव नहीं है। उपासना मुख्य रूप से मानसिक प्रक्रिया है और कोई भी मानसिक क्रिया—ऐसा कार्य जिसमें आप हृदय की सम्पूर्ण गहराई से जुड़कर अपने तन-मन तक की सुध भूल जाएं—भीड़ में हो ही नहीं सकती। चाहे वह गम्भीर विषयों का अध्ययन हो या आध्यात्मिक चिन्तन-मनन। सामान्य पूजा-पाठ तथा उपासना में सबसे बड़ा अन्तर यही है कि पूजा मुख्य रूप से एक शारीरिक कर्म है, कीर्तन सामूहिक रूप से की जाने वाली क्रिया, तो उपासना ईश्वर से तादात्म्य

स्थापित कर उसे अपने पास साक्षात् रूप से उपस्थित अनुभव करते हुए उसका आदर-सत्कार तथा सेवा करने का भावात्मक कर्म। यही कारण है कि एकदम शान्त और स्वच्छ वातावरण ही उपासना, मन्त्रों के जप और तान्त्रिक साधनाओं के लिए उचित रहता है।

नदी के तट पर, किसी सरोवर के किनारे अथवा पार्क आदि में किसी वृक्ष के नीचे बैठकर उपासना एवं साधना करने का शास्त्रों में अधिक महत्व बताया गया है। इस प्रकार प्रात:काल का टहलना तो हो ही जाता है, खुली स्वच्छ वायु भी मिलती है जो तन-मन में स्फूर्ति और अच्छे स्वास्थ्य का मूल आधार है। परन्तु जहां तक व्यावहारिकता का प्रश्न है, नगरों-महानगरों के निवासियों तथा महिलाओं के लिए ग्रामीण क्षेत्रों तक में यह सहज संभव नहीं है। वैसे भी यह केवल बाह्य पक्ष है, आप घर के किसी कमरे अथवा स्थान पर बैठकर भी पूर्ण तन्मयता के साथ उपासना और मन्त्र सिद्धि कर सकते हैं। बस स्थान का स्वच्छ और कोलाहल से रहित अर्थात् शान्त वातावरण ही अनिवार्य है।

जहां तक समय का प्रश्न है, भगवान विष्णु और उनके अवतारों की पूजा, आराधना व उपासना रात्रि में करने का निषेध है। परन्तु मातेश्वरी काली की उपासना में ऐसी कोई बन्दिश नहीं है। वे हमारी मां हैं और हम उनके श्रद्धालु भक्त एवं बच्चे। हम उन्हें कभी भी याद कर सकते हैं। इसीलिए आपकी तान्त्रिक सिद्धियां रात्रि में भी की जा सकती हैं। मातेश्वरी काली के किसी भी रूप-स्वरूप की आराधना और उपासना आप कभी भी कर सकते हैं। परन्तु आप कोई तान्त्रिक अथवा साधु-संन्यासी नहीं, एक सामान्य गृहस्थ हैं। वैसे व्यावहारिक रूप में तो शायद सुबह-शाम दोनों समय आप उपासना न कर पाएं। अत: आपके लिए प्रात:काल ब्रह्म मुहूर्त में उपासना करना ही उचित रहेगा। इस रूप में आप प्रतिदिन दो-तीन घंटे आराम से उपासना कर सकते हैं। सबसे अच्छा तो यही रहेगा कि आप सुबह तीन-चार बजे के मध्य बिस्तर छोड़ दें और नहाने के बाद धुले हुए वस्त्र पहनकर उपासना करने बैठ जाएं। इस प्रकार जब तक अन्य व्यक्ति जागेंगे और पक्षियों का कलरव तथा अन्य शोर होने लगेगा, तब तक आप अपनी उपासना पूर्ण कर चुके होंगे।

वस्त्र तथा आसन

सिर पर टोपी या पगड़ी पहनकर, शिखा अर्थात् चोटी बांधकर और पश्चिमी परिधान—कमीज, पैंट, पाजामा अथवा निक्कर धारण कर पूजा-आराधना अथवा तान्त्रिक साधनाएं करने का धर्मग्रन्थों में निषेध है। शास्त्रों में कहा गया है कि अच्छी प्रकार स्नान करने के पश्चात् धुले हुए वस्त्र पहनकर उपासना-आराधना करें। यही कारण है कि बनियान धारण कर और धोती, तहमद या अंगोछा लपेटकर उपासना

करना उचित रहता है। जहां तक वस्त्रों के रंग और बैठने के आसन का प्रश्न है, मातेश्वरी काली को रक्तवर्ण बहुत प्रिय है। अत: रक्तवर्ण के वस्त्रों तथा आसन का प्रयोग करना चाहिए। रौद्र रूपों की तान्त्रिक साधनाएं प्राय: काले रंग के वस्त्र पहनकर की जाती हैं। बैठने का आसन अर्थात् शरीर की स्थिति का चयन आप अपनी सुविधा, अभ्यास और रुचि के अनुरूप कर सकते हैं। वैसे पद्मासन, स्वास्तिक आसन अथवा सिद्ध आसन में बैठना अधिक अच्छा रहता है। आप किसी भी आसन में बैठें अथवा आलथी-पालथी मारकर, सामान्य रूप से शरीर को न तो एकदम ढीला ही छोड़ें और न ही अधिक तनाव दें। बैठने के बाद हमारा शरीर स्थिर तो होना ही चाहिए, सम्पूर्ण शरीर, गर्दन और सिर एक सीधी रेखा के रूप में लम्बवत भी रहना अनिवार्य है। रीढ़ की हड्डी, गर्दन या सिर को झुकाकर उपासना अथवा मन्त्रों का जप करने का शास्त्र निषेध करते हैं। स्थिर होकर बैठने के बाद नयनों को लगभग बन्द करके और दृष्टि को नासिका के अग्रभाग पर केन्द्रित करके रखने पर मन एकाग्र बना रहता है। चन्द दिनों के अभ्यास से ही आप इसमें दक्षता प्राप्त कर सकते हैं।

मंत्रों का शुद्ध और क्रमबद्ध रूप से स्तवन

यदि हम किसी को गलत अथवा उसका अधूरा नाम लेकर बुलाएं और अपनी बात स्पष्ट व सही तरीके से न कह पाएं, तो वह व्यक्ति हमारा कार्य तो करेगा नहीं, नाराज भी हो जाएगा। यह सत्य है कि मातेश्वरी परम कृपालु और भक्त वत्सल हैं। वे हमारी त्रुटियों को सहज ही क्षमा कर देती हैं, परन्तु गलत अथवा बिना भावना के आराधना-उपासना करने वाले भक्त को उनकी अधिक कृपाएं नहीं मिलतीं। शास्त्रों की मान्यता है कि मन्त्रों में देवता निवास करते हैं अर्थात् मन्त्र देवताओं के सूक्ष्म निर्गुण रूप हैं। मन्त्र स्वयं देवता हैं या नहीं, इस बारे में मत-भिन्नता हो सकती है परन्तु मन्त्र देवताओं के आह्वान का माध्यम हैं, इस संदर्भ में दो राय नहीं है। उपासना के प्रारम्भ में मातेश्वरी काली को मन्त्रोच्चारण द्वारा ही आप अपने पास बुलाते हैं, मन्त्रों से ही उनकी आराधना की जाती है और मन्त्रों द्वारा ही उनको विधि-वस्तुएं अर्पित की जाती हैं। यही कारण है कि मन्त्रों को एकदम शुद्ध रूप में उच्चारित करना उपासना की प्रथम शर्त है। किसी मन्त्र का अधूरा पाठ अथवा त्रुटिपूर्ण उच्चारण अर्थ के स्थान पर अनर्थ कर सकता है। बहुधा भक्तों की उपासना निष्फल या खण्डित होने का कारण उनके हृदय के कलुष भाव या मन्त्रों का त्रुटिपूर्ण, अधूरा अथवा अशुद्ध वाचन ही होता है। आप पुस्तक हाथ में आते ही माता काली की उपासना प्रारम्भ कर देने की भूल न कीजिए। पहले कुछ दिन निरन्तर अभ्यास कर मन्त्रों को कण्ठस्थ कीजिए, उनके भावों को हृदयंगम कीजिए और पूरी तरह मानसिक रूप से तैयार हो जाने पर ही उपासना प्रारम्भ कीजिए।

आप जितने दिनों में मन्त्रों को याद करेंगे, उतना अन्तराल भी व्यर्थ नहीं जाएगा। इस समय में आप योग के आसनों का अभ्यास एवं प्राणायाम द्वारा अपने मन को स्थिर रखने का प्रतिदिन अभ्यास तो करें ही, अपने व्यवहार का विश्लेषण कर चरित्र की कमियों को दूर करने का भी प्रयत्न कीजिए। शुद्ध तन-मन, पूर्ण श्रद्धा एवं भक्तिभावना, पवित्र तथा स्थिर मन और श्लोकों का शुद्ध उच्चारण उपासना में सफलता की प्रथम शर्तें हैं। अतः उपासना का अनुष्ठान शुरू करने से पूर्व इन पहलुओं पर ध्यान देना भी आवश्यक है।

भक्ति, सिद्धि एवं उपासना के प्रदर्शन से बचें

उपासना का प्रदर्शन करने पर अन्य व्यक्ति हमें भक्त तो मान लेंगे, परन्तु उनके द्वारा किया गया सम्मान और प्रशंसा हमारे पुण्यफलों का एक बड़ा भाग हमसे छीन लेगा। अतः गुप्त रूप से कामना रहित होकर की गई आराधना-उपासना ही वास्तव में भक्ति है। जब हम संसार को दिखाकर पूजा-पाठ, आराधना एवं उपासना करने लगते हैं तो वह भक्ति नहीं, बल्कि एक आडम्बर मात्र बनकर रह जाती है। मातेश्वरी काली की अनुकम्पाएं एवं मोक्ष प्राप्ति के लिए आवश्यक है कि आप एकांत स्थान में शान्त मन से आराधना-उपासना करें। इसका प्रदर्शन कदापि न करें। किसी भी देव की आराधना-उपासना, सेवा-पूजा, जप-तप अथवा भक्ति का कोई भी मार्ग अपनाया जाए, यदि उसका प्रदर्शन हो जाता है तो पुण्यफलों में न केवल न्यूनता आ जाती है बल्कि बड़ी सीमा तक उनका लोप भी हो जाता है। आराधना-उपासना न तो बिक्री की वस्तु है और न ही प्रदर्शन की। उपासना का प्रदर्शन आपको समाज में सम्मान तथा आत्म-प्रदर्शन का थोथा सुख और स्वयं को विशिष्ट समझने का झूठा गर्व तो दिला सकता है, परन्तु मां काली का सच्चा प्यार एवं कृपाएं नहीं दिला सकता। इसलिए जहां तक संभव हो सके, एकांत में मातेश्वरी का ध्यान, भजन और उपासना कीजिए। इसका दिखावा भूलकर भी न करें।

भक्ति का प्रदर्शन किस प्रकार भक्त को कष्टों में डाल देता है, इसके हजारों जीवन्त उदाहरण हमारे धार्मिक ग्रन्थों में मिलते हैं। भक्तराज प्रह्लाद और ध्रुव को बचपन से ही वर्षों तक कठोर तपस्याएं करनी पड़ीं, तब कहीं जाकर उन्हें प्रभु के दर्शन हुए। क्योंकि उनकी भक्ति का सम्पूर्ण समाज को पता लग गया था। इसके विपरीत रावण का भाई विभीषण प्रातःकाल उठकर चन्द क्षणों के लिए ईश्वर का स्मरण करता था। परन्तु रावण ही नहीं, विभीषण की पत्नी तक से छुपी हुई थी उसकी भक्ति। यह विभीषण की छिपी हुई भक्ति का ही कमाल था कि ध्रुव और प्रह्लाद की अपेक्षा सौवें अंश से भी कम समय तक आराधना-उपासना करने के बावजूद उसे भगवान राम का साथ और लंका का सिंहासन प्राप्त हुआ। आज तक हनुमानजी के समान ही उसे सबसे बड़ा रामभक्त माना जाता है।

प्रतिदिन नियमपूर्वक उपासना कीजिए

हम अपनी सभी शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति नियमित रूप से करते हैं। कभी किसी नित्य क्रिया में थोड़ा-सा भी विलम्ब हमें विचलित कर देता है। फिर उपासना में ही व्यवधान क्यों डाला जाए। संसार का कोई भी कार्य हो, नित्य नियमपूर्वक निरन्तर करने से ही उसमें सफलता प्राप्त होती है। वर्ष भर नियमपूर्वक बिना नागा पढ़ने वाला विद्यार्थी ही प्रथम श्रेणी प्राप्त करता है। घर में रसोई तभी बन पाती है जब दाल, चावल, रोटी आदि बनाने की क्रियाएं एक के बाद एक लगातार पूरी की जाएं। यह नहीं हो सकता कि आधी पकी हुई दाल को उतार कर घंटे भर बाद उसे फिर आग पर रख दें। रोटियां सेंक कर चूल्हा बुझा दें और फिर दोबारा आग जलाकर रोटियां सेंकें। इस प्रकार तो पूरा दिन समाप्त हो जाएगा और बनेगा कुछ भी नहीं। ठीक यही दशा पूजा-आराधना और उपासना की है। निश्चित समय पर नित्य उपासना करने से ही वांछित फलों की प्राप्ति होती है, जबकि प्रमाद और आलस्य पुण्यफलों में तो कमी कर ही देता है, उपासना को भी खण्डित कर देता है। फिर हमारा ध्यान उपासना ही नहीं, सामान्य पूजा-पाठ में भी नहीं लगता। यदि सफर में होने अथवा अस्वस्थ होने के कारण स्नान आदि न कर पा रहे हों और कोई एकान्त स्थान भी हमारे पास न हो, तब भी उपासना एवं माता का ध्यान अवश्य कीजिए। विशेष परिस्थितियों में बिना विधि-विधान के की गई पूजा-आराधना भी पूर्ण मान्य होती है, क्योंकि मातेश्वरी काली हमारी मां हैं। वे हमारी मजबूरियों और सीमाओं को हमसे अधिक अच्छी तरह जानती हैं।

न्यूनतम का नियम बांधें, पर अधिकतम करें

हम प्रतिदिन किस समय आराधना-उपासना करें, उसमें कितना समय लगेगा और कौन-कौन से स्तोत्र तथा नाम की कितनी मालाएं जपें, पहले इसका मन में निर्धारण कर लीजिए। परन्तु यह सीमा आप न्यूनतम की ही मानिए। जितना नियम निर्धारित किया है, उतनी आराधना-उपासना प्रतिदिन निश्चित समय पर अवश्य कीजिए। यदि अधिक हो जाए तो ज्यादा अच्छा है। नियम कम-से-कम के लिए होता है, अधिकतम की कोई सीमा नहीं है। क्या धन से कभी किसी का मन भरा है। पांच वाला पचास के लिए और लाख वाला करोड़ के लिए सतत् चेष्टा करता रहता है। जब संसार के इस नाशवान धन से हम नहीं उकताते, सदैव अधिक की कामना करते रहते हैं, तो मातेश्वरी काली के प्रेम के उस असीम धन को ही क्यों सीमा में बांधा जाए। जितने अधिक समय तक चिन्तन-मनन, ध्यान, आराधना, उपासना और मन्त्रों का जप हो जाए, उतना ही कम है।

एकाग्र मन से उपासना जरूरी

उपासना, मन्त्रों का जप और यन्त्र, मन्त्र तथा तन्त्र की साधनाएं पूर्ण रूप से

मानसिक कर्म हैं। वैसे विधिवत आराधना की जाए अथवा मूर्ति को सामान्य रूप से नमन, आराध्यदेव हमारे भावों और आस्था को ही देखते हैं। फिर हम मां काली को दे ही क्या सकते हैं। यदि हम पूजा करते समय भोग-प्रसाद चढ़ाते हैं, तो वह हमारी भावना के प्रदर्शन का माध्यम होता है।

यह सत्य है कि प्रारम्भ में कुछ दिनों तक मानसिक उपासना ही नहीं, सामान्य पूजा और भजन में भी हमारा मन नहीं रमता, चित्त चंचल बना रहता है। कई बार उकताहट और घबराहट भी होती है, परन्तु यह स्थिति चन्द दिन ही रहती है। शुरू-शुरू में तो बालक को स्कूल में तथा नववधू को ससुराल में घबराहट होती ही है, लेकिन कुछ समय बाद बालक का स्कूल में और वधू का पतिगृह में न केवल मन लगने लगता है बल्कि उन्हें वहां पूर्ण आनन्द भी आने लगता है। ठीक यही स्थिति मातेश्वरी काली अथवा अन्य देवी-देवताओं के आराधना-उपासना की है। यद्यपि प्रारम्भ में कुछ दिनों तक ही उपासना-आराधना और ध्यान में मन नहीं लगेगा, कभी-कभी घबराहट भी हो सकती है, परन्तु कुछ समय बाद ही उपासना और भजन करने में आपको अलौकिक आनन्द आने लगेगा। इसी आनन्द का नाम ही परमानन्द है।

जब उपासना और मन्त्रों का जप आंख बन्द करके मन ही मन किया जाता है, तो चंचल मन प्राय: भटक जाता है। प्रतिदिन कुछ समय योग के किसी आसन में बैठकर प्राणायाम करना इस भटकन को रोकने का सबसे श्रेष्ठ उपाय है। प्रारम्भ में कुछ दिनों तक षोडशोपचार आराधना करना उपासना में दक्षता और मन के भटकाव को रोकने के बहुत ही अच्छे साधन हो सकते हैं। अत: आप शुरू में मूर्तिपूजा और विधि-विधानपूर्वक आराधना अवश्य कीजिए, परन्तु इसे उपासना के रास्ते का एक महत्वपूर्ण पड़ाव मानिए। आपकी मंजिल तो मानसिक उपासना है। इसके साथ ही मातेश्वरी काली से सम्बन्धित और अन्य धार्मिक पुस्तकों का अधिक से अधिक अध्ययन, आरतियों, भजनों, चालीसों आदि का मन ही मन स्तवन हमारे हृदय में अपने इष्टदेव के प्रति इतनी प्रीति बढ़ा देता है कि हमारा दिल हर समय उनके ध्यान में ही लीन रहने लगता है।

अपनत्व और पुत्र भाव विकसित करें

मातेश्वरी काली भगवती दुर्गा का अंश रूप हैं। इसीलिए वे इस सकल ब्रह्माण्ड की भरण-पोषणकर्ता और हम सभी की रक्षक हैं। जो व्यक्ति उन पर श्रद्धा नहीं रखते, उनका भी वे उपकार करती रहती हैं। परन्तु जो उन्हें अपना मान लेता है, उसके सभी पापों का भक्षण करके, उसकी सभी इच्छाएं वे अवश्य पूरी करती हैं। अन्त में वह व्यक्ति मोक्ष का अधिकारी भी सहज ही बन जाता है। मातेश्वरी हमारी स्वामिनी हैं और हम उनके सेवक। वे हमारी माता-पिता हैं और हम उनके

अबोध-अज्ञानी बालक। इस भाव का विकास ही आराधना-उपासना में सफलता का महत्वपूर्ण सूत्र है, साथ ही भक्ति का सबसे बड़ा प्रसाद भी! जब हम मातेश्वरी काली को अपना माता-पिता दोनों ही मान लेते हैं तो हमें सभी चिन्ताओं से सहज ही मुक्ति मिल जाती है, क्योंकि वे हर समय पिता की तरह हमारी सहायता और रक्षा करती रहती हैं तथा माता के समान हमारे सभी अपराधों को क्षमा करके निरन्तर हमारी भलाई करती हैं। अपने बच्चों से तो पशु-पक्षी भी प्यार करते हैं, क्योंकि यह भगवान का बनाया हुआ आधारभूत नियम है। हम ईश्वर के किसी भी स्वरूप अथवा देवी-देवता की आराधना-उपासना पुत्र भाव से करें, वे उक्त नियम से वशीभूत होकर हमारे ऊपर विशेष अनुकम्पाएं करेंगे।

कामना रहित होकर उपासना कीजिए

लौकिक जगत में एक कर्मचारी अपना कर्तव्य समझकर मशीनवत कार्य करता रहता है। यदि वह विशेष श्रम करता भी है तो तरक्की की आकांक्षा से। मालिक भी उसका वेतन बढ़ा देता है, परन्तु उसका उपकार नहीं मानता। इसके विपरीत जो मनुष्य नि:स्वार्थ भाव से किसी का जरा-सा भी कार्य कर देता है, तो व्यक्ति उपकार करने वाले का हृदय से आभार मानकर उसे कुछ भी देने के लिए तत्पर हो जाता है। ठीक यही स्थिति आराधना-उपासना और तन्त्र साधना की है। निष्काम भाव से की गई उपासना ही वास्तव में उपासना है। कोई कामना मन में रखकर उसकी पूर्ति हेतु की गई पूजा-सेवा-आराधना या तो चाकरी है अथवा व्यापार। मां काली हमारी माता-पिता और सर्वस्व हैं और हम उनकी सन्तानें। वे तो बिना मांगे ही हमें सब कुछ देती रहती हैं। उनसे कुछ मांगना अपना ही नहीं, उनका भी अपमान करने के समान है।

किसी भी देवी-देवता की सेवा, पूजा, आराधना अथवा भजन करने के बाद कुछ मांगना अथवा मन में किसी सांसारिक वस्तु की लालसा रखकर पूजा-उपासना करना भक्ति नहीं, बल्कि स्वयं को धोखा देना है। उपासना न तो बिक्री की वस्तु है और न ही प्रदर्शन की। गुप्त रूप से कामना रहित होकर की गई आराधना-उपासना ही वास्तविक धर्म है। जब हम संसार को दिखाकर पूजा-पाठ करने लगते हैं तो वह आराधना अथवा उपासना नहीं, मात्र आत्म-प्रदर्शन बनकर रह जाता है। इसी प्रकार कोई भी सांसारिक कामना—चाहे वह लड़की की शादी की हो या पुत्र-पौत्र प्राप्ति की, धन-दौलत की आकांक्षा हो या पदोन्नति की इच्छा—मन में रखकर भजन, जप, पूजा-पाठ या आराधना-उपासना करना वास्तव में भक्ति नहीं है।

भावना की भूमिका तथा प्रभाव

धर्म का सम्पूर्ण क्षेत्र आस्था, विश्वास, सादगी और भावना पर आधारित है। भावना रहित होकर उपासना की ही नहीं जा सकती। श्रद्धा और विश्वास की भावना

से विहीन व्यक्ति चाहे जीवनभर आराधना-उपासना करता रहे, उसे मोक्ष एवं मातेश्वरी काली के दर्शन तो क्या भक्ति से प्राप्त होने वाला आनन्द तक नहीं मिलता। आराधना की जाए अथवा उपासना, मन्त्रों का जप किया जाए अथवा कोई तान्त्रिक साधना, इसकी सफलता में सबसे बड़ी भूमिका हमारी भावना ही निभाती है। मातेश्वरी काली पर अटल विश्वास, कामना रहित होकर उनकी सेवा, सभी देवताओं पर समान भाव से श्रद्धा और सन्तों-भक्तों की सेवा करने का भाव, सच्चे हृदय से सभी से प्रेम तथा किसी का बुरा न करना जैसी भावनाएं ही हमें आराधना-उपासना में सफलता प्रदान कर सकती हैं। वास्तविकता तो यह है कि जहां एक ओर आराधना-उपासना में भावना की पवित्रता आवश्यक है, वहीं जैसे-जैसे हम उपासना की मंजिल पर आगे बढ़ते हैं, हमारी भावनाओं में पवित्रता स्वयं बढ़ती जाती है।

मनुष्य की पांच कर्मेन्द्रियां हैं एवं पांच ज्ञानेन्द्रियां। ये सभी बड़ी चंचल हैं और इनका नियन्त्रण करता है हमारा मन-मस्तिष्क। मन भावुक होता है। वह प्राय: परोपकार व अच्छे कार्यों की ओर प्रेरित करता है। इसके विपरीत मस्तिष्क तर्कशील होने के कारण हमें स्वार्थ की ओर अग्रसर करता है। मन-मस्तिष्क का यह संघर्ष ही हमारी सभी कुंठाओं-असन्तोषों का प्रधान कारण है और आज के व्यक्ति एवं समाज की सबसे बड़ी समस्या भी। परन्तु इन दोनों से बड़ी और इनको भी नियन्त्रित रखने वाली वस्तु है हमारी आत्मा। जब हमारा मन शान्त और मस्तिष्क अच्छे-धार्मिक विचारों से ओत-प्रोत होता है, तो हमारी आत्मा भी उस पवित्रता के प्रभाव से दिव्य रूप धारण करने लगती है। आत्मा का यह विकास ही आराधना-उपासना की सबसे बड़ी उपयोगिता है, साथ ही उपासना तथा तन्त्र सिद्धि को सफल बनाने का सबसे बड़ा उपादान भी। अत: हम आज से ही इस मार्ग पर चलने की चेष्टा करते हैं। मातेश्वरी काली भक्त-वत्सल होने के कारण न केवल हमारी सहायता करेंगी, बल्कि स्वयं उंगली पकड़कर हमें इस मार्ग पर ले चलेंगी।

❑❑

11

कालिका कवच

मातेश्वरी काली अनन्त हैं और सभी मातृशक्तियां उनका अंश रूप। इसके साथ ही भगवती काली के सौम्य से रौद्र तक बारह प्रमुख रूप हैं। शास्त्रों में इन सभी रूपों के अलग-अलग ध्यान और चेटक एवं साधना मन्त्र तो कई हैं, प्रत्येक रूप का कवच भी भिन्न है। वैसे काली के रौद्र रूपों की तान्त्रिक साधनाएं करने वाले साधक और श्मशान आदि में सिद्धियां करने वाले अघोरी ही महाकाली एवं श्मशान काली जैसे वीभत्स रूपों की साधना, ध्यान तथा कवच का स्तवन करते हैं।

इस अध्याय में हम रौद्र रूपों का कोई विशिष्ट कवच नहीं दे रहे हैं, बल्कि मातेश्वरी के उन दो कवचों का संकलन प्रस्तुत कर रहे हैं जिनमें से किसी एक का स्तवन आप सभी रूपों की आराधना, उपासना और तन्त्र साधना के समय समान रूप से कर सकते हैं। इनमें से जगन्मंगल कवच में स्वयं के साथ ही सम्पूर्ण जगत की रक्षा और अभिवृद्धि की प्रार्थना मातेश्वरी से की गई है। अत: सद्गृहस्थ सबसे अधिक इस जगन्मंगल कवच का ही स्तवन आराधना, उपासना तथा यन्त्र-मन्त्र की सिद्धि करते समय करते हैं। दक्षिण कालिका मातेश्वरी का अत्यन्त शीघ्र प्रसन्न होने वाला सौम्य रूप है। अधिकांश सद्गृहस्थ एवं उपासक इसी रूप की आराधना-उपासना करते हैं। कुछ आराधक-उपासक इस दक्षिण कालिका कवच के स्तवन को विशेष मान्यता देते हैं। आप दोनों में से किसी का भी नियमित स्तवन करें, भगवती काली समान रूप से आपकी और आपकी साधना की रक्षा करेंगी। दोनों की शक्ति बराबर है।

महिमा एवं प्रभाव

दोनों कवच शिवजी के रौद्र अवतार भगवान भैरवदेव और उनकी भार्या भैरवी के संवादों के रूप में हैं। भैरवी ने कहा—"हे प्राणनाथ! आपसे मैंने भगवती काली की महिमा और शक्तियों के बारे में सुना। अब मैं सभी दु:खों और पापों को दूर करके सर्वसिद्धियां देने वाले परम पवित्र कवच को सुनने की इच्छुक हूं।"

इस पर भगवान भैरवदेवजी ने कहा—"हे प्राणवल्लभे! मैं तुम्हें जगन्मंगल कवच सुनाता हूं। इस कवच को पढ़ने वाला व्यक्ति तीनों लोकों को मोहित कर लेता है। यह कवच योगियों के हृदय में आनन्द भरने वाला और निशाचरों तक को वर देने वाला है। इसके प्रभाव से ही विष्णु तीनों लोकों के पालनकर्ता, कुबेर धनपति और इन्द्र देवराज बने हैं। हे देवि! इस जगन्मंगल कवच के ऋषि भगवान शिव हैं और देवी दक्षिण कालिका। अनुष्टुप छन्द में रचित यह कवच संसार को मोहित करने, दुष्टों पर विजय पाने और भक्ति-मुक्ति प्रदान करने में समर्थ है।"

जगन्मंगल कवच

शिरो मे कालिका पातु क्रींकारैकाक्षरी परा।
क्रीं क्रीं क्रीं मे ललाटं च कालिका खड्गधारिणी॥
हूं हूं पातु नेत्रयुग्मं ह्रीं ह्रीं पातु श्रुति द्वयम्।
दक्षिणे कालिके पातु घ्राणयुग्मं महेश्वरि॥
क्रीं क्रीं क्रीं रसनां पातु हूं हूं पातु कपोलकम्।
वदनं सकलं पातु ह्रीं ह्रीं स्वाहा स्वरूपिणी॥
द्वाविंशत्यक्षरी स्कन्धौ महाविद्याखिलप्रदा।
खड्गमुण्डधरा काली सर्वाङ्गमभितोऽवतु॥
क्रीं हूं ह्रीं त्र्यक्षरी पातु चामुण्डा हृदयं मम।
ऐं हूं ऊं ऐं स्तन द्वन्द्व ह्रीं फट् स्वाहा ककुत्स्थलम्॥
अष्टाक्षरी महाविद्या भुजौ पातु सकर्तृका।
क्रीं क्रीं हूं हूं ह्रीं ह्रीं पातु करौ षडक्षरी मम॥
क्रीं नाभिं मध्यदेशं च दक्षिणे कालिकेऽवतु।
क्रीं स्वाहा पातु पृष्ठं च कालिका सा दशाक्षरी॥
क्रीं मे गुह्यं सदापातु कालिकायै नमस्ततः।
सप्ताक्षरी महाविद्या सर्वतन्त्रेषु गोपिता॥
ह्रीं ह्रीं दक्षिणे कालिके हूं हूं पातु कटिद्वयम्।
काली दशाक्षरीविद्या स्वाहान्ता चोरुयुग्मकम्॥
ॐ ह्रीं क्रीं में स्वाहा पातु जानुनी कालिका सदा।
काली हृन्नामविधेयं चतुवर्गफलप्रदा॥
क्रीं हूं ह्रीं पातु सा गुल्फं दक्षिणे कालिकेऽवतु।
क्रीं हूं ह्रीं स्वाहा पदं पातु चतुर्दशाक्षरीमम॥
खड्गमुण्डधरा काली वरदाभयधारिणी।
विद्याभिः सकलाभिः सा सर्वाङ्गमभितोऽवतु॥
काली कपालिनी कुल्ला कुरुकुल्ला विरोधिनी।
विपचित्ता तथोग्रोग्रप्रभा दीप्ता घनत्विष॥

नीला घना वलाका च मात्रा मुद्रा मिता च माम्।
एताः सर्वाः खड्गधरा मुण्डमाला विभूषणाः॥
रक्षन्तु मां दिग्विदिक्षु ब्राह्मी नारायणी तथा।
माहेश्वरी च चामुण्डा कोमारी चा पराजिता॥
वाराही नारसिंही च सर्वाश्रयामित भूषणाः।
रक्षन्त स्वायुधेंदिअ मां यथा तथा॥

फलश्रुति

प्राचीन ग्रन्थों में भैरव-भैरवी संवाद के रूप में उपरोक्त परिचय, विनियोग तथा फलश्रुति संस्कृत के श्लोकों में है। परन्तु हम यहां यह फलश्रुति आपकी जानकारी के लिए हिन्दी में दे रहे हैं। कारण स्पष्ट है। कवच का एक भाग होते हुए भी परिचय एवं फलश्रुति का स्तवन अनिवार्य नहीं है। महत्व तो मुख्य भाग के पाठ का है, जिसमें मातेश्वरी दक्षिण कालिका से रक्षा के लिए प्रार्थना की गई है। इसकी फलश्रुति में कहा गया है कि जगन्मंगल नामक यह कवच अत्यन्त दुर्लभ और शक्तिशाली है। इसका पाठ करने वाला मनुष्य त्रैलोक्य विजयी, जग को मोहित करने वाला, महाकवि और समस्त सिद्धियों का स्वामी बन जाता है। इसे भोजपत्र पर लिखकर और स्वर्ण के तावीज में भरकर शिखा, गर्दन अथवा दाईं भुजा पर धारण करके व्यक्ति पुत्रवान, धनवान, श्रीमान तथा अनेक विधाओं में सर्वशक्ति सम्पन्न हो जाता है। जो स्त्री इस कवच को बाईं भुजा या कण्ठ में धारण करती है, वह बांझ होने पर भी अनेक पुत्रों को जन्म देती है। इसके स्तवन के बिना कोई भी साधना सफल नहीं होती। अतः पूजा-आराधना के प्रारम्भ में इसका स्तवन करना चाहिए। प्रारम्भ और अन्त में सात-सात बार पाठ करने पर सभी सिद्धियां सहज ही प्राप्त हो जाती हैं। परन्तु किसी अभक्त अथवा पराए शिष्य को इस कवच के बारे में कभी कुछ नहीं बताना चाहिए।

दक्षिण कालिका कवच

यह कवच भी शास्त्रों में भगवान भैरवदेव और उनकी भार्या भैरवी के संवाद के रूप में है। भैरवी ने भैरवदेवजी से पूछा—"हे नाथ! संकट में पड़े मनुष्यों की रक्षा के लिए कोई खास और आसान उपाय बताइए।"

तब भगवान भैरवदेवजी ने कहा—"जगत के कल्याण के लिए मैं तुम्हें यह अत्यंत गोपनीय कवच बताता हूं। उष्णिक् छन्द में रचित इस कवच के ऋषि भैरवदेव और देवी दक्षिण काली हैं। 'ह्रीं' इसका बीज है, 'हूं' शक्ति है और 'क्रीं' कीलक है। विभिन्न साधनाओं और तान्त्रिक सिद्धियों को सफल करने वाला यह कवच सभी कष्टों एवं बाधाओं को तत्काल दूर कर देता है।"

सहस्रारे महापद्मे कर्पूरधवलो गुरुः।
वामोरुस्थितत्रच्छक्तिः सदा सर्वत्ररक्षतु॥
परमेशः पुरः पातु परापरगुरुस्तथा।
परमेष्ठी गुरुः पातु दिव्य सिद्धिश्च मानवः॥
महादेवी सदा पातु महादेवः सदावतु।
त्रिपुरो भैरवः पातु दिव्यरूपधरः सदा॥
ब्रह्मानन्दः सदापातु पूर्णदेवः सदावतु।
चलश्चितः सदा पातु चेलाञ्चलश्च पातु नाम॥
कुमारः क्रोधनश्चैव वरदः स्मरदीपन।
मायामायावती चैव सिद्धौधाः पातु सर्वदा॥
विमलो कुशलश्चैव भीमसेनः सुधाकरः।
मीनो गोरक्षकश्चैव भोजदेवः प्रजापतिः॥
मूलदेवो रन्तिदेवो विघ्नेश्वर हुताशनः।
सन्तोषः समयानन्दः पातु मां मनवा सदा॥
सर्वेऽप्यानन्दनाथान्तः अम्बान्तां मातरः क्रमात्।
गणनाथः सदा पातु भैरवः पातु मां सदा॥
वटुको नः सदा पातु दुर्गा मां परिरक्षतु।
शिरसः पादपर्यन्तं पातु मां घोर दक्षिणा॥
तथा शिरसि मां काली हृदि मूले च रक्षतु।
सम्पूर्ण विद्यया देवी सदा सर्वत्र रक्षतु॥
क्रीं क्रीं क्रीं वदने पातु हृदि हूं हूं सदावतु।
ह्रीं ह्रीं पातु सदाधारे दक्षिणे कलिके हृदि॥
क्रीं क्रीं क्रीं पातु मे पूर्वे हूं हूं दक्षे सदावतु।
ह्रीं ह्रीं मां पश्चिमे पातु हूं हूं पातु सदोत्तरे॥
पृष्ठेपातु सदा स्वाहा मूला सर्वत्र रक्षतु।
षडङ्गे युवती पातु षडङ्गेषु सदैव माम्॥
मन्त्रराजः सदा पातु ऊर्ध्वाधो दिग्विदिक् स्थितः।
चक्रराजे स्थिताश्चापि देवताः परिपान्तु माम्॥
उग्रा उग्रप्रभा दीप्ता पातु पूर्वे त्रिकोणके।
नीला घना वलाका च तथा परत्रिकोणके॥
मात्रा मुद्रा मिता चैव तथा मध्य त्रिकोणके।
काली कपालिनी कुल्ला कुरुकुल्ला विरोधिनी॥
बहिः षट्कोणके पान्तु विप्रचित्ता तथा प्रिये।
सर्वाःश्यामाः खड्गधरा वामहस्तेन तर्जनीः॥

ब्रह्मी पूर्वदले पातु नारायणी तथाग्निके।
माहेश्वरी दक्षदले चामुण्डा राक्षसेऽवतु॥
कौमारी पश्चिमे पातु वायव्ये चापराजिता।
वाराही चोत्तरे पातु नारसिंही शिवेऽवतु॥
ऐं ह्रीं असिताङ्गः पूवे भैरवः परिरक्षतु।
ऐं ह्रीं रुरुश्चाजिनकोणे ऐं ह्रीं चण्डस्तु दक्षिणे॥
ऐं ह्रीं क्रोधो नैर्ऋतेऽव्यात् ऐं ह्रीं उन्मत्तकस्तथा।
पश्चिमे पातु ऐं ह्रीं मां कपाली वायु कोणके॥
ऐं ह्रीं भीषणाख्यश्च उत्तरेऽवतु भैरवः।
ऐं ह्रीं संहार ऐशान्यां मातृणामङ्कगा शिवाः॥
ऐं हेतुको वटुकः पूर्वदले पातु सदैव माम्।
ऐं त्रिपुरान्तको वटुक आग्नेय्यां सर्वदावतु॥
ऐं वह्नि वेतालो वटुको दक्षिणे मां सदाऽवतु।
ऐं अग्नि जिह्ववटुकोऽव्यात् नैर्ऋत्यांपश्चिमे तथा॥
ऐं कालवटुकः पातु ऐं करालवटुकस्तथा।
वायव्यां ऐं एकः पातु उत्तरे वटकोऽवतु॥
ऐं भीम वटुकः पातु ऐशान्यां दिशि मां सदा।
ऐं ह्रीं ह्रीं हूं फट् स्वाहान्ताश्चतुः षष्टिमातरः॥
ऊर्ध्वाधो दक्षवामार्गे पृष्ठदेशे तु पातु माम्।
ऐं हूं सिंह व्याघ्रमुखी पूर्वे मां परिरक्षतु॥
ऐं कां कीं सर्पमुखी अग्निकोणे सदाऽवतु।
ऐं मां मां मृंगमेषमुखी दक्षिणे मां सदाऽवतु॥
ऐं चौं चौं गजराजमुखी नैर्ऋत्यां मां सदाऽवतु।
ऐं में में विडालमुखी पश्चिमे पातु मां सदा॥
ऐं खौं खौं क्रोंष्टुमुखी वायुकोणे सदाऽवतु।
ऐं हां हां ह्रस्वदीर्घमुखी लम्बोदर महोदरी॥
पातुमामुत्तरे कोण ऐं ह्रीं ह्रीं शिवकोणके।
ह्रस्वजङ्घतालजङ्घ प्रलम्बौष्ठी सदाऽवतु॥
एताः श्मशानवासिन्यो भीषणा विकृताननाः।
पान्तु मां सर्वदा देव्यः साधकाभीष्ट पूरिकाः॥
इन्द्रो मां पूर्वतो रक्षेदाग्नेय्या मग्निदेवता।
दक्षे यमः सदा पातु नैर्ऋत्यां नैर्ऋतिश्च माम्॥
वरुणोऽवतु मां पश्चात् वायुर्मा वायवेऽवतु।
कुवेरश्चोत्तरे पायात् ऐशान्यां तु सदाशिवः॥

ऊर्ध्वं ब्रह्मा सदा पातु अधश्चानन्तदेवता।
पूर्वादिदिक् स्थिताः पान्तु वज्राद्याश्चायुधाश्चमाम्॥
कालिकाऽवतु शिरसि हृदये कालिकाऽवतु।
आधारे काखिका पातु पादयोः कालिकाऽवतु॥
दिक्षु मा कालिका पातु विदिक्षु कालिकाऽवतु।
ऊर्ध्वं मे कालिका पातु अधश्च कालिकाऽवतु॥
चर्मासृङ्मांस मेदाऽस्थि मज्जा शुक्राणि मेऽवतु।
इन्द्रयाणि मनश्चैव देहं सिद्धिं च मेऽवतु॥
अकेशात पादपप्यन्तं कालिका मे सदाऽवतु।
वियति कालिका पातु पथि मा कालिकाऽवतु॥
शयने कालिका पातु सर्वकार्येषु कालिका।
पुत्रान् मे कालिका पातु धनं में पातु कालिका॥

फलश्रुति

इतीदं कवर्चं देवि ब्रह्मलोकेऽपि दुर्लभम्।
तव प्रीत्या मायाख्यातं गोपीनं स्वयोनिवत्॥
तव नाम्नि स्मृते देवि सर्वज्ञ फलं लभेत्।
सर्व पापः क्षयं यान्ति वाञ्छा सर्वत्र सिद्धयति॥
नाम्नाः शत गुणं स्तोत्रं ध्यानं तस्मात् शताधिकम्।
तस्मात् शताधिकोमन्त्रः कवचं तच्छताधिकम्॥
शुचिः समाहितो भूत्वा भक्ति श्रद्धा समन्वितः।
संस्थाप्य वामभागेतु शक्तिं स्वामि परायणाम्॥
रक्तवस्त्रपराधीनां शिवमन्त्रधरां शुभाम्।
या शक्तिः सा महादेवी हररूपश्च साधकः॥
अन्योऽन्य चिन्ताद्देवि देवत्वमुपजायते।
शक्तियुक्तो वजेद्देवीं चक्रे वा मनसापि वा॥
भोगैश्च मधुपर्काद्यै स्ताम्बूलैश्च सुवसितैः।
ततस्तु कवचं दिव्यं पठदेकमनाः प्रिये॥
तस्य सर्वार्थ सिद्धि स्यान्नात्र कार्याविचारणा।
इदं रहस्यं परमं परं स्वस्त्ययनं महत्॥
यः सकृत्तु पठेद्देवि कवचं देवदुर्लभम्।
सर्वयज्ञ फलं तस्य भवेदेव न संशयः॥
संग्रामे च जयेत् शत्रून् मातङ्गानिव केशरी।
नास्त्राणि तस्य शस्त्राणि शरीरे प्रभवन्ति च॥

तस्य व्याधि कदाचित् न दुःखं नास्ति कदाचन।
गतिस्तस्यैवसर्वत्र वायुतुल्यः सदा भवेत्॥
दीर्घायु कामभोगीशो गुरुभक्तः सदाभवेत्।
अहो कवच माहात्म्यं पठमानस्य नित्यशः॥
विनापि नययोगेन योगीश समतां व्रजेत्-
सत्यं सत्यं पुनः सत्यं सत्यं सत्यं पुनः पुनः।
न शोक्रमि प्रभावं तु कवचस्यास्य वर्णितम्॥

रूप निराले हैं मां काली के

यह कवच हिन्दी जैसी आसान संस्कृत भाषा में है। इसलिए इसकी फलश्रुति मूल श्लोकों में दी गई है। इसमें पूर्वोक्त जगन्मंगल कवच की अधिकांश बातें मिलती हैं। इसे विशेष रूप से युद्ध में विजय दिलाने वाला और संकटों को हरने वाला कहा गया है। वैसे सभी कवचों की मुख्य उपयोगिता पूजा, आराधना, उपासना, मन्त्र सिद्धि और तान्त्रिक सिद्धियों को निर्विघ्न पूर्ण करना तथा साधक की हर प्रकार से रक्षा करना है। दुःखों, ऊपरी बाधाओं, बुरी आत्माओं और अन्य संकटों से किसी भी कवच का स्तवन उसी प्रकार साधक की रक्षा करता है, जिस प्रकार प्राचीन काल में कवच पहनने से योद्धा शत्रुओं के अस्त्र-शस्त्रों के वार से बचे रहते थे।

❑❑

12

काली अर्गला स्तोत्र

मकान के दरवाजों पर लगाई जाने वाली सांकल-कुण्डी को अर्गला कहा जाता है। आजकल के दरवाजों की सिटकनियां और शटरों के ताले इस अर्गला के आधुनिक रूप हैं। कवच पहनने पर तो योद्धा का मात्र शरीर ही अस्त्र-शस्त्रों से सुरक्षित होता है, परन्तु मकान का दरवाजा बन्द करके अर्गला लगा देने पर पूरे घर की सुरक्षा निश्चित हो जाती है।

दरवाजे में सांकल-कुण्डी या सिटकनी आदि लगा देने पर न तो कोई व्यक्ति घर के अन्दर आ सकता है और न ही बाहर जा सकता है। ठीक उसी प्रकार कवच के पाठ के पश्चात् इस अर्गला स्तोत्र का स्तवन कर लेने पर साधक ही नहीं, सम्पूर्ण साधना स्थल और सम्पूर्ण प्रक्रिया भी सुरक्षित हो जाती है। अब आप जो भी आराधना, उपासना, यन्त्र-मन्त्र सिद्धि अथवा तान्त्रिक सिद्धि करेंगे, वह निर्विघ्न पूर्ण हो जाएगी। उससे प्राप्त होने वाले सभी पुण्यफल भी पूरी तरह सुरक्षित रहेंगे। अत: सिद्धहस्त उपासक मानसिक उपासना करते समय कवच के बाद अर्गला स्तोत्र का पाठ अवश्य करते हैं। तन्त्र साधना में भी इसका स्तवन अनिवार्य है।

विनियोग और फलश्रुति

विनियोग और फलश्रुति सहित सम्पूर्ण काली अर्गला स्तोत्र निम्नवत है—

ॐ अस्य श्री कालिकार्गलस्तोत्रस्य भैरव ऋषिरनुष्टुप् छन्द श्री कालिका देवता मम सर्वसिद्धिसाधने विनियोगः।

श्री कालिका अर्गला स्तोत्र के ऋषि भैरव हैं, अनुष्टुप छन्द है, कालिका देवता हैं तथा सम्पूर्ण सिद्धियों के साधन में इसका विनियोग है।

ॐ नमस्ते कालिके देवि आद्यबीजत्रय प्रिये।
वशमानय मे नित्यं सर्वेषां प्राणिनां सदा॥
कूर्च्चयुग्मं ललाटे च स्थातु मे शववाहिना।
सर्वसौभाग्यसिद्धि च देहि दक्षिण कालिके॥

भुवनेशरि बीजयुग्मं भ्रूयुगे मुण्डमालिनी।
कन्दर्परूपं मे देहि महाकालस्य गेहिनि॥
दक्षिणे कालिके नित्ये पितृकाननवासिनि।
नेत्रयुग्मं च मे देहि ज्योतिरालेकनं महत्॥
श्रवणे च पुनर्लज्जाबीजयुग्मं मनोहरम्।
महाश्रुतिधरत्वं च मे देहि मुक्त कुन्तले॥
ह्रीं ह्रीं बीजद्वयं देवि पातु नासापुटे मम।
देहि नाना विधिमह्यं सुगन्धिं त्वं दिगम्बरे॥
पुनस्त्रिवीजप्रथमं दन्तोष्ठरसनादिकम्।
गद्यपद्यमयींवाजीं काव्यशास्त्राद्यलंकृताम्॥
अष्टादशपुराणानां स्मृतीनां घोरचण्डिके।
कविता सिद्धिलहरीं मम जिह्वां निवेशय॥
वह्निजाया महादेवि घण्टिकायां स्थिराभव।
देहि मे परमेशानि बुद्धिसिद्धिरसायकम्॥
तर्याक्षरी चित्स्वरूपा या कालिका मन्त्रसिद्धिदा।
सा च तिष्ठतु हृत्पद्मे हृदयानन्दरूपिणी॥
षडक्षरी महाकाली चण्डकाली शुचिस्मिता।
रक्तासिनी घोरदंष्ट्रा भुजयुग्मे सदाऽवतु॥
सप्ताक्षरी महाकाली महाकालरतोद्यता।
स्तनयुग्मे सूर्यकर्णो नरमुण्डसुकुन्तला॥
तिष्ठ स्वजठरे देवि अष्टाक्षरी शुभप्रदा।
पुत्रपौत्रकलत्रादि सुहृन्मित्राणि देहि मे॥
दशाक्षरी महाकाली महाकालप्रिया सदा।
नाभौ तिष्ठतु कल्याणी श्मशानालयवासिनी॥
चतुर्दशार्णवा या च जयकाली सुलोचना।
लिङ्गमध्ये च तिष्ठस्व रेतस्विनी मागाङ्गके॥
गुह्यमध्य हर्षकाला मम तिष्ठ कुलाङ्गन।
सर्वाङ्गे भद्रकाली च तिष्ठ मे परमात्मिके॥
कालि पादयुगे तिष्ठ मम सर्वमुखे शिवे।
कपालिनी च या शक्तिः खड्गमुण्डधरा शिवा॥
पादद्वयांगुलिष्वङ्गे तिष्ठ स्वपापनाशिनि।
कुल्लादेवी मुक्तकेशी रोमकूपेषु वैमम॥
तिष्ठतु उत्तमाङ्गे च कुरु कुल्ला महेश्वरी।
विरोधिनी विराधे च मम तिष्ठतु शंकरी॥

विप्रचित्तै महेशानि मुण्डधारिणि तिष्ठमाम्।
मार्गे दुर्मार्गगमने उग्रा तिष्टतु सर्वदा॥
प्रभादिक्षु विदिक्षुमाम् दीप्तां दीप्तं करोतुमाम्।
नीला शक्तिश्च पातालेघना चाकाशमण्डले॥
पातु शक्तिर्वलाका मे भुवं मे भुवनेश्वरी।
मात्रा मम कुले पातु मुद्रा तिष्ठतु मन्दिरे॥
मिता मे योगिनी या च तथा मित्रकुलप्रदा।
सा मे तिष्ठतु देवेशि पृथिव्यां दैत्यदारिणी॥
ब्राह्मी ब्रह्मकुले तिष्ठ मम सर्वार्थदायिनी।
नारायणी विष्णुमाया मोक्षद्वारे च तिष्ठ मे॥
माहेश्वरी वृषारूढा काशिका पुरवासिनी।
शिवतां देहि चामुण्डे पुत्रपौत्रादि चानघे॥
कौमारी च कुमाराणां रक्षार्थ तिष्ठ मे सदा।
अपराजिता विश्वरूपा जये तिष्ठ स्वभाविनी॥
वाराही वेदरूपा च सामवेद परायणा।
नारसिंही नृसिंहस्य वक्षःस्थल निवासिनी॥
सा मे तिष्ठतु देवेशि पृथिव्यां दैत्यदारिणी।
सर्वेषां स्थावरादीनां जङ्गमानां सुरेश्वरी॥
स्वेदजोद्भिजण्डजानां चराणां च भयादिकम्।
विनाश्याप्यभिमतिं देहि दक्षिण कालिके॥
य इदं चार्गलं देवि यः पठत्कालिकार्चने।
सर्वसिद्धिमवाप्नोति खेचरो जायते तु सः॥

॥ इति श्रीकालिकार्गला स्तोत्रं समाप्तम्॥

❑❑

13

श्री काली कीलक

साधक और साधना-स्थल के साथ ही सम्पूर्ण साधना को सफल बनाने में कवच तथा अर्गला स्तोत्र से अधिक महत्वपूर्ण एवं शक्तिशाली भूमिका निभाता है—मातेश्वरी काली के कीलक का स्तवन। शास्त्रों का कथन है कि मां काली की आराधना, उपासना, यन्त्र-मन्त्र की सिद्धि और तान्त्रिक साधनाएं करते समय क्रमशः इन तीनों का स्तवन करना चाहिए। साधना के अन्त में एक या अधिक बार पुनः कीलक का स्तवन किया जाता है। शास्त्र तो यहां तक कहते हैं कि यदि कोई व्यक्ति मां काली की आराधना-उपासना नहीं भी करता, परन्तु वह इस कीलक का नियमपूर्वक पांच, सात, ग्यारह, इक्कीस अथवा इकत्तीस बार प्रतिदिन जप करता है, तब भी मातेश्वरी उसे अपने सबसे प्रिय पुत्रों में से एक मान लेती हैं।

विनियोग तथा फलश्रुति

विनियोग और फलश्रुति सहित पूरा कीलक इस प्रकार है—

ॐ अस्य श्रीकालिका कीलकस्य सदाशिव ऋषिरनुष्टुप् छन्दः श्रीदक्षिण कालिका देवता सर्वसिद्धि साधने कीलकन्यासे जपे विनियोग।

श्री कालिका कीलक के ऋषि सदाशिव हैं, अनुष्टुप् छन्द हैं, दक्षिण कालिका देवता हैं तथा सर्वसिद्धि साधन में इस कीलकन्यास के जप का विनियोग है।

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि कीलकं सर्वकामदम्।
कालिकायाः परं तत्वं सत्यं सत्यं त्रिभिर्मम॥
दुर्वासाश्च वशिष्ठश्च दत्तात्रेयी बृहस्पतिः।
सुरेशो धनदश्चैव अङ्गिराश्च भृगूद्वहः॥
च्यवनः कार्तवीर्यश्च कश्यपोऽथ प्रजापतिः।
कीलकस्य प्रसादेन सर्वेश्वर्यमवाप्नुयुः॥

अब मैं समस्त कामनाओं को देने वाले कालिका कीलक के बारे में बताता हूं। यह परमतत्व है—इसे सत्य, सत्य और सत्य समझना चाहिए। महर्षि दुर्वासा, वशिष्ठ, दत्तात्रेय, बृहस्पति, इन्द्र, कुबेर, अंगिरा, भृगु, च्यवन, कार्तवीर्य, कश्यप तथा प्रजापति आदि ने इसी कीलक की कृपा से समस्त ऐश्वर्यों को प्राप्त किया है।

ॐ कारं तु शिखाप्रान्ते लम्बिका स्थान उत्तमे।
सहस्त्रारे पङ्कजे तु क्रीं क्रीं क्रीं वाग्विलासिनी॥
कूर्चवीजयुगं भाले नाभौ लज्जायुगं प्रिये।
दक्षिणे कालिके पातु स्वनासापुटयुग्मके॥
हूंकारद्वन्द्वं गण्डे द्वे द्वे माघे श्रवणद्वये।
आद्यातृतीयं विन्यस्य उत्तराधर सम्पुटे॥
स्वाहा दशनमध्ये तु सववणन्नियसेत् क्रमान्।
मुण्डमाला असिकरा काली सर्वार्थसिद्धिदा॥
चतुरक्षरी महाविद्या क्रीं क्रीं हृदय पङ्कजे।
ॐ हूं ह्रीं क्रीं ततो हूं फट् स्वाहा च कंठकूपके॥
अष्टाक्षंरी कालिका या नाभौ विन्यस्य पार्वति।
क्रीं दक्षिणे कालिके क्रीं स्वाहान्ते च दशाक्षरी॥
मम बाहु युगे तिष्ठ मम कुण्डलिकुण्डले।
हूं ह्रीं मे वह्निजाया च हूं विद्या तिष्ठ पृष्ठके॥
क्रीं हूं ह्रीं वक्षोदेशे च दक्षिणे कालिके सदा।
क्रीं हूं ह्रीं वह्निजायाऽन्ते चतुर्दशाक्षरेश्वरी॥
क्रीं तिष्ठ गुह्यदेशे मे एकाक्षरी च कालिका।
ह्रीं हूं फट् च महाकाली मूलाधार निवासिनी॥
सर्वरोमाणिमे काली करांगुल्यङ्कपालिनी।
कुल्ला कटिं कुरुकुल्ला तिष्ठ तिष्ठ सकली मम॥
विरोधिनी जनुयुग्मे विप्रचित्ता पदद्वये।
तिष्ठमे च तथा चोग्रा पादमूले न्यसेत्क्रमात्॥
प्रभा तिष्ठतु पादाग्रे दीप्ता पादांगुलीनपि।
नीली न्यसेद्बिन्दुदेशे घना नादे च तिष्ठ मे॥
वलाका विन्दुमार्गे च न्यसेत्सर्वाङ्ग सुन्दरी।
मम पातालके मात्रा तिष्ठ स्वकुल कायिके॥
मुद्रा तिष्ठ स्वमर्त्येमां मितास्वङ्गाकुलेषु च।
एता नृमुण्डमालास्त्रग्धारिण्यः खड्गपाणयः॥
तिष्ठन्तु मम गात्राणि सन्धिकूपानि सर्वशः।
ब्राह्मी च ब्रह्मरंध्रे तु तिष्ठस्व घटिका परा॥
नारायणी नेत्रयुगे मुखे माहेश्वरी तथा।
चामुण्डा श्रवणद्वन्द्वे कौमारी चिबुके शुभे॥
तथा सुन्दरमध्ये तु तिष्ठ मे चापराजिता।
वाराही चास्थिसन्धौ च नारसिंही नृसिंहके॥

आयुथानि गृहीतानि तिष्ठस्वेतानि मे सदा।
इति ते कीलकं दिव्यं नित्यं यः कीलयेत्स्वकम्॥
कवचादौ महेशानि तस्य सिद्धिर्न संशयः।
श्मशाने प्रेतयोर्वापि प्रेतदर्शनतत्परः॥
यः पठेत्पाठयेद्वापि सर्वसिद्धीश्वरो भवेत्।
सवाग्मी धनवान्दक्षः सर्वाध्यक्ष कुलेश्वरः॥
पुत्र बान्धव सम्पन्नः समीर सदृशो बले।
न रोगवान् सदा धीरस्तापत्रय निषूदनः॥
मुच्यते कालिका पायात् तृणराशिमिवानल।
न शत्रुभ्यो भयं तस्य दुर्गमेभ्यो न बाध्यते॥
यस्य देशे कीलकं तु धारणं सर्वदाम्बिके।
तस्य सर्वार्पसिद्धिः स्यात्सत्यं सत्यं वरानने॥
मन्त्राच्छतगुणं देवि कवचं यन्मयोदितम्।
तस्माच्छतगुणं चैव कीलकं सर्वकामदम्॥
तथा चाप्यसिता मन्त्रं नील सारस्वते मनौ।
न सिध्यति वरारोहे कीलकार्गलके विना॥
विहीने कीलकार्गलके काली कवचं यः पठेत्।
तस्य सर्वाणि मन्त्राणि स्तोत्राण्य सिद्धये प्रिये॥

॥ इति श्रीकालिका कीलकम् समाप्तम्॥

इस कीलक के विनियोग तथा महत्व के मन्त्रों के साथ इनकी हिन्दी में व्याख्या दी गई है, ताकि इनका स्तवन करते समय मन ही मन भाव का चिन्तन करते रहें। पूरे कीलक और अन्य स्तोत्रों को भी आप इसी प्रकार अच्छी तरह समझ लीजिए। अर्थ के चिन्तन और भावों में डूबे बगैर किसी भी स्तोत्र का स्तवन अथवा मन्त्रों का जप अपना पूरा प्रभाव नहीं दिखा पाता। बिना अर्थ समझे अथवा भावशून्य होकर स्तोत्रों का स्तवन करना नगण्य एवं निरर्थक होता है। यदि मन भी भटकता रहे तो मात्र मुंह की कसरत और दिखावा बनकर रह जाते हैं—सभी जप, भजन, आराधना अथवा सिद्धि की कोई भी प्रक्रिया।

❑❑

14

उपासना तथा तंत्र साधना का पूर्वार्द्ध

भावना पर आधारित पूर्ण रूप से एक मानसिक प्रक्रिया है मातेश्वरी काली अथवा किसी भी अन्य इष्टदेव की उपासना। उपासना करते समय हम किसी लौकिक वस्तु—उपास्यदेव की प्रतिमा अथवा चित्र तक का प्रयोग नहीं करते। वैसे भी सभी लौकिक वस्तुओं का भरपूर मात्रा में उपयोग करते हुए मातेश्वरी की षोडशोपचार आराधना की जाए अथवा मन्दिर में सामान्य रूप से प्रसाद चढ़ाया जाए, महत्व हमारी समर्पण भावना और मन की एकाग्रता का होता है। मातेश्वरी काली इस ब्रह्माण्ड की सम्पूर्ण सम्पदा की स्वामिनी ही नहीं, बल्कि निर्मात्री और दात्री भी हैं। उन्होंने हमको यह जीवन तक दिया है, फिर हम उन्हें दे ही क्या सकते हैं। हम तो मात्र अपने समर्पण और अनुराग के भक्तिभाव से उनकी आराधना अथवा उपासना करते हैं। हमारा मन-मस्तिष्क जितनी एकाग्रता से उनके ध्यान में तल्लीन रहता है, उतना ही फल हमें उपासना अथवा किसी अन्य साधना का मिलता है। मन की एकाग्रता के अभाव में सम्पूर्ण आराधना, उपासना, मन्त्रों का जप अथवा कोई भी तान्त्रिक साधना मात्र मुंह की कसरत बनकर रह जाती है। मन को एकाग्र और वातावरण को भक्तिमय तथा पवित्र बनाने के लिए धर्मशास्त्रों ने एक बहुत ही अच्छा मार्ग प्रस्तुत किया है। वह यह कि वास्तविक आराधना-उपासना प्रारम्भ करने से पहले कुछ धार्मिक अनुष्ठान और सभी देवताओं की पूजा-आराधना भी कर ली जाए। यह सभी प्रारम्भिक क्रियाएं पूजा, आराधना, उपासना, मन्त्र सिद्धि और तान्त्रिक साधनाओं का अनिवार्य अंग हैं। इन्हें पूर्ण करने के बाद ही आप मातेश्वरी का ध्यान करके अन्य वस्तुओं और सेवाओं का समर्पण करें।

ये सभी प्रक्रियाएं एक ही बैठक में एक साथ पूरी की जाती हैं। बीच में एक क्षण का भी व्यवधान हमारा ध्यान भंग कर सकता है। हमने इन प्रक्रियाओं को प्रस्तुत अध्याय तथा आगामी अध्याय में बांटा है। इसे दो अध्यायों में वर्गीकृत करने का एक कारण यह है कि षोडशोपचार आराधना अथवा उपासना करते समय तो ये सभी प्रक्रियाएं की ही जाती हैं, परन्तु दशोपचार पूजा करते समय केवल आगामी

अध्याय में वर्णित कार्य ही किए जाते हैं। दूसरा कारण—किसी विशिष्ट प्रयोजन के लिए निर्धारित संख्या में मन्त्रों का जप अथवा यन्त्र-मन्त्र की सिद्धि करते समय आगामी अध्याय में वर्णित कोई कार्य नहीं किया जाता, परन्तु इस अध्याय में वर्णित सभी प्रक्रियाओं के बाद ही मन्त्रों का जप, हवन अथवा कोई अन्य सिद्धि प्रारम्भ की जाती है। एक बात का आप विशेष ध्यान रखें कि हमने इन दोनों अध्यायों में पूजन सामग्री और उसे अर्पित करने के विधि-विधान प्रत्येक मन्त्र के साथ दिए हैं। इसका कारण स्पष्ट है। यद्यपि उपासना करते समय हमारे पास कोई नहीं होता, हम अपने आसन पर अविचल बैठे मन-ही-मन मन्त्रों का स्तवन करते हैं, फिर भी हमारे मन में उन वस्तुओं के समर्पण का भाव होना चाहिए। अत: प्रारम्भ में पूर्ण विधि-विधान से कुछ मास तक मातेश्वरी काली की षोडशोपचार आराधना करने के पश्चात् ही आप मानसिक उपासना प्रारम्भ करें ताकि उपासना करते समय सतत् रूप से समर्पण के भाव आपके मन में आते रहें। वैसे यह आराधना आपकी मंजिल नहीं, अपितु उपासना का एक अनिवार्य पूर्वाभ्यास अवश्य है।

स्वस्तिवाचन अर्थात् शांतिपाठ

षोडशोपचार आराधना, मानसिक उपासना और मंत्र सिद्धि अथवा तंत्र साधना ही नहीं, बल्कि प्रत्येक धार्मिक क्रियाकलाप का प्रारम्भ स्वस्तिवाचन से होता है। यही कारण है कि हम मातेश्वरी काली की विधिवत आराधना करें अथवा मानसिक उपासना, सबसे पहले स्वस्तिवाचन किया जाता है। अपने साथ ही सम्पूर्ण विश्व के कल्याण की कामना और सभी देवी-देवताओं को नमस्कार इस स्वस्तिवाचन का पर्याय है। आप भगवती काली माई के किसी भी स्वरूप की षोडशोपचार आराधना, मानसिक उपासना, बड़ी संख्या में मन्त्रों का जप अथवा कोई भी तान्त्रिक साधना करें, सबसे पहले यह स्वस्तिवाचन अवश्य करना चाहिए—

ॐ स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वतिनः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्तिनस्ताक्ष्र्यो अरिष्टनेमिः स्वस्तिनो वृहस्पतिर्द्रधातु॥ 1॥ ॐ पयः पृथिव्यां पय ओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधाः। पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम्॥ 2॥ ॐ विष्णोरराटमसि विष्णोः श्नप्त्रेस्थो विष्णोः स्यूरसि विष्णोर्ध्रुवोसि वैष्णवमसि विष्णवेत्वा॥ 3॥ ॐ अग्निर्देवता वातोदेवता सूर्योदेवता चन्द्रमादेवता वसवोदेवता रुद्रोदेवता आदित्योदेवता मारुतोदेवता विश्वेदेवादेवता वृहस्पतिर्देवतेन्द्रोदेवता वरुणोदेवता॥ 4॥ ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षंॐ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्व ॐ शान्तिः शान्तिरेवशान्तिः सामा शान्तिरेधिः। ॐ विश्वानिदेव सवितर्दुरितानि परासुव यद्भद्रं तन्न आसुव॥ 5॥ शान्तिः शान्तिः शान्तिर्भवतु॥

हमारे धर्म में तैंतीस कोटि देवता हैं और सभी हमारे लिए पूज्यनीय। इन देवताओं की संयुक्त आराधना और विश्व शान्ति की प्रार्थना के पूर्वोक्त पांच मन्त्रों के स्तवन के साथ ही आराधना, उपासना अथवा तन्त्र साधना की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है। अन्तिम मन्त्र में जहां-जहां 'ॐ' चिह्न आया है, वहां-वहां 'ग्वं' के समान उच्चारण किया जाता है।

स्वस्तिवाचन के बाद अग्रलिखित तीन मन्त्रों का स्तवन करते हुए जल से आचमन करें तथा अपने मस्तक पर तीन बार जल छिड़कें। तत्पश्चात् दोनों हाथों को जल से धो लें। शायद यह दोहराने की आवश्यकता नहीं है कि जल का प्रयोग षोडशोपचार आराधना करते समय ही किया जाएगा। उपासना करते समय न तो आपके पास जल होता है और न ही कोई कार्य स्थूल रूप में किया जाता है। आचमन करते तथा जल छिड़कते समय इन तीन मन्त्रों का स्तवन कीजिए—

ॐ केशवाय नमः स्वाहा।
ॐ नारायणाय नमः स्वाहा।
ॐ माधवाय नमः स्वाहा।

पवित्रीकरण एवं भूतशुद्धि

भली-भांति स्नान करने के पश्चात् धुले हुए वस्त्र पहनकर पूजा, आराधना, उपासना अथवा मन्त्रों का जप किया जाता है। पूजा-उपासना का स्थान पहले ही अच्छी तरह स्वच्छ एवं शुद्ध कर लिया जाता है। लेकिन आराधना, उपासना अथवा मन्त्र साधना करने से पूर्व नीचे दिए गए दो मन्त्रों का स्तवन करके स्वयं को और फिर आराधना-उपासना के स्थान को शुद्ध एवं पवित्र करें—

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स वाह्याभ्यन्तरः शुचिः॥

उपरोक्त मन्त्र का स्तवन करते हुए अपने सिर पर तीन बार जल छिड़कें। फिर आचमन करके हाथ धोने के बाद इस मन्त्र से भूतशुद्धि करें—

ॐ अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भुविसंस्थिता।
ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया॥

गणेशजी का ध्यान और पूजन

किसी भी धार्मिक कृत्य को करते समय सर्वप्रथम गणेशजी का पूजन किया जाता है। काली उपासना भी इसका अपवाद नहीं है। यद्यपि गणेशजी का ध्यान करते समय केवल मन्त्र ही पढ़े जाएंगे, परन्तु भावलोक में अपने दाएं हाथ में दूर्वा, अक्षत, पुष्प तथा जल लेकर आप इन मन्त्रों का स्तवन कीजिए और अन्त में गणेशजी को अर्पित कर दीजिए—

विघ्न-विनाशक एवं ऋद्धि-सिद्धिदाता गणेशजी

ॐ सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः।
लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः॥
धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः।
द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छुणुयादपि॥
विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा।
संग्रामे संकटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते॥
शुक्लाम्भरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम्।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्वविघ्नो पशान्तये॥

संकल्प वाक्य यानी पूजा-परिचय

विघ्न-विनाशक ऋद्धि-सिद्धिदाता गणेशजी के ध्यान और पूजन के बाद मातेश्वरी काली के चरणों में अपना एवं पूजा का समय, दिन व स्थान आदि का विवरण रखा जाता है। संकल्प वाक्य नामक यह विवरण गद्य रूप में है। पूजन-सामग्री का प्रयोग करके पूजा-आराधना करते समय दाएं हाथ में तिल, कुशा, घास, अक्षत अर्थात् चावल, यज्ञोपवीत और जल लेकर निम्न संकल्प वाक्यों का स्तवन करते हैं। परन्तु उपासना करते समय कोई वस्तु आपके पास नहीं होती। अतः केवल भावलोक में ही ये वस्तुएं आप अपने हाथ में लेंगे। स्थूल रूप में तो संकल्प के इन वाक्यों का मन-ही-मन स्तवन किया जाएगा—

हरिः ॐ तत्सत्। नमः परमात्मने श्री पुराणपुरुषोत्तमाय श्रीमद्भगवते महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्याद्य ब्रह्मणो द्वितीय प्रहरार्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वत मन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलि प्रथमचरणे जम्बूदीपे भरतखण्डे भारतवर्षे आर्य्यावर्तान्तर्गत क्षेत्रे सृष्टिसंवत्सराणां मध्ये 'अमुक' नाम्नि संवत्सरे, 'अमुक' अयने, 'अमुक' ऋतौ, 'अमुक' मासे, 'अमुक' पक्षे, 'अमुक' तिथौ, 'अमुक' नक्षत्रे, 'अमुक' योगे, 'अमुक' वासरे, 'अमुक' राशिस्थे सूर्ये, चन्द्रे, भौमे, बुधे, वृहस्पतौ, शुक्रे, शनौ, राहो, कैतो एवं गुण विशिष्टायां तिथौ, 'अमुक' गोत्रोत्पन्न 'अमुक' नाम्नि ऽहं धर्मार्थकाममोक्षहेतवे श्रीगणपत्यादि सह मातेश्वरी काली पूजनमहं करिष्यते।

इस संकल्प वाक्य में पूजा के दिन, तिथि, अपने नाम एवं गोत्र आदि का परिचय देने वाले शब्द भी जोड़े जाते हैं। जहां-जहां 'अमुक' शब्द प्रयुक्त हुआ है, वहां-वहां क्रमशः विद्यमान संवत्सर, अयन, ऋतु, मास, पक्ष, तिथि, नक्षत्र, योग, दिन, सूर्यादि नवग्रहों की स्थिति वाली राशियों के नाम, अपने गोत्र तथा अपने नाम का उच्चारण करना चाहिए। ब्राह्मण साधक को 'शर्माऽहं' क्षत्रिय को 'वर्माऽहं', वैश्य को 'गुप्तोऽहं' तथा शूद्र को 'दासोऽहं' शब्द का उच्चारण अपने नाम के साथ करना चाहिए।
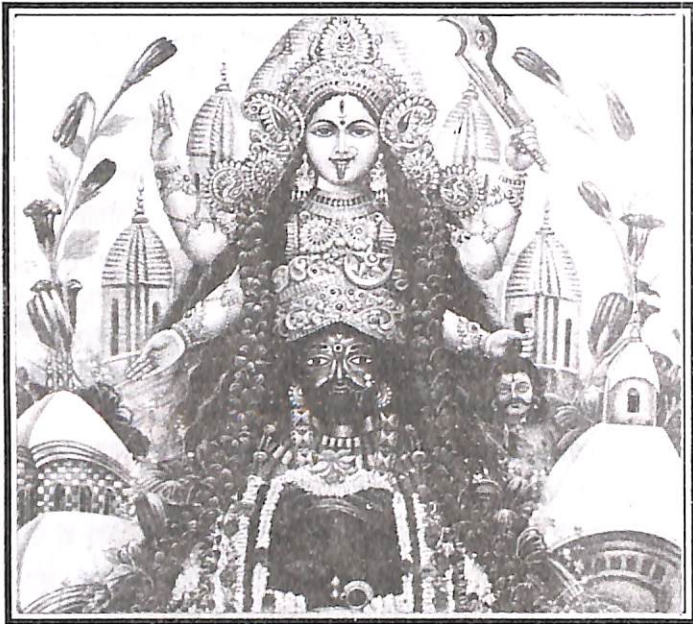
सभी सम्पदाओं की निर्मात्री एवं दात्री हैं—मातेश्वरी काली

मातेश्वरी काली का ध्यान

पूजा-आराधना अथवा उपासना ही नहीं, सभी धार्मिक अनुष्ठानों में संकल्प

वाक्य तक के मन्त्रों का स्तवन समान रूप से किया जाता है। लेकिन दशोपचार पूजा में ऐसी कोई क्रिया नहीं की जाती। कुछ व्यक्ति षोडशोपचार आराधना करते समय भी मातेश्वरी के ध्यान से ही पूजा प्रारम्भ कर देते हैं, परन्तु ऐसा करना उचित नहीं है। आप मातेश्वरी की उपासना करें अथवा यन्त्र-मन्त्र की कोई भी सिद्धि—स्वस्तिवाचन से संकल्प वाक्य तक के सभी विधि-विधान अवश्य करें। आपको भगवती काली का जो भी रूप-स्वरूप अधिक प्रिय हो, उसकी झांकी मन-मन्दिर में बसाकर मन्त्रों के इन दो समूहों में से किसी भी एक के स्तवन द्वारा मातेश्वरी काली का ध्यान कीजिए—

या कालिका रोग हरा सुवन्द्या वैश्यैः समस्तै र्व्यवहारदक्षैः।
जनैर्जनानां भयहारिणी च सा देवमाता मयि सौख्यदात्री॥ 1॥
या माया प्रकृतिः शक्तिश्चण्डमुण्ड विमर्दिनी।
सा पूज्या सर्वदेवैश्च ह्यस्माकं वरदाभव॥ 2॥
विश्वेश्वरित्वं परिपासिविश्वं विश्वात्मिका धारयसीति विश्वम्।
विश्वेशवन्द्याभवती भवन्ति विश्वाश्रया ये त्वयि भक्तिनम्राः॥ 3॥
देवि प्रपन्नार्तिहरे प्रसीद प्रसीद मातर्जगतोऽखिलस्य।
प्रसीद विश्वेश्वरि पाहि विश्वं त्वामीश्वरी देवि चराचरस्य॥ 4॥
या श्रीः स्वयं सृकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मीः
पापात्मनां कृतिधियां हृदयेषु बुद्धि।
श्रद्धां सतां कुलजन प्रभवश्य लज्जा-
तां त्वां नताः स्म परिपालय देवि विश्वम्॥ 5॥

एक अन्य मंत्र

दण्डं कमण्डलुं पश्चादक्षसूत्रं महाभयम्।
विभ्रती कनकच्छाया ब्रह्म कृष्णा जिनोज्ज्वला॥
शूलं परश्वछङ् क्षुद्र दुन्दुभीं वृकरोटिकाम्।
वहंती हिमसंकाशा ध्येया माहेश्वरी शुभा॥
अंकुशं दण्ड खट्वांगो पाशं च दधती करैः।
बन्धूक पुष्प संकाशा कुमारी कामदायिनी॥
चक्रं घण्टां कपालं च शंखं च दधती करैः।
तमालश्यामला ध्येया वैष्णवी विभ्रमोज्ज्वला॥
मुशलं करवालं च खेटकं दधती हलम्।
करैश्चतुर्भिर्वाराही ध्येया कालधनच्छविः॥
अंकुशं तोमरं विद्युत्कुलिशं विभ्रती करैः।
इन्द्र नीलनिभेन्द्राणी ध्येया सर्वासमृद्धिदा॥
शूलं कृपाणं नृशिरः कपालं दधती करैः।
मुण्डस्यङ् मण्डिता ध्येया चामुण्डा रक्त विग्रहा॥

अक्षस्यजं बीजपूरं कपालं दधती करैः।
वहन्ती हेम संकाशा मोहलक्ष्मीस्समीरिता॥

आप मातेश्वरी का ध्यान किसी भी मन्त्र के द्वारा करें, उनके रूप-स्वरूप का सतत् चिन्तन करते रहना परम आवश्यक है। आपको मातेश्वरी के स्वरूप की जो भी झांकी अधिक प्रिय हो, उसी को हृदय में बसाकर, ध्यान के मन्त्रों का मन ही मन स्तवन कीजिए। उपासना और मन्त्र-जप करते समय सभी मन्त्रों का स्तवन मन ही मन किया जाता है। इसमें ध्वनि का निकलना तो दूर, होंठों को हिलाने तक की आज्ञा शास्त्रों में नहीं है। माता की शक्तियों, कार्यों और उनके रूप-स्वरूप का हृदय की गहराई से ध्यान करते हुए जब आप ध्यान के मन्त्रों का स्तवन करते हैं, तो अपने-आपको भावलोक में अनुभव करते हैं। तब लगता है कि मातेश्वरी काली आपकी सेवा स्वीकार करने के लिए आ गई हैं और आपके सम्मुख खड़ी हैं। परन्तु ऐसी स्थिति प्रारम्भ में नहीं, कुछ दिनों तक नियमित रूप से उपासना करने पर ही आती है। प्रारम्भिक दिनों में आप उपासना करते समय मातेश्वरी काली का कोई चित्र भी अपने सम्मुख रख सकते हैं। परन्तु आप उस चित्र की पूजा न करें, बल्कि ध्यान के मन्त्र पढ़ते समय उसे भक्तिभाव से देखते रहें, ताकि मातेश्वरी की मधुर झांकी आपके हृदय में बसने में सुविधा हो। आगे की सभी क्रियाएं आप नयन बन्द करके अथवा अपनी दृष्टि नासिका के अग्रभाग पर जमाकर ही करें, जिससे मन एकाग्र बना रहे।

आराधना अथवा उपासना करते समय आप बिना एक क्षण का विलम्ब किए आगामी अध्याय में वर्णित सभी प्रक्रियाएं प्रारम्भ कर दीजिए। मन्त्रों का जप करते समय ध्यान के बाद सीधे ही उस मन्त्र का जप प्रारम्भ कर दिया जाता है जबकि तान्त्रिक सिद्धि करते समय आसन-समर्पण के बाद साधना प्रारम्भ की जाती है। जहां तक दशोपचार पूजा का प्रश्न है, उसमें केवल आगामी अध्याय में वर्णित सभी मन्त्रों का स्तवन और वर्णित कार्य तो किए जाते हैं, परन्तु इस अध्याय में वर्णित कोई क्रिया-ध्यान नहीं किया जाता। पूजा करते समय मातेश्वरी की मूर्ति अथवा चित्र आराधक के पास होता है। अतः वह सभी वस्तुएं उस विग्रह को व्यावहारिक रूप में अर्पित करता ही रहता है, मन्त्र भी प्रायः स्पष्ट रूप में स्तवन करता है। यहां विशेष ध्यान रखने की बात यह है कि पूजा करते समय भी मन्त्रों का उच्चारण अनिवार्य नहीं है, उसे मात्र मन ही मन स्तवन किया जा सकता है। परन्तु उपासना अथवा मन्त्रों का जप करते समय मुंह से स्वर निकलने, शरीर के किसी भी अंग के हिलने, होंठों के फड़कने अथवा आंखों को खुला रखने का शास्त्रों में निषेध है।

❑❑

15

आराधना-उपासना का उत्तरार्द्ध

कुछ मास तक नियमित रूप से उपासना करते रहने पर हमारा हृदय इतना निर्मल हो जाता है कि मातेश्वरी का ध्यान करते ही वे हमें भावलोक में स्पष्ट दर्शन देने लगती हैं। कालान्तर में यह स्थिति हो जाती है कि उपासक मन की आंखों से मातेश्वरी को देखने लगता है। जिस प्रकार वह उन्हें देखकर पुलकित होता है, उसी तरह मातेश्वरी काली भी उसे पुत्र भाव से देखती हैं। उस समय उपासक यह भी देखता है कि देवलोक से देवताओं ने एक दिव्य और अलौकिक सिंहासन मातेश्वरी के बैठने के लिए उसके ठीक सामने लाकर रख दिया है। देवी-देवताओं ने दो भव्य चौकियां उसके दाईं और बाईं ओर रख दी हैं। दाईं ओर रखी चौकी पर सोने-चांदी के पात्रों में पूजा की सामग्री, वस्त्र, फल-फूल, आभूषण और श्रृंगार का सामान है। उपासक पहले तो मातेश्वरी काली से निकट आने तथा आदर सहित उस आसन पर विराजमान होने की प्रार्थना करता है। इसके बाद दाईं ओर की चौकी से वह एक-एक वस्तु उठाता है और बाईं ओर रखी चौकी पर खाली पात्र रखता जाता है। उपासना के अन्तिम चरण तक यह प्रक्रिया चलती रहती है। परन्तु यह सब कुछ केवल भावलोक में ही होता है। मन के भटकते ही यह अलौकिक दृश्य आंखों के आगे से हट जाता है और वह लौट आता है, इस नश्वर संसार में। इस दिव्य दृश्य का प्रतिदिन रसास्वादन ही उपासना का सबसे बड़ा प्रयोजन है और उपासक की सफलता की पहचान भी। वैसे सच्चा उपासक ही यह दिव्य दृश्य देख पाता है, जबकि अन्य व्यक्तियों को तो लगता है कि उपासना करने वाला व्यक्ति शायद बैठे-बैठे सो गया है।

आह्वान एवं आसन समर्पण

मातेश्वरी काली के ध्यान के पश्चात् उनसे एकदम निकट आने की प्रार्थना इस मन्त्र के स्तवन द्वारा की जाती है—

आगच्छ वरदे देवि दैत्यदर्पनिषूदिनि।
पूजां गृहाण सुमुखि नमस्ते शंकरप्रिये॥

पूर्वोक्त मन्त्र द्वारा भगवती काली का आह्वान करने के पश्चात् निम्न मन्त्र के स्तवन से देवताओं द्वारा लाकर रखे गए दिव्य सिंहासन पर उनसे विराजमान होने के लिए प्रार्थना कीजिए—

अनेक रत्नसंयुक्तं नानामणिगणान्वितम्।
कार्तस्वरमयं दिव्यमासनं प्रतिगृह्यताम्॥

पाद्य, अर्घ्य और आचमनीय समर्पण

देवताओं द्वारा लाकर रखे गए उस दिव्य सिंहासन पर अपनी इष्टदेव मातेश्वरी काली को विराजमान देखकर आप गद्गद् हो रहे हैं। इसी समय आपके दिल में यह भाव जाग्रत होता है कि मातेश्वरी को आपके पास आए हुए पर्याप्त समय हो चुका है, अत: अब उनकी पूजा और सेवा प्रारम्भ कर देनी चाहिए। इस भावना से भरकर आप उनके चरण पखारने की प्रक्रिया प्रारम्भ करेंगे। भावलोक में आप कल्पना करते हैं कि दाईं ओर की चौकी से शीतल-सुगन्धित जल-पात्र बाएं हाथ से उठाकर मातेश्वरी के चरणों में धार से डाल रहे हैं और दाएं हाथ से उनके चरण पखार रहे हैं। भावलोक में यह कार्य करते हुए आप मन-ही-मन इस मन्त्र का स्तवन कीजिए—

गंगादिसर्वतीर्थेभ्यो मया प्रार्थनयाहृतम्।
तोयमेतत्सुखस्पर्श पाद्यार्थं प्रतिगृह्यताम्॥

पूजा-आराधना करते समय मूर्ति अथवा चित्र के निकट भूमि पर चन्द बूंदें जल टपकाकर पाद्य से लेकर स्नान तक की सभी क्रियाएं की जाती हैं। परन्तु उपासना करते समय कोई वस्तु, यहां तक कि मातेश्वरी का चित्र भी हमारे पास नहीं होता। अत: सभी कार्य भावनात्मक रूप में ही किए जाते हैं। भावलोक में मातेश्वरी के चरण पखारने के बाद आप उस बर्तन को बाईं ओर रखी खाली चौकी पर रख देते हैं। फिर हाथ धोकर दूसरा सुगन्धित गंगाजल से भरा पात्र अर्घ्य देने के लिए उठा लेते हैं। भावलोक में आप यह भी देखते हैं कि मातेश्वरी दोनों हाथों की अंजलि बनाकर उस अर्घ्य को ग्रहण कर रही हैं। अर्घ्य समर्पण का मन्त्र निम्न है—

गन्धपुष्पाक्षतैर्युक्तमर्घ्यं सम्पादितं मया।
गृहाण त्वं महादेवि प्रसन्ना भव सर्वदा॥

अब मुझे मातेश्वरी को जल पिलाना चाहिए—इस भावना के साथ आप अर्घ्य पात्र को बाईं ओर की चौकी पर रख देते हैं तथा हाथ धोकर जल से भरा दूसरा पात्र उठाकर मातेश्वरी को आचमन कराते हैं। आचमन समर्पण अर्थात् जल पिलाने के लिए इस मन्त्र का स्तवन कीजिए—

आचम्यतां त्वया देवि भक्ति मे ह्यचलां कुरु।
ईप्सितं मे वरं देहि परत्र च परां गतिम्॥

जल, पंचामृत तथा शुद्धोदक स्नान

जिस प्रकार आप स्नान करने के बाद धुले हुए वस्त्र पहनकर उपासना के आसन पर बैठे हैं, ठीक उसी प्रकार स्नान करने के बाद दिव्य वस्त्राभूषणों और फूल-माला आदि से सुशोभित होकर मातेश्वरी भी आई हैं। परन्तु धर्म शास्त्रों की विवेचनानुसार आप भगवती भवानी को सभी वस्तुएं समर्पित करेंगे। पहले उन्हें शुद्ध सुगन्धित जल से और इसके पश्चात् पंचामृत से स्नान कराएंगे। जल-स्नान हेतु निम्न मन्त्र का स्तवन कीजिए—

जाह्नवीतोयमानीतं शुभं कर्पूरसंयुतम्।
स्नानयामि सुरश्रेष्ठे त्वां पुत्रादिफलप्रदां॥

हम मातेश्वरी को कितनी वस्तुओं से स्नान कराएं, यह पूरी तरह हमारी भावना पर निर्भर करेगा। कुछ व्यक्ति पंचामृत में प्रयुक्त होने वाली पांचों वस्तुओं अर्थात् दूध, दही, घी, शहद और शक्कर से अलग-अलग स्नान कराने के पश्चात् शुद्ध जल में स्नान कराते हैं, तो कुछ भक्त केवल जल से स्नान कराने के बाद ही आगामी प्रक्रियाएं प्रारम्भ कर देते हैं। इन दोनों का मध्य मार्ग है भगवती काली माई को शुद्ध जल में स्नान कराने के पश्चात् तैयार किए हुए पंचामृत से स्नान कराना। शायद यह दोहराने की आवश्यकता नहीं है कि उपासना करते समय सभी प्रक्रियाओं की तरह ये स्नान भी आप केवल भावनात्मक रूप में कराएंगे। पंचामृत स्नान हेतु इस मन्त्र का स्तवन करें—

पयोदधि घृतं क्षौद्रं सितया च समन्वितम्।
पञ्चामृतमनेनाद्य करु स्नानम् दयानिधे॥

पंचामृत में स्नान कराने के पश्चात् एक बार फिर मातेश्वरी को शुद्ध जल से स्नान कराया जाता है। भावना यह रखी जाती है कि इस जल में सभी पवित्र नदियों का जल मिला हुआ है। यद्यपि पूजा करते समय सामान्य पानी का प्रयोग किया जाता है, लेकिन उपासना करते समय मात्र इस मन्त्र का ही स्तवन करें—

परमानन्द बोधाब्धि निमग्न निजमूर्तये।
सांगोपांगमिद्म स्नानं कल्पयाम्यहमाशते॥

वस्त्र एवं आभूषण समर्पण

यद्यपि मातेश्वरी को भावलोक में ही स्नान कराया गया है, परन्तु उनके वस्त्र तो गीले हो गए हैं। इस भावना के साथ आप उन्हें पहनने के लिए नए दिव्य वस्त्र समर्पित करेंगे। अत: उपासक मातेश्वरी को लाल चुनरी और अन्य वस्त्र अर्पित करने की कल्पना करता है। वस्त्र समर्पण हेतु निम्न मन्त्र का स्तवन कीजिए—

वस्त्रं च सोम दैवत्यं लज्जयास्तु निवारणम्।
मया निवेदितम् भक्त्या ग्रहाण परमेश्वरि॥

मातेश्वरी को वस्त्र समर्पित करने के बाद इस मन्त्र के स्तवन द्वारा उपवस्त्र

समर्पित किए जाते हैं—

यामाश्रित्य महामाया जगत्सम्मोहिनी सदा।
तस्यै ते परमेशायै कल्पयाम्युत्तरीयकम्॥

मातेश्वरी को वस्त्र पहनाने के पश्चात् परन्तु आभूषण और शृंगार सामग्री अर्पित करने से पूर्व अर्थात् इन दोनों के मध्य में मधुपर्क समर्पित किया जाता है। दही और शहद आदि के इस मिश्रण अर्थात् मधुपर्क के समर्पण हेतु आप इस मन्त्र का स्तवन करें—

दधिमध्वाज्यसंयुक्तं पात्रयुग्मसमन्वितम्।
मधुपर्कं गृहाण त्वं वरदा भव शोभने॥

मातेश्वरी को भावनात्मक रूप में सभी वस्त्र एवं मधुपर्क समर्पण के बाद नख-शिख सम्पूर्ण शृंगार के लिए उन्हें आभूषण अर्पित किए जाते हैं। आभूषण समर्पण हेतु निम्न मन्त्र का स्तवन कीजिए—

स्वभाव सुन्दरांगर्थै नानाशक्त्याश्रिते शिवे।
भूषणानि विचित्राणि कल्पयाम्यमरार्चिते॥

चंदन-रोली और कज्जल समर्पण

भावलोक में आप देखते हैं कि मातेश्वरी काली माई ने आपके द्वारा समर्पित किए गए वस्त्र एवं आभूषण धारण कर लिए हैं। अब कल्पना करें कि दाईं ओर चौकी पर रखी सुगन्धित चन्दन की कटोरी आपने अपने बाएं हाथ में उठा ली है और दाएं हाथ के अंगूठे से आप मातेश्वरी के मस्तक पर तिलक लगा रहे हैं। चन्दन समर्पण का मन्त्र इस प्रकार है—

परमानन्द सौभाग्यम् परिपूर्णम् दिगन्तरे।
गृहाण परमं गन्धम् कृपया परमेश्वरि॥

चंदन समर्पण के पश्चात् मातेश्वरी के भाल पर रोली की बिन्दी अग्रलिखित मन्त्र के स्तवन द्वारा लगाई जाती है—

कुंकुमं कान्तिदं दिव्यं कामिनी काम सम्भवम्।
कुंकुमेनार्चिते देवि प्रसीद परमेश्वरि॥

मातेश्वरी के भाल पर चन्दन-रोली की बिन्दी लगाने के बाद सौभाग्य का प्रतीक सिन्दूर निम्न मन्त्र के स्तवन द्वारा समर्पित किया जाता है—

सिन्दूरमरुणाभांसम् जयाकुसुमसंनिभम्।
पूजितासि मया देवि प्रसीद परमेश्वरि॥

जगत-जननी, सर्वशक्तिसम्पन्न एवं महापराक्रमी होने के बावजूद मातेश्वरी काली का स्वरूप षोडशी बाला का है। नवयुवती का सम्पूर्ण शृंगार काजल के बिना तो पूर्ण ही नहीं होता। अतः निम्नलिखित मन्त्र द्वारा मातेश्वरी को कज्जल अर्थात् काजल अर्पित कीजिए—

चक्षुभ्यां कज्जलं रम्यं सुभगे शांतिकारिके।
कर्पूर ज्योतिरूत्पन्नम् गृहाण परमेश्वरि॥

सौभाग्यसूत्र, इत्र, हरिद्रा तथा अक्षत

देवताओं की आराधना में जो महत्व यज्ञोपवीत का है, वही स्थान सौभाग्यसूत्र, इत्र और हल्दी का होता है भगवती काली की उपासना में। मातेश्वरी का सम्पूर्ण श्रृंगार आप कर चुके हैं। उनके मस्तक पर चन्दन-रोली, मांग में सिन्दूर और नयनों में काजल भी आप लगा चुके हैं। अब मातेश्वरी को सौभाग्यसूत्र अर्थात् सुहाग की प्रतीक विशिष्ट माला अर्पित की जाएगी। अन्य क्रियाओं के समान यह क्रिया भी केवल भावनात्मक रूप में करें। सौभाग्यसूत्र समर्पण का मंत्र निम्नलिखित है—

सौभाग्यसूत्रम् वरदे सुवर्ण मणि संयुते।
कण्ठे बध्नामि देवेशि सौभाग्यं दहि मेसदा॥

सौभाग्यसूत्र समर्पण के पश्चात् समस्त वातावरण को सुगन्धित बनाने हेतु मातेश्वरी के श्री चरणों में सुगन्धित इत्र निम्न मन्त्र के स्तवन द्वारा अर्पित करें—

चन्दनागुरु कर्पूरैः कुंकुमं रोचनम् तथा।
कस्तूर्यादि सुगंधाश्च सर्वांगेषु विलेपनम्॥

इत्र समर्पण के पश्चात् भगवती भवानी को हरिद्रा अर्थात् हल्दी समर्पित की जाती है। हरिद्रा समर्पण हेतु इस मन्त्र का स्तवन कीजिए—

हरिद्रारंजिते देवि सुख सौभाग्यदायिनी।
तस्मात्त्वां पूजयाम्यत्र सुखशांति प्रयच्छ मे॥

मातेश्वरी काली के मस्तक पर आप चन्दन-रोली और हल्दी के तिलक लगा चुके हैं। कोई भी तिलक तब तक पूर्ण नहीं होता, जब तक उस पर चावल के चन्द दाने न लगाए जाएं। चावल के इन दानों अर्थात् अक्षत का समर्पण निम्न मन्त्र के स्तवन द्वारा कीजिए—

रञ्जिताः कंकुमौद्येन न अक्षताश्चातिशोभनाः।
ममैषाम् देवि दानेन प्रसन्ना भव शोभने॥

पुष्पमाला, बिल्वपत्र एवं धूप-दीप

भगवती काली को उपरोक्त सभी वस्तुएं समर्पित करने के पश्चात् मातेश्वरी के श्री चरणों में कुछ सुगन्धित ताजे पुष्प चढ़ाए जाते हैं। उनके गले में फूलों का सुन्दर हार पहनाने के बाद बिल्वपत्र समर्पित किया जाता है। तत्पश्चात् मातेश्वरी के सम्मुख शुद्ध घी का दीपक जलाकर सुगन्धित धूप जलाई जाएगी। पूजा-अर्चना करते समय मूर्ति के चरणों में विविध प्रकार के फूल चढ़ाकर गले में माला पहनाते हैं और विग्रह के सम्मुख घी का दीपक व धूप जलाकर रखते हैं। परन्तु उपासना करते समय अन्य क्रियाओं के समान ये सभी कार्य केवल भावनात्मक रूप में ही

किए जाते हैं। पुष्पांजलि अर्पण का मन्त्र इस प्रकार है—

मन्दार परिजातादि पाटली केतकानि च।
जाती चम्पक पुष्पाणि गृहाणेमानि शोभने॥

काली माई की पूजा में लाल और काले रंग की वस्तुओं के प्रयोग को प्राधिमान्यता दी जाती है। अतः प्रायः लाल गुलाब, गुड़हल और कनेर आदि के पुष्पों का ही प्रयोग होता है। पुष्पांजलि के पश्चात् भगवती के गले में पुष्पों का भावनात्मक हार पहनाने के लिए इस मन्त्र का स्तवन कीजिए—

सुरभि पुष्प निचयैः ग्रन्थितां शुभ मालिकाम्।
ददामि तब शोभार्यम् गृहाण परमेश्वरि॥

भगवान शिव के समान ही शक्तिस्वरूपा भगवती काली माई को भी बिल्वपत्रों का समर्पण अनिवार्य रूप से किया जाता है। बिल्वपत्रों के समर्पण का मन्त्र है—

अमृतोद्भवः श्रीवृक्षो महादेवि! प्रियः सदा।
बिल्वपत्रम् प्रयच्छामि पवित्रम् ते सुरेश्वरि॥

आप भावलोक में देखते हैं कि धूप जलाने के दिव्य पात्र में अग्नि जल रही है। एक कटोरी में चन्दन, कस्तूरी, केसर आदि नाना प्रकार के सुगन्धित द्रव्यों से युक्त धूप रखी है। आप उस कटोरी की सामग्री अग्नि में डालकर भगवती भवानी को धूप की सुगन्ध देते हैं, जबकि लौकिक वस्तुओं का प्रयोग करते समय सामान्य धूपबत्ती जलाई जाती है। धूप समर्पण के लिए इस मन्त्र का स्तवन कीजिए—

दशांग गुग्गुल धूपं चन्दनागुरु संयुतम्।
समर्पितं मया भक्त्या महादेवि! प्रतिग्रह्यताम्॥

आप उपासना कर रहे हैं, अतः धूप के समान ही दीपक भी स्थूल रूप से नहीं जलाएंगे। परन्तु हृदय में देशी घी का दीप जलाने की भावना रखते हुए इस मन्त्र का स्तवन कीजिए—

घृतवर्तिसमायुक्तम् महातेजो महोज्ज्वलम्।
दीपम् दस्यामि देवेशि! सुप्रीता भव सर्वदा॥

नैवेद्य, फल और आचमन समर्पण

पूजा-आराधना करते समय धूप-दीप जलाने के बाद मोतीचूर के लड्डुओं, अन्य मिठाइयों अथवा बताशों का भोग लगाया जाता है, परन्तु मानसिक उपासना करने पर भावनात्मक रूप में दीप अर्पण करने के पश्चात् उपासक देखता है कि अत्यन्त सुन्दर रत्नजड़ित दो चौकियां देवताओं द्वारा वहां लाकर रख दी गई हैं। उनमें से एक चौकी पर सुन्दर आसन बिछा हुआ है, जिस पर सिंहासन से उठकर मातेश्वरी काली विराजमान हो गई हैं। दूसरी चौकी पर आप मातेश्वरी के लिए देवताओं द्वारा लाया गया भोग का थाल रख देते हैं। अब भगवती से भोग स्वीकार करने की प्रार्थना आप इस मन्त्र के स्तवन द्वारा कीजिए—

अन्नं चतुर्विधं स्वादु रसैः षड्भिः समन्वितम्।
नैवेद्य गृह्यतां देवि! भक्ति मे ह्यचलां कुरु।

भावलोक में आप देख रहे हैं कि आपके द्वारा प्रस्तुत किए गए प्रसाद को मातेश्वरी बड़े ही प्रेम के साथ ग्रहण कर रही हैं। थोड़ा-सा प्रसाद ग्रहण करने के बाद बाकी उन्होंने भक्तों के लिए छोड़ दिया है। अब आप भावनात्मक रूप से मिठाइयों का वह थाल वहां से हटाकर मौसम में उपलब्ध फलों को दूसरी थाली में रखकर मातेश्वरी को खाने के लिए दीजिए। फल समर्पण का मन्त्र इस प्रकार है—

द्राक्षाखर्जूर कदलीफल साम्रकपित्थकम्।
नारिकेलेक्षुजम्ब्बादि फलानि प्रतिगृह्यताम्॥

नैवेद्य ग्रहण करके मातेश्वरी थोड़े से फल भी खा चुकी हैं। अब वे आचमन करना चाहती हैं। इस भावना के साथ उन्हें जल समर्पित करने हेतु आप इस मन्त्र का स्तवन कीजिए—

कामारिवल्लभे देवि कर्वाचमनमं अम्बिके।
निरन्तरमहं वन्दे चरणौ तब चण्डिके॥

मातेश्वरी काली के आचमन कर लेने के बाद उन्हें एक अखण्ड ऋतुफल अर्थात् मौसम में सहज उपलब्ध पूरा फल भी समर्पित किया जाता है। अखण्ड ऋतुफल के समर्पण का मन्त्र निम्न है—

नारिकेलं च नारंगं कलिंगंमञ्चिरम् तवा।
उर्वारुकं च देवेशि फलान्येतानि गृह्यताम्॥

ताम्बूल तथा द्रव्य समर्पण

मातेश्वरी काली नैवेद्य एवं फल ग्रहण करने के पश्चात् जल पीकर हाथ धो चुकी हैं। अब आपके हृदय में भाव उत्पन्न होता है कि मातेश्वरी को पान खिलाना चाहिए। मन की आंखों से आप देख रहे हैं कि दाईं ओर की चौकी पर एक स्वर्ण थाल में सोने के वर्क लगे हुए बढ़िया पान देवताओं ने लाकर रख दिए हैं। सुपारी, इलायची, लौंग एवं अनेक सुगन्धित-मधुर मसालों से युक्त ये पान मातेश्वरी को समर्पित करने हेतु आप इस मन्त्र का स्तवन कीजिए—

एलालवगं कस्तूरी कर्पूरैः पुष्पवासिताम्।
वीटिकां मुखवासार्थ समर्पयामि सुरेश्वरि॥

मन्दिर में दर्शन अथवा पूजा करने के पश्चात् देव प्रतिमाओं के चरणों में कुछ धन भेंट के रूप में चढ़ाया जाता है। उपासना करते समय यह भेंट भी हम भावनात्मक रूप में ही अर्पित करते हैं। इसमें हम अपनी भावना के अनुरूप स्वर्णाभूषणों से लेकर मुक्ता-माणिक्य तक की कल्पना कर सकते हैं। द्रव्य-समर्पण अथवा सुवर्ण पुष्पम् अर्पण नामक इस प्रक्रिया हेतु आप निम्न मन्त्र का स्तवन कीजिए—

पूजा फल समृद्ध्यर्थ तवाग्रे स्वर्णमीश्वरि।
स्थापितं तेन मे प्रीता पूर्णान करु मनोरथम्॥

आरती, प्रदक्षिणा एवं नमस्कार

भावलोक में आप देखते हैं कि भगवती भवानी महाकाली अब प्रस्थान करने हेतु अपने आसन से खड़ी हो गई हैं। अतः अब मुझे मातेश्वरी की आरती उतारनी चाहिए। इस भावना के साथ भावलोक में ही आप एक थाली लेते हैं, जिसके बीच रखी हुई कटोरी में कपूर प्रज्वलित हो रहा है। इस थाली से मातेश्वरी की क्रियात्मक आरती उतारने की कल्पना करते हुए आप इस मन्त्र का स्तवन कीजिए—

नीराजनम् सुमगल्यम् कर्पूरेण समन्वितम्।
चन्द्रार्कवह्निसदृशं महादेवि! नमोऽस्तुते॥

यद्यपि प्रारम्भ में तो नहीं, परन्तु कुछ समय तक पूर्ण आस्था और तन्मयता के साथ उपासना करने पर आप मन की आंखों से देखने लगते हैं कि मातेश्वरी काली को आपके पास उपस्थित देखकर अनेक देवी-देवता, ऋषि-मुनि, साधु-संन्यासी एवं सद्गृहस्थ वहां आ गए हैं। भक्ति की इस सीमा पर पहुंचा हुआ उपासक तब यह अनुभव करता है कि वह स्वयं भी सूक्ष्म रूप में उन भक्तों और देवों के बीच उपस्थित है, जबकि वास्तव में वह अकेला बैठा हुआ इन मन्त्रों का तन्मयतापूर्वक स्तवन कर रहा होता है। आरती के तत्काल बाद प्रदक्षिणा अर्थात् परिक्रमा के इस मन्त्र का स्तवन किया जाता है। यह प्रदक्षिणा भी क्रियात्मक रूप में नहीं की जाती। आप अपने आसन पर बैठे हुए मात्र निम्न मन्त्र का मन-ही-मन स्तवन करते हैं—

प्रदक्षिणं देवि देवेशि नमस्ते ईप्सितप्रदे।
नमस्ते जगतां धात्रि नमस्ते भक्तवत्सले॥

लौकिक वस्तुओं और मूर्ति का उपयोग करके पूजा-आराधना करते समय भी व्यावहारिक रूप में मूर्ति अथवा चित्र की परिक्रमा नहीं की जाती। परन्तु आरती के पश्चात् भगवती को प्रणाम अवश्य किया जाता है। उपासना करते समय आप प्रदक्षिणा के मन्त्र के स्तवन के बाद मातेश्वरी काली को प्रणाम अर्थात् नमस्कार करेंगे। यद्यपि प्रदक्षिणा के मन्त्र में भी हमने अपनी मातेश्वरी को प्रणाम किया है, लेकिन आप इस मन्त्र के स्तवन द्वारा भगवती को एक बार फिर प्रणाम कीजिए—

नमः सर्वहितार्थायै जगदाधार हेतवे।
साष्टांगोऽयं प्रणामस्तु प्रयत्नेन मयाकृतः॥

क्षमा-याचना और विसर्जन

आराधना अथवा उपासना के अन्त में मातेश्वरी से सेवा-पूजा में रह गई कमियों और इस तन-मन के द्वारा नित्य होने वाले अपराधों के लिए क्षमा-याचना की जाती है। सबसे अन्त में किया जाता है—पूजा, आराधना अथवा उपासना का विसर्जन। यद्यपि आराधना-उपासना की मुख्य प्रक्रिया पूर्ण हो चुकी है, परन्तु व्यावहारिक रूप में आप आराधना अथवा उपासना का यहीं समापन नहीं कर सकते। मानसिक उपासना करने वाले अधिकांश साधक मातेश्वरी को नमस्कार

करने के बाद काली माई के किसी मन्त्र की कम-से-कम एक माला जपते हैं। फिर समय के साथ-साथ बढ़ती जाती है, उनके इस जप की संख्या और समय। इसके साथ ही संस्कृत भाषा के जानकार मातेश्वरी के स्तोत्रों और शतनाम आदि का भी नियमित पाठ करते हैं।

संस्कृत न जानने वाले उपासक तथा मूर्ति या चित्र सम्मुख रखकर पूजा-आराधना करने वाले आराधक प्राय: इस अन्तिम चरण में विनतियों, आरतियों, भजनों और चालीसों आदि का मन-ही-मन स्तवन अथवा गायन करते हैं। अधिकांश उपासक इन दोनों का मध्य मार्ग अपनाकर मातेश्वरी के किसी मन्त्र की एकाध माला जप या भजन करने के बाद उनके चालीसे, स्तुतियों और आरतियों आदि का स्तवन करते हैं। सभी प्रक्रियाएं पूर्ण करने के पश्चात् अन्त में इस मन्त्र के स्तवन द्वारा मातेश्वरी काली से क्षमा-याचना कीजिए—

अपराध शतं देवि मत्कृतं च दिने दिने।
क्षम्यतान पावने देव-देवेश नमोऽस्तुते॥

यद्यपि कुछ व्यक्ति मातेश्वरी काली को नमस्कार करने के तत्काल बाद ही क्षमा-याचना के मन्त्र का स्तवन कर लेते हैं और उसके बाद मन्त्र जप आदि की क्रियाएं करते हैं। यह एक भावना की बात है। परन्तु इसका स्तवन आराधना-उपासना का समापन करते समय ही किया जाना चाहिए—

इमां पूजां मया देवी यथाशक्त्युपपादिताम्।
रक्षार्थं त्वं समादाय वज्रस्थान मनुत्तमम्॥

आराधना-उपासना अथवा किसी भी तान्त्रिक साधना के अन्त में आप संस्कृत के सहस्त्रनाम का जप और स्तोत्रों का स्तवन करें अथवा हिन्दी के चालीसे, विनतियों व आरतियों का—समान फलों की ही प्राप्ति होगी। मातेश्वरी को भाषा से कोई अंतर नहीं पड़ता। वे तो हृदय से की गई मूक पुकार भी तत्काल सुन लेती हैं। यद्यपि उपासना में लगाए जाने वाले समय और नियमितता का महत्व है, परन्तु इससे भी अधिक महत्वपूर्ण है उपासक की भावना, श्रद्धा और तन्मयता। व्यवहार में शुचिता, ईमानदारी और परोपकार की भावना रखें। हर वस्तु में मातेश्वरी काली का अंश मानते हुए सभी के साथ सद्भावना रखें तथा प्रतिदिन एक घंटा उपासना करें। मातेश्वरी काली हमें अवश्य ही जीवन में हर सुख और अंत में मोक्ष प्रदान करेंगी। इसके विपरीत मन की कलुषता को मिटाए बगैर चंचल मन से घण्टों उपासना करने का भी कोई लाभ नहीं है। इस रूप में आप अपनी और संसार की नजरों में तो काली-भक्त बने रहेंगे, परन्तु मातेश्वरी के प्रिय पुत्र नहीं बन पाएंगे।

□□

16

चालीसे एवं स्तोत्र

ब्रह्माण्ड की प्रत्येक वस्तु उस आदिशक्ति भगवती भवानी के तेज से निर्मित है, जिसका सबसे रौद्र और शक्तिशाली रूप मातेश्वरी काली हैं। शास्त्रों के अनुसार शिवजी की शक्ति मातेश्वरी पार्वतीजी, विष्णुप्रिया लक्ष्मीजी, विद्या और कला की अधिष्ठाता वीणावादिनी सरस्वती तथा काली ही नहीं, सभी मातृशक्तियां उस आदिशक्ति का रूप हैं। विन्ध्याचल पर्वत पर मातेश्वरी काली का निवास है। इसीलिए इस रूप में उनका एक नाम मातेश्वरी विन्ध्यवासिनी भी है। यही कारण है कि विन्ध्येश्वरी चालीसे को मातेश्वरी काली का दूसरा चालीसा माना जाता है। विन्ध्येश्वरी स्तोत्र तो एक प्रकार से काली स्तोत्र ही है। इस अध्याय में मातेश्वरी काली का सिद्ध काली चालीसा, विन्ध्येश्वरी चालीसा, दुर्गा चालीसा और विन्ध्येश्वरी स्तोत्र का संकलन किया गया है। पूजा-आराधना करते समय आप इनमें से सिद्ध काली चालीसा और विन्ध्येश्वरी स्तोत्र का नियमित पाठ करें।

विन्ध्येश्वरी स्तोत्र

निशुम्भ शुम्भ गर्जनी, प्रचण्ड खण्ड खण्डनी।
बने रणे प्रकाशिनी, भजामि विन्ध्यवासिनी॥
त्रिशूल मुण्ड धराविघात, धराविधात हारिणी।
गृहे गृहे निवासिनी, भजामि विन्ध्यवासिनी॥
दरिद्र दुःख हारिणी, सकल विभूति कारिणी।
वियोग शोक हारिणी, भजामि विन्ध्यवासिनी॥
लसत्सुलोल लोचनम् लतासनम् वरप्रदम्।
कपाल शूल धारिणी, भजामि विन्ध्यवासिनी॥
करो मुदागदाधरा, शिवा शिवः प्रदायिनी।
वरा वरानना शुभा, भजामि विन्ध्यवासिनी॥
ऋषीन्द्र जामिनी प्रदं त्रिधास्य रूप धारिणी।
जल थले निवासिनी, भजामि विन्ध्यवासिनी॥
विशिष्ट शिष्ट कारणी, विशाल रूप धारिणी।
महोदरे विलासिनी, भजामि विन्ध्यवासिनी॥
पुरन्दरादि सेविता, सुरारि वंश खण्डिता।
विशुद्ध बुद्धिकारिणी, भजामि विन्ध्यवासिनी॥

सिद्ध काली चालीसा

दोहे

जय जय सीता राम के, मध्य वासिनी अम्ब।
देहु दरश जगदम्ब अब, करो न मातु विलम्ब॥
प्रातःकाल उठ जो पढ़े, दुपहरिया या शाम।
दुःख दरिद्रता दूर हों, सिद्ध होंय सब काम॥

जय काली कंकाल मालिनी, जय मंगला महा कपालिनी।
रक्तबीज वध कारिणी माता, सदा भक्तन को सुखदाता।
शिरो मालिका भूषित अंगे, जय काली मधु मध्य मतंगे।
हर हृदयारविंद सुबिलासिनी, जयजगदम्ब सकल दुःख नाशिनी।
ह्रीं काली श्री महाकाली, क्रीं कल्याणी दक्षिण काली।

मातेश्वरी महाकाली

जय कलावती जय विद्यावती, जय तारा सुन्दरी जय महामती।
देहु सुबुद्धि हरहु सब संकट, होहु भक्त के आगे परगट।
जय ओंकारे जय हू कारे, महाशक्ति जय अपरम्पारे।
कमला कलियुग दर्प विनाशिनी, सदा भक्तजन के भयनाशिनी।

अब जगदम्ब न देर लगावहु, दुःख दरिद्रता मोर हटावहु।
जयति कराल काल की माता, कालानल समान द्युतिगाता।
जय शंकरी सुरेशि सनातनि, कोटि सिद्धि कविमातु पुरातन।
कर्पिदनी कलिकल्मष मोचन, जयविकसित नवनलिन विलाचनि।
आनन्दा आनन्द निधाना, देहु मातु मोहिं निर्मल ज्ञाना।
करुणामृत सागर कृपामयी, होहु दुष्टजन पर अब निर्दयी।
सकल जीव तोहिं समान प्यारा, सकल विश्व तोरे सहारा।
प्रलयकाल में नर्तनकारिणी, जगजननि सब जग की पालिनी।
महोदरी माहेश्वरी माया, हिमगिरि सुता विश्व की छाया।
जय स्वच्छन्द मराद धुनिमाहीं, गर्जत तूहिं और कोउ नाहीं।
स्फुरति मणि गणकार प्रताने, तारागण तू व्योम विताने।
श्रीराधा संतन हितकारी, अग्निनसमान अतिदुष्ट विदारणि।
धूम्रविलोचन प्रण विमोचनि, शुम्भनिशुम्भ मद निबर लोचनि।
सहस्त्र भुजी सरोरुह मालिनी, चामुण्डे मरघट की वासिनी।
खप्पर मध्य सुशोणित साजी, मारेउ मां महिषासुर पाजी।
अम्ब अम्बिका चण्ड चंडिका, सब एके तुम आदिकालिका।
अजा एक रूपा बहु रूपा, अकथ चरित्र और शक्ति अनूपा।
कलकत्ते के दक्षिण द्वारे, मूरति तोर महेश अगारे।
कादम्बरी पानरत श्यामा, जय मातगिं काम के धामा।
कमलासनवासनि कमलायनि, जयश्याम जयजय श्यामायनि।
रासरते नवरसे प्रकृतिहे, जयति भक्त उर कुमति सुमतिहे।
कोटि ब्रह्म-शिव-विष्णु कर्मदा, जयति अहिंसा धर्म जन्मदा।
जल-थल-नभ मंडल में व्यापिनी, सौदामिनी मध्य अलापिनी।
झननन तच्छुमरनि रिननादिन, जय सरस्वती वीणावादनि।
ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै, कलित गले कोमल रुण्डायै।
जय ब्रह्माण्ड सिद्धकवि माता, कामाख्या औ काली माता।
हिंगलाज विन्ध्याचल वासिनी, अट्टहासिनि अघ नाशिनि।
कितनी स्तुति करो अखण्डे, तू ब्रह्माण्ड शक्ति जितखण्डे।
यह चालीसा जो जब गावे, मातु भक्त वांछित फल पावे।
केला और फल फूल चढ़ावे, मांस खून कछु नहीं छुवावे।
सबकी तुम समान महतारी, काहे कोई बकरा को मारी।

दोहा

सब जीवों के जीव में, व्यापक तू ही अम्ब।
कहत भक्त सब जगत में, तोरे सुत जगदम्ब॥

विन्ध्येश्वरी चालीसा

दोहा

नमो नमो विन्ध्येश्वरी, नमो नमो जगदम्ब।
सन्तजनों के काम में, करती नहीं विलम्ब॥

जय-जय-जय विन्ध्याचलरानी, आदिशक्ति जगविदित भवानी।
सिंहवाहिनी जय जगमाता, जय जय जय त्रिभुवन सुखदाता।
कष्ट निवारनि जै जग देवी, जै जै जै असुरा सुर सेवी।
महिमा अमित अपार तुम्हारी, शेष सहस मुख वर्णन हारी।
दीनन को दुःख हरत भवानी, नहिं देख्यो तुम सम कोउ दानी।
सबकी मनसा पुरवत माता, महिमा अमित जगतविख्याता।
जो जन ध्यान तुम्हारो लावै, सो तुरतहि वांछित फल पावै।
तुही वैष्णवी तुही रुद्रानी, तुही शारदा अरु ब्रह्मानी।
रमा राधिका श्यामा काली, तुही मातु सन्तन प्रतिपाली।
उमा माधवी चण्डी ज्वाला, बेगि मोहिं पर होहु दयाला।
तुही हिंगलाज महारानी, तुही शीतला अरु विज्ञानी।
दुर्गा दुर्गविनाशिनि माता, तुही लक्ष्मी जग सुख दाता।
तुही जाह्नवी अरु इन्द्रानी, हेमावती अम्बा निर्वानी।
अष्टभुजी वाराहिनी देवा, करत विष्णु शिव तेरी सेवा।
चौसट्टी देवी कात्यानी, गौरी मंगला सब गुन खानी।
पाटन मुम्बा दन्त कुमारी, भद्रकालि सुन विनय हमारी।
वज्रधारिणी शोकनाशिनी, आयु रक्षिणी विन्ध्यवासिनी।
जया और विजया बैताली, मात सुगन्धा अरु विकराली।
नाम अनन्त तुम्हार भवानी, बरनै किमि मानुष अज्ञानी।
जापर कृपा मातु तब होई, सो वह करे मन चाहे जोई।
कृपा करहु मोपर महारानी, सिद्ध करिये अम्बे मम बानी।
जो नर धरै मातु कर ध्याना, ताकर सदा होय कल्याणा।
विपति ताहि सपने नहिं आवे, जो देवी का जाप करावे।
जो नर कहं ऋण होय अपारा, सो नर पाठ करै शत बारा।
निश्चय ऋण मोचन ह्वै जाई, जो नर पाठ करे मन लाई।
अस्तुति जो नर पढ़े पढ़ावे, या जग में सो बहु सुख पावे।

जाको व्याधि सतावै भाई, जाप करत सब दूरि पराई।
जो नर अति बन्दी महं होई, बार हजार पाठ कर सोई।
निश्चय बन्दी ते छुट जाई, सत्य वचन मम मानहु भाई।
जापर जो कछु संकट होई, निश्चय देविहिं सुमिरत सोई।
जा कहं पुत्र होय नहिं भाई, सो नर या विधि करै उपाई।
पांच वर्ष जो पाठ करावै, नवरात्रों महं विप्र जिमावै।
निश्चय होहिं प्रसन्न भवानी, पुत्र देहिं ताकहुं गुणखानी।
ध्वजा नारियल आनि चढ़ावै, विधि समेत पूजन करवावे।
नित प्रति पाठ करै मन लाई, प्रेम सहित नहिं आन उपाई।
यह श्री विन्ध्याचल चालीसा, रंक पढ़त होवे अवनीसा।
यह नहिं अचरज मानहूं भाई, कृपा दृष्टि जापर हुई जाई।
जै जै जै जग मातु भवानी, कृपा करहु मोहिं पर जन जानी।
विन्ध्यवासिनी मात अखण्डे, तुहि ब्रह्माण्ड शक्ति जितखण्डे।
यह चालीसा जो जब गावे, तब ही मनवांछित फल पावे।

दोहा

विन्ध्येश्वरी चालीसा यह, पाठ करें उरि धारि।
अष्ट सिद्धि नवनिधि फल, लहै पदारथ चारि॥

श्री दुर्गा चालीसा

दोहा

जय श्रीदुर्गा, अम्बिका, जगत पालिनी मात॥
आदिशक्ति अनन्त है, महिमा वरन न जात॥

नमो नमो दुर्गे सुख करनी, नमो नमो अम्बे दुःख हरनी।
निराकार है ज्योति तुम्हारी, तिहूं लोक फैलि उजियारी।
शशि लिलार मुख महा विशाला, नेत्र लाल भृकुटी विकराला।
रूप मातु को अधिक सुहावे, दरश करत जन अति सुख पावे।
तुम संसार शक्ति मय कीना, पालन हेतु अन्न धन दीना।
प्रलयकाल सब नाशन हारी, तुम गौरी शिव शंकर प्यारी।
अन्नपूरना हुई जग पाला, तुम ही आदि सुन्दरी बाला।
शिव योगी तुम्हरे गुण गावैं, ब्रह्मा विष्णु तुम्हें नित ध्यावैं।
रूप सरस्वती को तुम धारा, दे सुबुद्धि ऋषि मुनिन उबारा।
धरा रूप नरसिंह को अम्बा, परगट भई फाड़कर खम्बा।

रक्षा करि प्रह्लाद बचायो, हिरणाकुश को स्वर्ग पठायो।
लक्ष्मी रूप धरो जग माहीं, श्री नारायण अंग समाहीं।
क्षीरसिंधु में करत विलासा, दयासिंधु दीजै मन आसा।
हिंगलाज में तुम्हीं भवानी, महिमा अमित न जात बखानी।
मातंगी धूमावति माता, भुवनेश्वरि बगला सुख दाता।
श्रीभैरव तारा जग तारिणी, क्षिन्नभाल भव दुःख निवारिणी।
केहरि वाहन सोहे भवानी, लांगुर वीर चलत अगवानी।
कर में खप्पर खड्डग विराजे, जाको देख काल डर भाजे।
सोहे अस्त्र और तिरशूला, जाते उठत शत्रु हिय शूला।
नगर कोटि में तुम्हीं विराजत, तिहूं लोक में डंका बाजत।
शुम्भ निशुम्भ दानव तुम मारे, रक्तबीज से असुर संहारे।
महिषासुर नृप अति अभिमानी, जेहि अधिभार महीअकुलानी।
रूप कराल काली को धारा, सेन सहित तुम तिहि संहारा।
परी गाढ़ संतन पर जब-जब, भई सहाय मात तुम तब-तब।
अमरपुरी अरु सब लोका, तब महिमा सब रहे अशोका।
ज्वाला में है ज्योति तुम्हारी, तुम्हें सदा पूजें नर नारी।
प्रेम भक्ति से जो जस गावै, दुःख-दरिद्र निकट नहीं आवै।
ध्यावें तुम्हें जो नर मन लाई, जनम मरण ताको छूट जाई।
जोगी सुर मुनि कहत पुकारी, योग नहीं बिन शक्ति तुम्हारी।
शंकर आचरज तप कीनों, काम अरु क्रोध जीति सब लीनो।
निशदिन ध्यान धरो शंकर को, काहुकाल नहीं सुमिरो तुमको।
शक्ति रूप को मरम न पायो, शक्ति गई तब मन पछितायो।
शरणागत हुई कीर्ति बखानी, जय जय जय जगदम्ब भवानी।
भई प्रसन्न आदि जगदम्बा, दई शक्ति नहीं कीन विलंबा।
मोको मात कष्ट अति घेरो, तुम बिन कौन हरे दुःख मेरो।
आशा-तृष्णा निपट सतावे, रिपु मूरख मोहि अति डरपावे।
शत्रु नाश कीजै महारानी, सुमिरौं इकचित तुम्हें भवानी।
करो कृपा हे मातु दयाला, ऋद्धि-सिद्धि दे करहु निहाला।
जब लगी जियौं दया फल पाऊं, तुम्हरो जस मैं सदा सुनाऊं।
दुर्गा चालीसा जो गावै, सब सुख भोग परम पद पावै।
देवीदास शरण निज जानी, करहु कृपा जगदम्ब भवानी।

दोहा

बसहु देवि मम उर सदा, भक्तजन की तुम कांति।
लसहु भक्ति मम उर बसहु, शांति शांति मां शांति॥

❑❑

17

आरतियां, स्तुतियां और विनतियां

मानसिक उपासना और तान्त्रिक साधनाएं करते समय जिस प्रकार अन्तिम चरण में मन्त्र का जप एवं स्तोत्रों का स्तवन अनिवार्य रूप से किया जाता है, ठीक उसी प्रकार मूर्ति अथवा चित्र की पूजा-आराधना करने के पश्चात् मातेश्वरी की आरती तो उतारी ही जाती है, उनकी भेंटों, भजनों और स्तुतियों का गायन भी किया जाता है।

मातेश्वरी काली हमारी माता-पिता, मार्गदर्शक,रक्षक और दात्री देवी हैं। वे हमारा भरण-पोषण और रक्षा सहज भाव से कर रही हैं। वे हमारी ममतामयी माता हैं और हम उनके पुत्र।

अत: उनसे भक्ति और शक्ति देने की निरन्तर याचना करते रहना हमारा कर्तव्य है। कोई कष्ट होने पर उसे मिटाने की प्रार्थना भी इस प्रकार की विनतियों के माध्यम से की जाती है।

सबसे बड़ी बात तो यह है कि उपासना के अन्तिम चरण में भी मन-ही-मन इनके स्तवन का कोई निषेध नहीं है। संस्कृत के विभिन्न स्तोत्रों के स्थान पर अथवा उनके साथ ही आप इनका भी पाठ सफलतापूर्वक नियमित रूप से कर सकते हैं। जिस प्रकार विभिन्न स्तोत्रों में मातेश्वरी के रूप-स्वरूप, कृत्यों, महिमाओं, शक्तियों एवं उपकारों का वर्णन संस्कृत भाषा में है, उसी प्रकार इन स्तुतियों, विनतियों, भजनों, भेंटों और आरतियों के रूप में हिन्दी में हैं।

आप मातेश्वरी का महिमा-वर्णन संस्कृत के स्तोत्रों के माध्यम से करें अथवा हिन्दी में, आपको समान फलों की प्राप्ति होगी। हम मातेश्वरी के पुत्र-पुत्रियां हैं। वे सभी भाषाएं समान रूप से समझती हैं। वे भाषा नहीं, हमारी आस्था और तन्मयता को देखती हैं।

अत: आप अधिक से अधिक इनका गायन, मन्द स्वर में पाठ अथवा मन-ही-मन स्तवन करते रहिए, मातेश्वरी सहज ही आपको अपनी सबसे प्रिय सन्तानों में से एक मान लेंगी।

माता काली की आरती

ओ अम्बे, तुम हो जगदम्बे, काली जय दुर्गे खप्पर वाली।
तेरे ही गुण गावें भारती, ओ मैया हम सब उतारें तेरी आरती ॥

तेरे जगत के भक्त जनों पर पीर पड़ी है भारी,
दानव दल पर टूट पड़ो मां करके सिंह सवारी,
सौ-सौ सिंहों-सी तू बलशाली, है अष्ट भुजाओं वाली,
दुष्टों को तू ही ललकारती, ओ मैया...।

मां-बेटे का है इस जग में बड़ा ही निर्मल नाता,
पूत कपूत सुने हैं पर न माता सुनी कुमाता,
सब पर करुणा दर्शाने वाली, सबको हरसाने वाली,
नैया भंवर से उबारती, ओ मैया...।

नहीं मांगते धन और दौलत, न चांदी न सोना,
हम तो मांगे मां तेरे चरणों में छोटा-सा कोना,
सब पर अमृत बरसाने वाली, विपदा मिटाने वाली,
सतियों के सत को संवारती, ओ मैया...।

आदि शक्ति भगवती भवानी, हो जग की हितकारी,
जिसने याद किया आई मां, करके सिंह सवारी,
मैया करती कृपा किरपाली, रखती जन की रखवाली,
दुष्टों को पल में माता मारती, ओ मैया...।

भक्त तुम्हारे निशदिन मैया, तेरे ही गुण गावैं,
मनवांछित वर दे दे इनको, तुझसे ही ध्यान लगावैं,
मैया तू ही वर देने वाली, जाय न कोई खाली,
दर पै तुम्हारे माता मांगते, ओ मैया...।

चरण-शरण में खड़े तुम्हारी, ले पूजा की थाली,
वरद हस्त सर पर रख दो, मां संकट हरने वाली,
मैया भर दो भक्ति रस प्याली, अष्ट भुजाओं वाली,
भक्तों के कारज तू ही सारती, ओ मैया...।

अम्बेजी की आरती

जय अम्बे गौरी, मैया जय श्यामा गौरी।
तुमको निशदिन ध्यावत, ब्रह्मा हरि शिवजी।

मांग सिंदूर विराजत, टीको मृगमद को, मैया टीको मृगमद को।
उज्ज्वल दोऊ नयना, निर्मल दोऊ नयना, चन्द्रवदन नीको।

कनक समान कलेवर रक्ताम्बर राजे, मैया पीताम्बर राजै।
रक्त पुष्प गल माल, लाल पुष्प गल माला, कण्ठन पर साजै।

कानन कुण्डल शोभित, नासाग्रे मोती, मैया नासाग्रे मोती।
कोटिक चन्द्रदिवाकर, कोटिक चन्द्रदिवाकर राजत सम ज्योती।

केहरि वाहन राजत, खड्ग खप्पर धारी, मैया खड्ग खप्पर धारी।
जो नर तुमको सेवत, जो जन तुमको सेवत तिनके दुःखहारी।

मधुकैटभ मदहरनी, महिषासुर घाती, मैया महिषासुर घाती।
धूम्रविलोचन नयना, मैया धूम्रविलोचन नयना, निशदिन मदमाती।

चंड मुंड संहारे, शोणित बीज हरे, मेरी मैया शोणित बीज हरे।
शुंभ निशुंभ पछाड़े, मां ने शुंभ निशुंभ पछाड़े, निर्भय राज करे।

ब्रह्मादिक रुद्रादिक इन्द्रादिक ध्यावें, मैया सनकादिक ध्यावें।
सुर नर मुनि जन सेवें तुमको, वे सब मनवांछित फल पावें।

चौंसठ योगिनी गावत, नृत्य करत भैंरों, मैया नृत्य करत भैंरू।
बाजत ताल मृदंगा, बाजत ढ़ोल मृदंगा और बाजत डमरू।

कंचन थाल विराजत अगर कपूर बाती, मैया अगर कपूर बाती।
श्री मालकेतु में राजत, नगरकोटि में राजत, कोटि रतन ज्योती।

तुम ब्रह्माणी तुम रुद्राणि तुम कमलारानी, मैया तुम कमलारानी।
आगम निगम बखानी, चारों वेद बखानी तुम शिवपटरानी।

भुजा चार अति शोभित, वर मद्राधारी, मैया वर मद्राधारी।
मनवांछित फल पावत, जो सेवत नरनारी, हां सेवत नरनारी।

श्री अम्बेजी की आरती जो कोई नर गावै, मैया जो कोई नर गावै।
कहत शिवानंद स्वामी, भनत शिवानंद स्वामी, सुख संपत्ति पावै।

मातेश्वरी की विशेष स्तुति

सन्त चले दर्शन करन, जगदम्बा ढिंग जाय।
कर जोड़े सम्मुख खड़े, प्रेम से शीश नवाय॥

मंगल की सेवा, सुन मेरी देवा! हाथ जोड़ तेरे द्वार खड़े।
पान-सुपारी, ध्वजा-नारियल, ले ज्वाला तेरी भेंट धरे।
सुन जगदम्बे! कर न विलंबे, मां संतन के भंडार भरे।
संतन प्रतिपाली करत खुशाली, जय काली कल्याण करे॥
बुद्धि विधाता तू जग माता, तू सबके कारज सिद्ध करे।
चरण कमल का लिया आसरा, शरण तुम्हारी आन परे।
जब जब भीर पड़ी सन्तन पर, तब तब आय सहाय करे।
सन्तन प्रतिपाली करत खुशाली, जय काली कल्याण करे॥
वीरवार को सब जग मोह्यो, मां तरुणि रूप अनुप धरे।
कहीं माता होकर पुत्र खिलावे, कहीं भार्या बन भोग करे।
तुम्हारी महिमा किस मुख वरनूं, बैठी कारज आप करे।
सन्तन प्रतिपाली करत खुशाली, जय काली कल्याण करे॥
शुक्कर सुखदाई सदा सहाई, सन्त खड़े जयकार करें।
ब्रह्मा विष्णु महेश सहस्त्रफन भेंट लिए तेरे द्वार खड़े।
अटल सिंहासन पर बैठी माता, सिर सोने का छत्र फिरे।
सन्तन प्रतिपाली करत खुशाली, जय काली कल्याण करे॥
वार शनिश्चर कुंकुम वरणी, लौकड़ वीर को हुक्म करे।
खड्ग खप्पर त्रिशूल संभाले, रक्तबीज को भस्म करे।
शुम्भ निशुम्भ क्षणहिं में मारे, महिषासुर का संहार करे।
सन्तन प्रतिपाली करत खुशाली, जय काली कल्याण करे॥
आदित्यवार तुम राजदुलारी, जन अपने के कष्ट हरे।
जब तुम देखो दया रूप से, पल में संकट दूर करे।
कुपित होकर दानव मारे, चण्ड मुण्ड सब चूर करे।
सन्तन प्रतिपाली करत खुशाली, जय काली कल्याण करे॥
सोम को सौम्य स्वरूप धर माता, सबकी अर्ज कबूल करे।
सिंह पीठ पर चढ़ी भवानी, अटल भवन में राज्य करे।

भक्त दर्शन पावें मंगल गावें, सिद्ध साधक तेरी भेंट करे।
सन्तन प्रतिपाली करत खुशाली, जय काली कल्याण करे॥
सात वार की महिमा वरनूं, मां की महिमा अति भारी।
चन्द्र सूर्य तपें तेज से तेरे, मां तेरे तेज की बलिहारी।
सुख धन वैभव देने वाली, एक पल में निहाल करे।
सन्तन प्रतिपाली करत खुशाली, जय काली कल्याण करे॥
ब्रह्मा वेद पढ़े तेरे द्वारे, शिव हरि नारद ध्यान धरें।
इन्द्र कृष्ण तेरी करें आरती, चंवर कुबेर डुलाय करें।
जय जननी जय मातु भवानी, अटल भवन में राज्य करे।
सन्तन प्रतिपाली करत खुशाली, जय काली कल्याण करे॥
मधुकैटभ महिषासुर के बल को, पल में मां हरती हो।
चण्ड और मुण्ड बिनासिवेको, तुम रूप अनेकन धरती हो।
शुम्भ निशुम्भ विदारवे को, तुम ही जग में उतरती हो।
मात भवानी, जय जग जननी, अटल भवन में राज करे।
सन्तन प्रतिपाली करत खुशाली, जय काली कल्याण करे॥
दुर्गे तेहि जपो जल-थल में, मोहि दीजिए बुद्धि पढ़ों बहुवानी।
सुवरण छत्र भवन पर सोहत, लाल ध्वजा सम्मुख फहरानी।
भक्तन के काज संवारने को, जगदंब बिलम्ब न जरा करे।
सन्तन प्रतिपाली करत खुशाली, जय काली कल्याण करे॥
सिंह चढ़त देवी गरजत आई, लांगुर भैरों चले अगवानी।
भक्त तेरे विनती करें माता, घर लक्ष्मी बन बसहु भवानी।
लक्ष्मी सरस्वती शिवा है तू ही, दुर्गा तेने रूप अनेक धरे।
सन्तन प्रतिपाली करत खुशाली, जय काली कल्याण करे॥

दोहा—ॐ भवानी कष्ट हरण, करत भक्त उद्धार।
उर वास करो मम दास हूं, करो मेरा निस्तार॥

मातेश्वरी काली के सौम्य और जगत पालनकर्ती रूप की इस स्तुति में सप्ताह के सात वारों में उनके सात मनोहर रूपों का वर्णन तो है ही, प्रत्येक छन्द के अन्त में उनको जय बोलकर नमस्कार भी किया गया है। मातेश्वरी के विविध रूपों की यह स्तुति उनके अष्टोत्तर शतनाम के समान ही भय एवं दु:खनाशक और ऋद्धि-सिद्धि तथा मोक्ष प्रदायक है। इसके तत्काल बाद ही गाने हेतु मातेश्वरी के विविध रूपों की एक आरती यहां दी जा रही है।

विविध रूपों की आरती

जग जननी जय जय! मां, जग जननी जय जय!!
भयहरिणी, भवतारिणी, भवभामिनि जय जय ॥ जग...

तू ही सत्-चित् सुखमय, शुद्ध ब्रह्म रूपा।
सत्य सनातन सुन्दर, पर-शिव सुर भूषा ॥ जग...

आदि अनादि अनामय, अविचल अविनाशी।
अमल अनन्त अगोचर, अज आनन्द राशी ॥ जग...

अविकारी अवहारी, अकल कलाधारी।
विधिकर्ता, हरि भर्ता, दुष्टन संहारकारी ॥ जग...

तू विधवधू, रमा तू, उमा महामाया।
मूल प्रकृति, विद्या तू, तू जननी जाया ॥ जग...

राम, कृष्ण तू, सीता ब्रजनारी राधा।
तू वांछा कल्पद्रुम, हारिणी सब बाधा ॥ जग...

देव विद्या, नव दुर्गा नाना शस्त्रकारा।
अष्मातृका, योगिनी, नव-नव-रूप धरा ॥ जग...

तू परधामनिवासिन, महाविलासिनि तू।
तू ही श्मशानविहारिणि, तांडवलासिनी ॥ जग...

सुर मुनि मोहिनि सौम्या, तू अति शोभधारा।
विवसन विकट स्वरूपा, प्रलयमयी धारा ॥ जग...

तू ही स्नेह सुधामति, तू ही अति गरल मना।
रत्न विभूषित तू ही, तू ही अस्थि तना ॥ जग...

मूलाधार निवासिन, इह परम सिद्धे-प्रदे।
कालातीता काली, कमला तू वरदे ॥ जग...

शक्ति शक्तिघरा तू ही, नित्य अभेद मयी।
वेद प्रदर्शिनी वाणी, विमले! वेदत्रयी ॥ जग...

हम अति दीन दुःखी मां, विपत-जाल घेरे।
हैं कपूत अति कपटी, पर बालक तेरे ॥ जग...

निज स्वभाववश जननी दया दृष्टि कीजै ।
करुणाकर करुणामयी, चरण शरण दीजै ॥ जग...

मां की स्तुति

जय जय त्रिभुवन वन्दिनि, गिरिनन्दिनि गिरिनन्दिनि।
असुर निकन्दिनी मातु, जय जय शम्भुप्रिये॥
त्रिगुण शक्ति निज धारिणी, शुभकारिणि शुभकारिणि।
भक्त उधारन मातु, जय जय शम्भुप्रिये॥
मधुकैटभ संहारिणि, सुरतारिणि सुरतारिणि।
महिष विदारनि मातु, जय जय शम्भुप्रिये॥
धूम्रविलोचन मोचिनी, त्रयलोचिनि, त्रयलोचिनि।
दुःख विमोचन मातु, जय जय शम्भुप्रिये॥

चण्ड मुण्ड मद मर्दिनि, सुविलासिनि सुविलासिनि।
मन्द हंसति सुर मातु, जय जय शम्भुप्रिये॥
रक्तबीज रुधिररसिनि, भयनाशिनि भयनाशिनि।
भूधर वासिनि मातु, जय जय शम्भुप्रिये॥
शुम्भ निशुम्भ विभंजनि, रिपुगंजनि रिपुगंजनि।
शिव मन रंजन मातु, जय जय शम्भुप्रिये॥
धरणीधर जीवनदायिनी हे, वरदायिनि वरदायिनि।
मृगारिपु वाहन मातु, जय जय शम्भुप्रिये॥
भूल चूक सब कर क्षमा, करुणामयी करुणामयी।
मम शिर रख हाथ, जय जय शम्भुप्रिये॥
दुर्गा दुर्गति नाशिनि, दुर्मति हरिये दुर्गति हरिये।
शुद्ध बुद्धि दे मातु, जय जय शम्भुप्रिये॥

भक्त की कातर पुकार

मैया तू ही करेगी प्रतिपाल, न मुझको और सहारा री।
मैया दीन-हीन अनाथ हूं मैं, होकर दुःखी पुकारा री॥
मैया सारे देवों का मिल तेज, बना शरीर तुम्हारा री।
मैया अष्टभुजी तेरा रूप, वाहन है सिंह करारा री।
मैया चक्र गदा त्रिशूल लिए, बरछी और दुधारा री।
मैया बाण धनुष कर धार, तू गरजे दे हुंकारा री॥
मैया कौन कोप सके ओट, लख थर्रावे जग सारा री।
मैया धार भयंकर रूप, झट महिषासुर को मारा री।
मैया चण्ड मुण्ड दिए मार, और रक्तबीज महि डारा री।
मैया शुम्भ निशुम्भ बिदार, दल असुरों का संहारा री॥
मैया मेरा है कौन कसूर, जो मुझको आज विसारा री।
मैया हो अगर कोई अपराध, उसे दिल से कर दे न्यारा री।
मैया पूत कुपातर होय, माता न करे किनारा री।
मैया लो सुन करुण पुकार, जग में तेरा ही एक सहारा री॥
मैया बीच भंवर मेरी नाव, ना दीखै कोई किनारा री।
मैया जिसने शरण लई आय, तू उसका काज सुधारा री।
मैया वीर रूप निज धार, लेकर आज कटारा री।
मैया देओ हमारे रिपु मार, हम करे तेरा जयकारा री॥
मैया कीन्हें बड़े-बड़े काज, काज मेरा क्या भारा री।
मैया दुश्मन रहे हैं सिर गाज, तू कर दे उनको मारा री।
मैया तेरी दया की मुझको चाह, मैं घिर आफत से हारा री।
मैया कर-कर कोप कराल, दल दुश्मन कर दे मारा री॥
मैया मुझको तो तेरा ही आधार, कर बेड़ा पार हमारा री।
मैया कर दो दया की दृष्टि, तो हो रक्षा मिले-उभारा री।
मैया सारे विघ्न दो टार, आज चमका दो मेरा सितारा री।
मैया दो धन यश बल मान, सेवक ने हाथ पसारा री॥
मैया आनन्द का कर राज, सुत अपना समझ पियारा री।
मैया दिव्य दरश दो आज, हो झट मेरा निस्तारा री।
मैया पूरी विधि से यह पाठ, जो करता भक्त तिहारा री।
मैया हो सुख विविध प्रकार, मिले रंज से छुटकारा री॥
मैया द्वार पड़ा हूं तेरे आय, है जग में तेरा ही सहारा री।
मैया खुश होके देओ वरदान, आनन्द का बजे नगारा री।
मैया तू ही करेगी प्रतिपाल, ना मुझको और सहारा री।
मैया दीन हूं, हीन अनाथ हूं मैं, होकर दुःखी पुकारा री॥
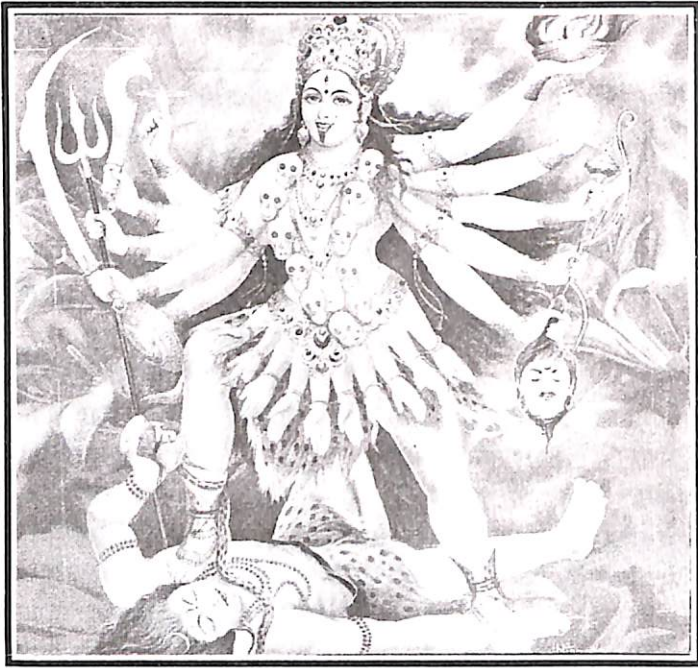
आद्याशक्ति से विनती

अजब हैरान हूं माता, तुम्हें कैसे रिझाऊं मैं।
कोई वस्तु नहीं ऐसी, जिसे सेवा में लाऊं मैं॥
करूं किस तरह आह्वान तुम हो हर जगह मौजूद।
निरादर है बुलाने को, अगर घण्टी बजाऊं मैं।
तुम्हीं हो मूर्तियों में भी, तुम्हीं व्यापक हो फूलों में।
भला फिर आप पर ही, आपको कैसे चढ़ाऊं मैं।
लगाना भोग कुछ तुमको, तेरा अपमान करना है।
खिलाती है जो सब जग को, उसे कैसे खिलाऊं मैं।
तुम्हारी ज्योति से रोशन हैं, सूरज-चांद और तारे।
महा अन्धेर होगा यदि, तुम्हें दीपक दिखाऊं मैं।
भुजाएं हैं न गर्दन है, न सीना है न पेशानी।
तुम हो निर्लेप नारायणी, कहां चन्दन लगाऊं मैं।
कहां खोजूं, कहां पाऊं, यही है मेरी परेशानी।
चली आओ हे माता, तुम्हारा दीदार पाऊं मैं।

निराकार काली से प्रार्थना

तेरा रूप कैसा है माता, कोई समझ न पाया।
कण-कण में बसने वाली को, कोई देख न पाया।
घट-घट वासी परम शक्ति तू, सभी ने यह गाया।
सत्य-सनातन अजर-अमर है, तू हमको बतलाया।
फिर भी हमको दीख न पड़ती, आदिशक्ति की काया।
तेरा रूप-स्वरूप कैसा है, कोई समझ न पाया।
सारे जग को चला रही है, मैया तेरी ही माया।
मन-बुद्धि से परे आप हो, कोई समझ न पाया।

महाकाली की भावनात्मक आरती

आरती मातेश्वरी कालीजी की। आरती...

ज्ञान को दीप और श्रद्धा की बाती,
भक्ति ही पूर्ति करै, जहां घी की। आरती...
मानस के शुचि थाल के ऊपर,
देवि की जोति जगै जहां नीकी। आरती...
शुद्ध मनोरथ के जहां घण्टा,
बाजैं करें पूरी आसहु हिय की। आरती...
जाके समक्ष हमें तिहु लोक की,
गद्दी मिलै तबहूं लगै फीकी। आरती...
आरति प्रेम सों नेम सों जो करि,
ध्यावहिं, मूरति मातेश्वरी की। आरती...
संकट आवैं न पास कबौं तिन्हें,
सम्पदा औ सुख की बन लीकी। आरती...

माता के प्रमुख रूपों की झांकी

भगवती भक्ति करो प्रदान, तुम भगवान की।
फिर करो अम्बे अमर यश कीर्ति सन्तान की॥
तुम ही बचाओ आन कर हे कालिके आ काल से।
गोद से गौरी उठा, करो प्यार अपने लाल से॥
चिन्तपुरनी आ हटा चिन्ता, बचा ले पाप से।
लक्ष्मी लाखों के भरे भण्डार अपने आप से॥

नयनादेवी आओ नयनन में बिराजो आन तुम।
वैष्णवी माता बचा, विषयों से निज सन्तान तुम॥
मंगला मंगलपुरी मंगल करो नर नार में।
चण्डिका चढ़ शेर पर, सुख दो सकल परिवार में॥
भद्र काली भद्र पुरुषों में, मेरा सम्मान हो।
ज्वाला मन की जलन हर, चरणों में तेरे ध्यान हो॥
चामुण्डा धारों धाम चरणों में तेरे विश्राम हो।
माता मन 'बेचैन' तुम में लीन आठों याम हो॥

गत अध्याय के चालीसे व विन्ध्येश्वरी स्तोत्र तथा यहां संकलित भजनों एवं स्तुतियों आदि का गायन मन्दिरों में वाद्य यन्त्रों के साथ सामूहिक रूप से होता रहता है। मन्दिर जाते और मातेश्वरी के दर्शन करते समय तथा घर पर भी पूजा-आराधना के बाद लगभग सभी भक्त इनका अधिकाधिक गायन अथवा पाठ करते रहते हैं। आप आराधना-उपासना करें अथवा तान्त्रिक साधनाएं, इनमें से सभी अथवा किन्हीं भी एक-दो का जितना अधिक स्तवन करें, उतना ही अच्छा है। इसके लिए यह आवश्यक नहीं है कि आलथी-पालथी मारकर उच्च स्वर में ही इनका गायन किया जाए। आप लौकिक कर्म करते हुए भी इन्हें मन-ही-मन दोहराते रहें। मन को इधर-उधर भटकने से रोकने, मातेश्वरी के चरण कमलों में मन रूपी भ्रमर को बसाए रखने और धर्म के प्रति आस्थावर्द्धन करने में इनका स्तवन सबसे अधिक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यही आराधना, उपासना और सभी साधनाओं में सफलता का मूलमन्त्र है। मातेश्वरी की विशेष कृपाएं इस प्रकार का सतत् चिन्तन और पाठ करने वाले भक्त को अनायास ही मिलती रहती हैं। अन्त में वह मोक्ष का भी सहज अधिकारी बन जाता है। यह हमारा नहीं, बल्कि सभी शास्त्रों का एकमत से कथन है।

❑❑

18

कालिका अष्टक

पूजा-आराधना करते समय चालीसे के स्तवन के पश्चात् अष्टक का पाठ किया जाता है तो उपासना और तान्त्रिक साधनाएं करते समय सहस्रनाम अथवा अष्टोत्तर शतनाम के जप के बाद मन ही मन इसका स्तवन करते हैं। सबसे बड़ी बात तो यह है कि किसी प्रकार का भय अथवा ऊपरी बाधा उपस्थित होने पर उच्च स्वर में इसका पाठ तुरन्त ही अपना प्रभाव दिखाता है।

शास्त्रों का कथन है कि यों तो मातेश्वरी काली का नाम ही सभी दैहिक, दैविक व भौतिक संतापों, हर प्रकार की पीड़ाओं और भय एवं ऊपरी बाधाओं को समाप्त करने के लिए पर्याप्त है, परन्तु इस अष्टक का पाठ तुरन्त ही प्रभाव दिखाता है। यह मूल अष्टक सरल संस्कृत में है। इस अध्याय में मूल अष्टक के साथ ही इसका हिन्दी अनुवाद भी दिया जा रहा है। आप संस्कृत के इन आठ श्लोकों का स्तवन करें अथवा इनके हिन्दी अनुवाद का, मातेश्वरी आपकी पुकार समान रूप से सुनेंगी और आपको समान फलों की ही प्राप्ति होगी। क्योंकि जगदम्बा काली भाषा को नहीं, भक्त के भावों को देखती हैं। इसीलिए सच्चे हृदय से की गई मूक पुकार पर भी वे दौड़ी चली आती हैं। मूल अष्टक निम्नवत हैं—

विरंच्यादिदेवास्त्रयस्ते गुणास्त्रीम्,
समाराध्य कालीं प्रधाना बभूवुः।
अनादि सुरादि मन्वादिं भवादिं,
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥ 1 ॥

हे देवि! तुम्हारे त्रिगुणात्मक रूप से उत्पन्न ब्रह्मा, विष्णु और शिव तुम्हारी ही आराधना करके प्रधान देव एवं ईश्वर स्वरूप हुए हैं। तुम्हारा स्वरूप अनादि, सुरादि तथा विश्व का मूलभूत है, उसे देवता भी नहीं जानते हैं।

जगमोहिनीयम् तु वाग्वादिनीयम्,
सुहृद्पोषिणी शत्रुसंहारणीयम्।
वचस्तम्भनीयम् किम्मुच्चाटनीयम्,
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥ 2 ॥

मातेश्वरी ! तुम्हारी दिव्य मूर्ति संसार को मोहित करने वाली, शत्रुओं का संहार करने वाली, वचन का स्तम्भन करने वाली तथा दुष्टों का उच्चाटन करने वाली है। तुम्हारे इस दिव्य स्वरूप को देवता भी नहीं जानते हैं।

इयं स्वर्गदात्री पुनः कल्पवल्ली,
मनोजाँस्तु कामान्यथार्थ प्रकुर्यात्।
तथा ते कृतार्था भवन्तीति नित्यं,
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥ 3 ॥

आपकी यह पावन मूर्ति स्वर्ग देने वाली और कल्प लता के समान भक्तों की सभी मनोकामनाओं को पूर्ण करने वाली है। इससे आपके भक्त सदैव कृतार्थ बने रहते हैं। तुम्हारे इस स्वरूप को देवता भी नहीं जानते हैं।

सुरापानमत्ता सुभक्तानुरक्ता,
लसत्पूतचिते सदाविर्भवस्ते।
जपध्यान पूजासुधाधौतपंका,
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥ 4 ॥

हे देवि ! तुम सुरापान से मस्त रहती हो तथा भक्तों के पवित्र हृदय में तुम्हारा आविर्भाव सुशोभित होता है। तुम्हारे इस स्वरूप को देवता भी नहीं जानते हैं।

चिदानन्दकन्दं हसन्मन्दमन्दं,
शरच्चन्द्र कोटि प्रभापुञ्जबिम्बम्।
मुनीनां कवीनां हृदि द्योतयन्तं,
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥ 5 ॥

तुम चिदानन्द का मूल, मन्द-मन्द मुस्काने वाली, शरद पूर्णिमा के करोड़ों चन्द्रमाओं की प्रभा से युक्त मुख वाली एवं मुनियों तथा कवियों के हृदय को प्रकाशित करने वाली हो। तुम्हारे इस स्वरूप को देवता भी नहीं जानते हैं।

महामेघकाली सुक्तापि शुभ्रा,
कदाचिद्विचित्रा कृतिर्योगमाया।
न बाला न वृद्धा न कामातुरापि,
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥ 6 ॥

तुम महामेघों के समान कृष्णवर्णा, साथ ही रक्तवर्णा तथा शुभ्रवर्णा भी हो। तुम कभी-कभी विचित्र आकृति को धारण करने वाली योगमाया हो। तुम न बाला हो, न वृद्धा हो और न कामातुरा हो। तुम्हारे इस स्वरूप को देवता भी नहीं जानते हैं।

क्षमस्वापराधम् महागुप्तभावम्,
मयालोकमध्ये प्रकाशीकृतं यत्।
तव ध्यानपूतेन चापल्यभावात्,
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवाः ॥ 7 ॥

मैंने तुम्हारे ध्यान से पवित्र हुए अपने मन के चापल्य भाव से तुम्हारे अत्यन्त गुप्त भाव को संसार में प्रकट कर दिया है। उस अपराध के लिए तुम मुझे क्षमा कर दो। तुम्हारे इस स्वरूप को देवता भी नहीं जानते हैं।

यदि ध्यान युक्तं पठेद्यो मनुष्य,
स्तदा सर्वलोक विशालो भवेच्च।
गृहे चाष्टसिद्धिर्मृते चापि मुक्ति,
स्वरूपं त्वदीयं न विन्दन्ति देवा: ॥ 8 ॥

जो मनुष्य ध्यानमग्न होकर इस अष्टक का पाठ करता है, वह सम्पूर्ण संसार में उच्च पद पाता है। उसके घर में आठों सिद्धियां बनी रहती हैं तथा उसको मृत्यु के पश्चात् मुक्ति प्राप्त होती है। हे देवि! तुम्हारे इस दिव्य स्वरूप को देवता भी नहीं जानते हैं।

❑❑

19

कालिका सहस्त्रनाम स्तोत्र

जिस प्रकार पूजा-आराधना के अन्त में मातेश्वरी काली के चालीसे, अष्टक, भजनों और आरतियों का गायन किया जाता है, ठीक उसी प्रकार मानसिक उपासना, बड़ी संख्या में मन्त्रों के जप एवं किसी भी तान्त्रिक सिद्धि के अन्तिम चरण में मां काली के इस कालिका सहस्त्रनाम के स्तवन का शास्त्रीय विधान है। यों तो भगवती काली के असंख्य नाम हैं, परन्तु इनके ये एक हजार नाम इतने दिव्य और प्रभावशाली हैं कि स्वयं भगवान शिव ने एक सौ अड़तालीस श्लोकों में इसे संकलित किया है।

यह कालिका सहस्त्रनाम स्तोत्र शास्त्रों में भगवान राम और आशुतोष भगवान शिव के संवादों के रूप में है। जब भगवान राम ने लंका पर विजय प्राप्त करने के लिए शिवजी की आराधना करने के बाद उनसे विजय का वरदान मांगा तो भगवान शिव ने यह सहस्त्रनाम बताकर इसके स्तवन द्वारा मातेश्वरी काली की शक्तिपूजा का निर्देश दिया। भगवान शिव ने इस सहस्त्रनाम की भूमिका के बारे में बताते हुए कहा—''हे राम! त्रृष्टुप छन्द में रचित इस कालिका सहस्त्रनाम स्तोत्र की देवी-देवता मातेश्वरी श्मशान काली हैं और श्री महाकाल भैरव ऋषि हैं। इस स्तोत्र का नियमित पाठ करने पर जीवन के चारों लक्ष्यों अर्थात् धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति होती है। आराधना-उपासना के अन्तिम चरण और प्रातः-सायं दोनों संध्याओं में इस स्तोत्र का नियमित स्तवन करने वाले साधक की साधना पूर्ण सफल होती है। वह सभी प्रकार की उपलब्धियों के साथ-साथ भगवती काली की विशेष कृपाएं भी प्राप्त करता है।'' नित्य पाठ हेतु स्तोत्र इस प्रकार है—

॥ ॐ नमश्चण्डिकायै ॥

श्मशानकालिका काली भद्रकाली कपालिनी।
गुह्यकाली महाकाली कुरुकुल्ला विरोधिनी॥ 1॥
कालिका कालरात्रिश्च महाकालनितम्बिनी।
कालभैरव भार्या च कुलवर्त्मप्रकाशिनी॥ 2॥

कामदा कामिनी कन्या कमनीयस्वरूपिणी।
कस्तूरीरस लिप्तांगी कुञ्जरेश्वर गामिनी॥ 3॥
ककारवर्ण सर्वांगी कामिनी कामसुन्दरी।
कामार्त्ता कामरूपा च कामधेनुः कलावती॥ 4॥
कांता कामस्वरूपा च कामाख्या कुलकामिनी।
कुलीना कुलवत्यम्बा दुर्गा दुर्गतिनाशिनी॥ 5॥
कौमारी कलजा कृष्णा कृष्णदेहा कृशोदरी।
कृशांगी कुलिशांगी क्रींकारी कमला कला॥ 6॥
करालास्या कराली च कुलकांतापराजिता।
उग्रा उग्रप्रभा दीप्ता विप्रचित्ता महाबला॥ 7॥
नीला घना मेघनादा मात्रा मुद्रा मितामिता।
ब्राह्मी नारायणी भद्रा सुभद्रा भक्तवत्सला॥ 8॥
माहेश्वरी च चामुण्डा वाराही नारसिंहिका।
वज्रांगी वज्रकंकाला नृमुण्डस्त्रग्विणी शिवा॥ 9॥
मालिनी नरमुण्डाली गलद्रक्त विभूषणा।
रक्तचन्दन सिक्तांगी सिंदूरारुण मस्तका॥ 10॥
घोररूपा घोरदंष्ट्रा घोरा घोरतरा शुभा।
महादंष्ट्रा महामाया सुदन्ती युगदन्तुरा॥ 11॥
सुलोचना विरूपाक्षी विशालाक्षी त्रिलोचना।
शारदेन्दु प्रसन्नास्या स्फुरत् स्मेताम्बुजेक्षणा॥ 12॥
अट्टहासा प्रफुल्लास्या स्मेरवक्त्रा सुभाषिणी।
प्रफुल्लपद्मवदना स्मितास्या प्रियभाषिणी॥ 13॥
कोटराक्षी कुलश्रेष्ठा महती बहुभाषिणी।
सुमतिः कुमतिश्चण्डा चण्डमुण्डातिवेगिनी॥ 14॥
सुकेशी मुक्तकेशी च दीर्घकेशी महाकचा।
प्रेतदेहाकर्णपूरा प्रेतपाणि सुमेखला॥ 15॥
प्रेतासना प्रियप्रेता पुण्यदा कुलपण्डिता।
पुण्यालया पुण्यदेहा पुण्यश्लोका च पावनी॥ 16॥
पूता पवित्रा परमा परा पुण्य विभूषणा।
पुण्यनाम्नी भीतिहरा वरदा खड्गपाशिनी॥ 17॥
नृमुण्डहस्ता शान्ता च छिन्नमस्ता सुनासिका।
दक्षिणा श्यामला श्यामा शांता पीनोन्नतस्तनी॥ 18॥
दिगम्बरी घोररावा सृक्कान्त रक्तवाहिनी।
घोररावा शिवासांगा निःसंगा मदनातुरा॥ 19॥

मत्ता प्रमत्ता मदना सुधासिन्धुनिवासिनी।
अभिमत्ता महामत्ता सर्वाकर्षण कारिणी॥ 20॥
गीतप्रिया वाद्यरता प्रेतनृत्य परायणा।
चतुर्भुजा दशभुजा अष्टादशभुजा तथा॥ 21॥
कात्यायनी जगन्माता जगती परमेश्वरी।
जगद्बन्धुर्जगद्धात्री जगदानन्दकारिणी॥ 22॥
जगज्जीववती हैमवती माया महालया।
नागयज्ञोपवीतांगी नागिनी नागशायिनी॥ 23॥
नागकन्या देवकन्या गान्धारी किन्नरी सुरी।
मोहरात्रि महारात्रि दारुणामा सुरासुरी॥ 24॥
विद्याधरी वसुमति यक्षिणी योगिनीजरा।
राक्षसी डाकिनी वेदमयी वेदविभूषणा॥ 25॥
श्रुतिस्मृति महाविद्या गुह्यविद्या पुरातनी।
चिंताचिंता स्वधा स्वाहा निद्रातंद्रा च पार्वती॥ 26॥
अपर्णा निश्चला लोला सर्वविद्या तपस्विनी।
गंगा काशी शची सीता सती सत्यपरायणा॥ 27॥
नीतिः सुनीतिः सुरुचिस्तुष्टिः पुष्टिर्धृतिः क्षमा।
वाणी बुद्धि महालक्ष्मी लक्ष्मी नीलसरस्वती॥ 28॥
स्त्रोतस्वती स्त्रोतवती मातंगी विजया जया।
नदी सिन्धुः सर्वमयी तारा शून्य निवासिनी॥ 29॥
शुद्धा तरंगिणी मेधा लाकिनी बहुरूपिणी।
सदानन्दमयी सत्या सर्वानन्दस्वरूपिणी॥ 30॥
सुनन्दा नन्दिनी स्तुत्या स्तवनीया स्वभाविनी।
रंकिणी टंकिणी चित्रा विचित्रा चित्ररूपिणी॥ 31॥
पद्मा पद्मालया पद्मसुखी पद्मविभूषणा।
शाकिनी हाकिनी क्षान्ता राकिणी रुधिरप्रिया॥ 32॥
भ्रान्ति भवानी रुद्राणी मृडानी शत्रुमर्दिनी।
उपेन्द्राणी महेशानी ज्योत्स्ना चन्द्रस्वरूपिणी॥ 33॥
सूर्य्यात्मिका रुद्रपत्नी रौद्री स्त्री प्रकृति पुमान।
शक्तिः सूक्तिर्मतिर्मति भुक्तिर्मुक्तिः पतिव्रता॥ 34॥
सर्वेश्वरी सर्वमाता सर्वाणी हरवल्लभा।
सर्वज्ञा सिद्धिदा सिद्धा भाव्या भव्या भयावहा॥ 35॥
कर्त्री हर्त्री पालयित्री शर्वरी तामसी दया।
तमिस्त्रा यामिनीस्था च स्थिरा धीरा तपस्विनी॥ 36॥

चार्वंगी चंचला लोलजिह्वा चारु चरित्रिणी।
त्रपा त्रपावती लज्जा निर्लज्जा ह्रीं रजोवती॥ 37॥
सत्त्ववती धर्मनिष्ठा श्रेष्ठा निष्ठुरवादिनी।
गरिष्ठा दुष्टसंहर्त्री विशिष्टा श्रेयसीधृणा॥ 38॥
भीमा भयानका भीमनादिनी भीः प्रभावती।
वागीश्वरी श्रीर्यमुना यज्ञकर्त्री यजुःप्रिया॥ 39॥
ऋक्सामाथर्वनिलया रागिणी शोभनस्वरा।
कलकण्ठी कम्बकुण्डी वेगुवीणापरायणा॥ 40॥
वंशिनी वैष्णवी स्वच्छा धात्री त्रिजगदीश्वरी।
मधुमती कुण्डलिनी ऋद्धिः सिद्धिः शुचिस्मिता॥ 41॥
त्म्भोर्वशी रती रामा रोहिणी रेवती रमा।
शंखिनी चक्रिणी कृष्णा गदिनी पद्मिनी तथा॥ 42॥
शूलिनी परिघास्त्रा च पाशिनी शार्ंगपाणिनी।
पिनाकधारिणी धूम्रा शरभी वनमालिनी॥ 43॥
वज्रिणी समरप्रीता वेगिनी रणपण्डिता।
जटिनी विम्विनी नीला लावण्याम्बुधिचन्द्रिका॥ 44॥
वलिप्रिया सदा पूज्या पूर्णा दैत्येन्द्र माथिनी।
महिषासुरसंहन्त्री वासिनी रक्तदन्तिका॥ 45॥
रक्तपा रुधिरक्तांगी रक्तखर्परहस्तिनी।
रक्तप्रिया मांसरुचिरा सवासरक्तमानसा॥ 46॥
गलच्छोणित मुण्डालिकण्ठमाला विभूषणा।
शवासना चितान्तस्था माहेशी वृषवाहिनी॥ 47॥
व्याघ्रत्वगम्बरा चीनचेलिनी सिंहवाहिनी।
वामदेवी महादेवी गौरी सर्वज्ञभाविनी॥ 48॥
बालिका तरुणी वृद्धा वृद्धमाता जरातुरा।
सुभ्रुर्विलासिनी ब्रह्मवादिनी ब्राह्मणी मही॥ 49॥
स्वप्नावती चित्रलेखा लोपामुद्रा सुरेश्वरी।
अमोघाऽरुन्धती तीक्ष्णा भोगवयनुवादिनी॥ 50॥
मन्दाकिनी मन्दहासा ज्वालमुख्य सुरान्तका।
मानदा मानिनी मान्या माननीया मदोद्धता॥ 51॥
मदिरा मदिरान्मादा मेध्या नव्या प्रसादिनी।
सुमध्यानन्तगुणिनी सर्वलोकोत्तमोत्तमा॥ 52॥
जयदा जित्वरा जेत्री जयश्रीर्जयशालिनी।
सुखदा शुभदा सत्या संभासक्षोभ कारिणी॥ 53॥

शिवदूती भूतिमती विभूतिर्भीषणानना।
कौमारी कुलजा कुन्ती कुलस्त्री कुलपालिका ॥ 54 ॥
कीर्तिर्यशस्विनी भूषा भूष्या भूतपति प्रिया।
सगुणा निर्गुणा धृष्टा निष्ठा काष्ठा प्रतिष्ठता ॥ 55 ॥
धनिष्ठा धनदा धन्यावसुधा स्वप्रकाशिनी।
उर्वी गुर्वी गुरुश्रेष्ठा सगुणा त्रिगुणात्मिका ॥ 56 ॥
महाकुलीना निष्कामा सकामा कामजीवना।
कामदेवकला रामाभिरामा शिवनर्तकी ॥ 57 ॥
चिन्तामणि कल्पलता जाग्रती दीनवत्सला।
कात्तिका कीर्त्तिका कुत्या अयोध्या विषमा समा ॥ 58 ॥
सुमंत्रा मंत्रिणी घूर्णा ह्लादिनी क्लेशनाशिनी।
त्रैलोक्य जननी हृष्टा निर्मांसा मनोरूपिणी ॥ 59 ॥
तडाग निम्नजठरा शुष्कमांसास्थि मालिनी।
अवन्ती मथुरा माया त्रैलोक्यपावनीश्वरी ॥ 60 ॥
व्यक्ताव्यक्तानेकमूर्तिः शर्वरी भीमनादिनी।
क्षेमंकरी शंकरी च सर्वसम्मोह कारिणी ॥ 61 ॥
अर्द्धतेजस्विनी क्लिन्ना महातेजस्विनी तथा।
अद्वैता भोगिनी पूज्या युवती सर्वमंगला ॥ 62 ॥
सर्वप्रियंकरी भोग्या धरणी पिशिताशना।
भयंकरी पापहरा निष्कलंका वशंकरी ॥ 63 ॥
आशा तृष्णा चन्द्रकला निद्रान्या वायुवेगिनी।
सहस्त्रसूर्यसंकाशा चन्द्रकोटि समप्रभा ॥ 64 ॥
वहिन मण्डलसंस्था च सर्वतत्त्व प्रतिष्ठिता।
सर्वाचारवत सर्वदेवकन्या अधिदेवता ॥ 65 ॥
दक्षकन्या दक्षयज्ञनाशिनी दुर्गतारिका।
इज्या पूज्या विभीर्भूर्तिः सत्कीर्तिर्ब्रह्मरूपिणी ॥ 66 ॥
रम्भोरुश्चतुरा राका जयन्ती करुणा कुहुः।
मनस्विनी देवमाता यशस्या ब्रह्मचारिणी ॥ 67 ॥
ऋद्धिदा वृद्धिदा वृद्धिः सर्वाद्या सर्वदायिनी।
आधाररूपिणी ध्येया मूलाधार निवासिनी ॥ 68 ॥
अज्ञा प्रज्ञापूर्णमनाश्चन्द्र मुख्यनुकूलिनी।
वावदूका निम्ननाभिः सत्या संध्या दृढ़व्रता ॥ 69 ॥
आन्वीक्षिकी दंडनीति स्त्रयी त्रिदिव सुन्दरी।
ज्वलिनी ज्वालिनी शैलतनया विन्ध्यवासिनी ॥ 70 ॥

अमेया खेचरी धैर्या तुरीया विमलातुरा।
प्रगल्भा वारुणीच्छाया शशिनी विस्फुलिंगिनी ॥ 71 ॥
भुक्तिः सिद्धिः सदा प्राप्तिः प्रकाम्या महिमाणिमा।
इच्छासिद्धिर्विसिद्धा च वशित्वोर्ध्वनिवासिनी ॥ 72 ॥
लघिमा चैव गायत्री सावित्री भुवनेश्वरी।
मनोहरा चिता दिव्या देव्युदारा मनोरमा ॥ 73 ॥
पिंगला कपिला जिह्वारसज्ञा रसिका रसा।
सुषुम्नेडा भोगवती गान्धारी नरकान्तका ॥ 74 ॥
पाञ्चाली रुक्मिणी राधाराध्या भीमाधिराधिका।
अमृतातुलसी वृन्दा कैटभी कपटेश्वरी ॥ 75 ॥
उग्रचण्डेश्वरी वीरा जननी वीर सुन्दरी।
उग्रतारा यशोदाख्या दैवकी देवमानिता ॥ 76 ॥
निरञ्जना चित्रदेवी क्रोधिनी कुलदीपिका।
कुलवागीश्वरी वाणी मातृका द्राविणी द्रवा ॥ 77 ॥
योगेश्वरी महामारी भ्रामरी विन्दुरूपिणी।
दूती प्राणेश्वरी गुप्ता बहुला चमरी प्रभा ॥ 78 ॥
कुब्जिका ज्ञानिनी ज्येष्ठा भुशंडी प्रकटा तिथिः।
द्रेविणी गोपनी माया कामवीजेश्वरी क्रिया ॥ 79 ॥
शांभवी केकरा मेना मूषालास्त्रा तिलोत्तमा।
अमेय विक्रमा क्रूरा सम्पत्शाला त्रिलोचना ॥ 80 ॥
सुस्थीहव्य वहा प्रीतिरुष्मा धूम्रार्चिरंगदा।
तपिनी तापिनी विश्वा भोगदा धारिणीधारा ॥ 81 ॥
त्रिखंडा बोधिनी वश्या सकला शब्दरूपिणी।
बीजरूपा महामुद्रा योगिनी योनिरूपिणी ॥ 82 ॥
अनंग कुसुमानंग मेखलानंग रूपिणी।
वज्रेश्वरी च जयिनी सर्वद्वन्द्वक्षयंकरी ॥ 83 ॥
षडंगयुवती योगयुक्ता ज्वालांशुमालिनी।
दुराशया दुराधाररा दुर्जया दुर्गारूपिणी ॥ 84 ॥
दुरन्ता दुष्कृतिहरा दुर्ध्येया दुरतिक्रमा।
हंसेश्वरी त्रिकोणस्था शाकम्भर्यनुकम्पिनी ॥ 85 ॥
त्रिकोण निलया नित्या परमामृतरञ्जिता।
महाविद्येश्वरी श्वेता भेरुण्डा कुलसुन्दरी ॥ 86 ॥
त्वरिता भक्ति संसक्ता भक्तवश्या सनातनी।
भक्तानन्दमयी भक्तभाविका भक्तशंकरी ॥ 87 ॥

सर्वसौन्दर्य निलया सर्वसौभाग्य शालिनी।
सर्वसंभोगभवना सर्वसौख्य निरूपिणी॥ 88॥
कुमारीपूजनरता कुमारीव्रत चारिणी।
कुमारीभक्ति सुखिनी कुमारीरूपधारिणी॥ 89॥
कुमारीपूजकप्रीता कुमारीप्रीतिदा प्रिया।
कुमारी सेवकासंगा कुमारी सेवकालया॥ 90॥
आनन्दभैरवी बाला भैरवी बटुक भैरवी।
श्मशानभैरवी कालभैरवी च पुरभैरवी॥ 91॥
महाभैरव पत्नी च परमानन्द भैरवी।
सुधानन्दभैरवी च उन्मादानन्द भैरवी॥ 92॥
मुक्तानन्द भैरवी च तथा तरुण भैरवी।
ज्ञाननन्दभैरवी च अमृतानन्द भैरवी॥ 93॥
महाभयंकरी तीव्रा तीव्रवेगा तपस्विनी।
त्रिपुरा परमेशानी सुन्दरी पुरसुन्दरी॥ 94॥
त्रिपुरेशी पञ्चदशी पञ्चमी पुरवासिनी।
महासप्तदशी चैव षोडशी त्रिपुरेश्वरी॥ 95॥
महाकुंश स्वरूपा च महाचक्रेश्वरी तथा।
नवचक्रेश्वरी चक्रेश्वरी त्रिपुरमालिनी॥ 96॥
राजराजेश्वरी धीरा महात्रिपुर सुन्दरी।
सिन्दूर पूर रुचिरा श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी॥ 97॥
सर्वांग सुन्दरी रक्ता रक्तवस्त्रोत्तरीयिणी।
जावा यावक सिन्दूर रक्तचन्दनधारिणी॥ 98॥
चामरी बालकुटिल निर्मल श्यामकेशिनी।
वज्रमौक्तिक रत्नाढ्य किरीट मुकुटोज्ज्वला॥ 99॥
रत्नकुण्डल संसक्त स्फुरद्गण्ड मनोरमा।
कुंजरेश्वर कुम्भोत्थ मुक्तारञ्जित नासिका॥ 100॥
मुक्ताविद्रुम माणिक्यहाराढयस्तनमण्डला।
सूर्यकान्तेन्दु कान्ताढय स्पर्शाश्मकंठभूषणा॥ 101॥
वीजपूर स्फूरद्बीज दन्तपंक्तिरनुत्तमा।
कामकोदण्डकाभुग्नभ्रकंटाक्ष प्रवर्षिणी॥ 102॥
मातंगकुम्भवक्षोजा लसत्कोकनदेक्षणा।
मनोज्ञ शष्कुली कर्णा हंसीगति विडम्बिनी॥ 103॥
पद्मरागांगद ज्योतिर्दोश्चतुष्कप्रकाशिनी।
नानामणि परिस्फूर्जच्छुद्ध कांचन-कंकना॥ 104॥

नागेन्द्रदन्त निर्माणवलयांकित पाणिनी।
अंगुरीयक चित्रांगी विचित्र क्षुद्रघण्टिका॥ 105॥
पट्टाम्बरपरीधाना कलमञ्जीर शिंजिनी।
कर्पूरागरुकस्तूरी कुंकुम द्रव लेपिता॥ 106॥
विचित्र रत्न पृथिवी कल्प शाखि तलस्थिता।
रत्नद्वीप स्फुरद्रक्त सिंहासन विलासिनी॥ 107॥
षट्चक्रभेदनकरी परमानन्दरूपिणी।
सहस्त्रदलपद्मान्त श्चन्द्रमण्डलवर्तिनी॥ 108॥
ब्रह्मरूपशिव क्रोडनानासुख विलासिनी।
हर विष्णु विरिंचीन्द्र ग्रहनायक सेविता॥ 109॥
शिवा शैवा च रुद्राणी तथैव शिववादिनी।
मातंगिनी श्रीमती च तथैवानन्द मेखला॥ 110॥
डाकिनी योगिनी चैव तथोपयोगिनी मता।
माहेश्वरी वैष्णवी च भ्रामरी शिवरूपिणी॥ 111॥
अलम्वुषा वेगवती क्रोधरूपा सुमेरवला।
गान्धारी हस्तजिह्वा इडा चैव शुभंकरी॥ 112॥
पिंगला ब्रह्मदूती च सुषुम्ना चैव गन्धिनी।
आत्मयोनिब्रह्मयोनिर्जगद् योनिरयोनिजा॥ 113॥
भगरूपा भगस्थात्री भगिनी भगरूपिणी।
भगात्मिका भगाधाररूपिणी भगमालिनी॥ 114॥
लिंगाख्या चैव लिंगेशी त्रिपुराभैरवी तथा।
लिंगगीतिः सुगीतिश्च लिंगस्था लिंगरूपधृक्॥ 115॥
लिंगमाना लिंगभवा लिंगलिंगा च पार्वती।
भगवती कौशिकी च प्रेमा चैव प्रियंवदा॥ 116॥
गृध्ररूपा शिवारूपा चक्रिणी चक्ररूपधृक्।
लिंगाभिघायिनी लिंगप्रिया लिंगनिवासिनी॥ 117॥
लिंगस्था लिंगनी लिंगरूपिणी लिंगसुन्दरी।
लिंगगीतिर्महाप्रीता भगगीतिर्महासुखा॥ 118॥
लिंगनाम सदानन्दा भगनाम सदागतिः।
लिंगमालाकण्ठभूषा भगमाला विभूषणा॥ 119॥
भगलिंगामृतप्रीता भगलिंग स्वरूपिणी।
भगलिंगस्य रूपा च भगलिंग सुखावहा॥ 120॥
स्वयम्भू कुसुमप्रीता स्वयम्भू कुसुमार्चिता।
स्वयम्भू कुसुमप्राणा स्वयम्भू पुष्पतर्पिता॥ 121॥

स्वयम्भू पुष्प घटिता स्वयम्भू पुष्पधारिणी।
स्वयम्भू पुष्पतिलका स्वयम्भू पुष्प चर्चिता॥ 122॥
स्वयम्भू पुष्पनिरता स्वयम्भू कुसुमग्रहा।
स्वयम्भू पुष्पयज्ञांशा स्वयम्भू कुसुमात्मिका॥ 123॥
स्वयम्भू पुष्पनिचिता स्वयम्भू कुसुमप्रिया।
स्वयम्भू कुसुमादान लालसोन्मत्तमानसा॥ 124॥
स्वयम्भू कुसुमानन्दलहरी स्निग्धदेहिनी।
स्वयम्भू कुसुमाधारा स्वयम्भू कुसुमाकुला॥ 125॥
स्वयम्भू पुष्पनिलया स्वयम्भू पुष्पवासिनी।
स्वयम्भू कुसुमस्निग्धा स्वयम्भू कुसुमात्मिका॥ 126॥
स्वयम्भू पुष्पकरिणी स्वयम्भू पुष्पवाणिका।
स्वयम्भू कुसुमध्याना स्वयम्भू कुसुम प्रभा॥ 127॥
स्वयम्भू कुसुमज्ञाना स्वयम्भू पुष्पभागिनी।
स्वयम्भू कुसुमोल्लासा स्वयम्भू पुष्पवर्षिणी॥ 128॥
स्वयम्भू कुसुमोत्साहा स्वयम्भू पुष्परूपिणी।
स्वयम्भू कुसुमोन्मादा स्वयम्भू पुष्पसुन्दरी॥ 129॥
स्वयम्भू कुसुमाराध्या स्वयम्भू कुसुमोद्भवा।
स्वयम्भू कुसुमव्याग्रा स्वयम्भू पुष्पपूर्णिता॥ 130॥
स्वयम्भू पूजक प्रज्ञा स्वयम्भू होतृ मातृका।
स्वयम्भू दातृरक्षित्री स्वयम्भू रक्ततारिका॥ 131॥
स्वयम्भू पूजकग्रस्ता स्वयम्भू पूजक प्रिया।
स्वयम्भू वन्दकोधारा स्वयम्भू निन्दाकान्तका॥ 132॥
स्वयम्भू प्रदसर्वस्वा स्वयम्भू प्रदपुत्रिणी।
स्वयम्भू प्रद सस्मेरा स्वयम्भू प्रदशरीरिणी॥ 133॥
सर्वकालोद्भव प्रीता सर्वकालोद्भवात्मिका।
सर्वकालोद्भवोद्भावा सर्वकालोद्भवोदभवा॥ 134॥
कुण्डपुष्प सदा प्रीतिगेलि पुष्पसदारतिः।
कुण्डगोलोद्भव प्राणा कुण्डगोलोद्भवात्मिका॥ 135॥
स्वयम्भू वा शिवा धात्री पावनी लोकपावनी।
कीर्तिर्यशस्विनी मेधा विमेधा शुक्रसुन्दरी॥ 136॥
अश्विनी कृत्तिका पुष्पा तेजस्का चन्द्रमण्डला।
सूक्ष्मा सूक्ष्मा वलाका च वरदा भयनाशिनी॥ 137॥
वरदाभयदा चैव मुक्तिबन्ध विनाशिनी।
कामुका कामदा कान्ता कामाख्या कुलसुन्दरी॥ 138॥

दुःखदा सुखदा मोक्षा मोक्षदार्थ प्रकाशिनी।
दुष्टादुष्टमतिश्चैव सर्वकार्य विनाशिनी॥ 139॥
शुक्रधारा शुक्ररूपा शुक्रसिन्धु निवासिनी।
शुक्रलया शुक्रभोगा शुक्रपूजा सदारतिः॥ 140॥
शुक्रपूज्या शुक्रहोम सन्तुष्टा शुक्रवत्सला।
शुक्रमूर्तिः शुक्रदेहा शुक्रपूजक पुत्रिणी॥ 141॥
शुक्रस्था शुक्रिणी शुक्र संस्पृहा शुक्रसुन्दरी।
शुक्रस्नाता शककरी शुक्रसेव्याति शुक्रिणी॥ 142॥
महाशुक्रा शुक्रभवा शुक्रवृष्टि विधायिनी।
शुक्राभिधेया शुक्रार्हा शुक्रवन्दक वन्दिता॥ 143॥
शुक्रानन्दकरी शुक्रसदानन्दा अभिधायिका।
शुक्रोत्सवा सदाशुक्रपूर्णा शुक्रमनोरमा॥ 144॥
शुक्रपूजक-सर्वस्वा शुक्रनिन्दक-नाशिनी।
शुक्रात्मिका शुक्रसम्वत् शुक्राकर्षण कारिणी॥ 145॥
शारदा साधक प्राणा साधका सक्त मानसा।
साधकोत्तम सर्वस्वा साधकाभक्तरक्तपा॥ 146॥
साधकनन्द सन्तोषा साधकानन्दकारिणी।
आत्मविद्या ब्राह्मविद्या परब्रह्मस्वरूपिणी॥ 147॥
त्रिकूणस्था पञ्चकूटा सर्वकूटशरीरिणी।
सर्ववर्णमयी वर्णजपमाला विधायिनी॥ 148॥

फलश्रुति

इति श्रीकालिका नाम सहस्त्रम् शिवभाषितम्।
गुह्याद्गुह्यतरं साक्षात् महापातक नाशनम्॥ 149॥
पूजाकाले निशीथे च सन्ध्ययोरुभयोरपि।
लभते गाणपत्यं स यः पठेत साधकोत्तमः॥ 150॥
यः पठेत पाठयेद्वापि शृणोति श्रावयेदथ।
सर्वपाप विनिर्मुक्तः स याति कालिकापुरम॥ 151॥
श्रद्धयाऽश्रद्धया वापि यः काश्चिम्मानवः स्मेरत्।
दुर्ग दुर्गशतं तीर्त्वा स याति परमां गतिम्॥ 152॥
बंध्या वा काकबंध्या वा मृतवत्सा च यांगना।
श्रुत्वा स्तोत्रमिदं पुत्रान् लभते चिरजीविनः॥ 153॥
यं यं कामयते कामं पठन् स्तोत्रमनुत्तमम्।
देवीपाद प्रसादेन तंत्तदाप्नोति निश्चितम्॥ 154॥

॥ इति श्रीकालिका सहस्त्रनाम स्तोत्रं समाप्तम्॥

जिस प्रकार सहस्रनाम स्तोत्र के अन्त में छह श्लोकों में इसकी फलश्रुति है, ठीक उसी प्रकार इसके प्रारम्भ में सत्रह श्लोक परिचय और विनियोग के हैं। हमने वे सत्रह श्लोक नहीं दिए हैं, बल्कि उनका भावार्थ प्रारम्भ में एक अनुच्छेद में दे दिया है। इसकी फलश्रुति अर्थात् इसके प्रताप और प्रभाव का वर्णन भी सरल हिन्दी में यहां दे रहे हैं—भगवान शिवजी ने इसके प्रभाव का वर्णन अपने श्री मुख से स्वयं करते हुए कहा, "यह कालिका सहस्रनाम स्तोत्र गुप्त से भी गुप्त है और सभी पापों को नष्ट करने वाला है। पूजा-आराधना करते समय, रात्रि में अथवा सुबह-शाम, जो व्यक्ति इसका नियमित पाठ करता है, वह देवी के गणों के प्रमुख पद को प्राप्त करता है। जो इसे स्वयं पढ़ता है, दूसरों को सुनाता है अथवा पढ़ने के लिए प्रेरित करता है, वह सभी पापों से मुक्त होकर अन्त में कालिका देवी के लोक में स्थान पाता है। जो मनुष्य पूर्ण श्रद्धापूर्वक, यहां तक कि बिना श्रद्धा के भी, इसका कभी-कभी पाठ कर लेता है, उसके भी सभी कष्ट समाप्त हो जाते हैं। जो स्त्री बन्ध्या है अथवा मृत बालकों को जन्म देती है, यदि वह भी इसका नियमित पाठ करे तो दीर्घजीवी पुत्रों को प्राप्त करती है। यह ऐसा स्तोत्र है कि इसका पाठ करने वाला व्यक्ति उन सभी वस्तुओं को सहज ही प्राप्त कर लेता है, जो-जो वह पाना चाहता है।"

जहां तक कालिका सहस्रनाम के पाठ-विधान का प्रश्न है, उपासना, मन्त्र सिद्धि और तान्त्रिक साधनाएं करते समय भी मन-ही-मन इसका सामान्य रूप से स्तवन किया जाता है। केवल स्तोत्र का पाठ करते समय ऊंचे और स्पष्ट स्वर में इसका स्तवन करना चाहिए। पूर्ण विधि-विधान से बड़ी संख्या में इसका पाठ करते समय समस्त अंगों के विविध न्यास तो किए ही जाते हैं, भगवती भवानी का ध्यान भी करते हैं। यह नियम आगे दिए गए शतनाम और अष्टोत्तर शतनाम स्तोत्रों पर भी लागू होता है। जहां तक ध्यान के मन्त्रों की बात है, वे 'उपासना तथा तंत्र साधना का पूर्वार्द्ध' नामक चौदहवें अध्याय में दिए जा चुके हैं जबकि न्यासों की सम्पूर्ण जानकारी दसवें अध्याय में।

❑❑

20

कालिका शतनाम स्तोत्र

एक बार पार्वतीजी ने भगवान भोलेशंकर से कहा कि वैसे तो मातेश्वरी काली का सहस्रनाम अद्वितीय प्रभावशाली है। परन्तु यदि कोई व्यक्ति किसी कारणवश कालिका सहस्रनाम स्तोत्र का नियमित स्तवन करने में समर्थ न हो, तो उसके लिए आप कोई छोटा जप बताइए। इससे लोक का भला होगा। तब शिवजी ने पार्वतीजी को भगवती काली के सबसे प्रमुख एक सौ नामों के इस शतनाम को बताया। भगवान शिव ने अपने श्री मुख से पन्द्रह श्लोकों के इस शतनाम को तो कहा ही, ग्यारह श्लोकों में इसकी फलश्रुति भी की।

इस शतनाम की महिमा इतनी अधिक है कि एक सौ अड़तालीस श्लोकों की फलश्रुति जहां मात्र छह श्लोकों में है, वहीं इसकी फलश्रुति ग्यारह श्लोकों में है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि आराधना-उपासना के अन्तिम चरण में सहस्रनाम के स्थान पर इसी शतनाम का पाठ किया जाता है। विशिष्ट प्रयोजनों की पूर्ति के लिए अनेक साधक मन्त्रों के जप के समान ही ग्यारह, इक्कीस अथवा इकत्तीस बार प्रतिदिन इसका जप करते हैं।

ॐ करालवदना काली कामिनी कमलालया।
क्रियावती कोटराक्षी कामक्षा कामसुन्दरी॥ 1॥
कपोला च कराला च काशी कात्यायनी कुहू।
कंकाली कालदमनी करुणा कमलार्चिता॥ 2॥
कादम्बरी कालहरा कौतुकी कारणप्रिया।
कृष्णा कृष्णप्रिय कृष्णपूजिता कृष्णवल्लभा॥ 3॥
कृष्णाऽपराजिता कृष्णप्रिय च कृष्णरूपिणि।
कालिका कालरात्रिश्च कुलजा कुलपण्डिता॥ 4॥
कुलधर्मप्रिया कामा काम्यकर्म विभूषिता।
कुलप्रिया कुलरता कुलीन परिपूजिता॥ 5॥
कुलज्ञा कमला पूज्या कैलाशनगभूषिता।
कुटजा केशिनि कामा कामदा कामपण्डिता॥ 6॥

करालास्या च कन्दर्पकामिनी कामशोभिता।
केलिप्रिया केलिरता केलिनी केलिभूषिता॥ 7॥
केशवस्य प्रिया केशा काश्मीरा केशवार्चिता।
कामेश्वरी कामरूपा कामदानविभूषिता॥ 8॥
कामहंत्री कूर्ममांसप्रिया कूर्मादि पूजिता।
केलिनी करकी कारा करमूर्म्म निषेविनी॥ 9॥
कटकेशरमध्यस्था कटकी कटकार्चिता।
कटप्रिया कटरता कटकूर्म्म निषेविनी॥ 10॥
कुमारी पूजनरता कुमारीजनसेविता।
कुलाचारप्रिया कौलप्रिया कुल निषेविनी॥ 11॥
कुलीना कुलधर्मज्ञा कुलभीति-विमर्दिनि।
कामधर्मप्रिया कामा निम्याकामस्वरूपिणी॥ 12॥
कामरूपा कामहरा काममन्दिरपूर्जिता।
कामागारस्वरूपा च कामाख्या कामभूषिता॥ 13॥
क्रियाभक्तिरता कामा काञ्चिनी चैव कायदा।
कोलपुष्पाम्बरा कोला निष्कोला कलहान्तका॥ 14॥
कौषिकी केतिकी कुम्भी कुन्तिला दिविभूषिता।
इत्येवं शृणु चार्व्वांगि रहस्यं सर्व मंगलम्॥ 15॥

फलश्रुति

यः पठेत् परया भक्त्या स शिवो नाऽत्र संशयः।
शतनामप्रसादेन किं न सिन्धन्ति भूतले॥ 16॥
ब्रह्मार्विष्णुश्च रुद्रश्च वासवाद्या दिवोकसः।
सहस्त्रपठनाद्देवि सर्वे च विगतज्वराः॥ 17॥
नास्ति नास्ति महामाये तन्त्रमध्ये कथञ्चन।
कृपया च विना देवि विना भक्त्या महेश्वरी॥ 18॥
प्रसन्ना स्यात् करालास्या स्तवपाठाद्दिगम्बरा।
सत्यं वच्मि महेशानि अतः परतरं न हि॥ 19॥
न गोलोके न वैकुण्ठे न च कैलाश मन्दिरे।
अतः परतरा विद्या स्तोत्रं कवचमेव च॥ 20॥
त्रिलोकेषु जगद्धात्री नास्यि नास्ति कदाचन।
रात्रावपि दिवाभागे सन्ध्यायां वा सुरेश्वरी॥ 21॥
प्रजापेत् भक्तिभावेन रहस्यं स्तवमुत्तमम्।
शतनामप्रसादेन मन्त्रसिद्धिः प्रजायेत॥ 22॥

कुजबारे चतुर्दश्यां निशाभागे पठेत्तु यः।
स कृती सर्वशास्त्रज्ञः स कुलीनः सदा शुचिः॥ 23॥
सकुलज्ञः सकालज्ञः स धर्म्मज्ञो महीतले।
प्राप्नोति देवदेवेशि सत्यं परम सुन्दरी॥ 24॥
स्तवपाठाद् वरारोहे किं न सिध्यन्ति भूतले।
आणिमाद्यष्टसिद्धिश्च भवत्येव न संशयः॥ 25॥
रात्रौ बिल्वतलेऽश्वत्थमूलेऽपराजितातले।
प्रपठे्त कालिकास्तोत्रं यथाभक्त्या महेश्वरी।
शतवार प्रपण्नान्मत्रसिद्धिं भवेद्ध्रुवम्॥ 26॥

आराधना, उपासना और मन्त्रों के जप के समान ही स्तोत्रों का स्तवन करते समय प्रत्येक शब्द एवं उसके भाव का मानसिक तादात्म्य बनाए रखना अनिवार्य है। अतः आप इस शतनाम स्तोत्र का स्तवन करें अथवा गत अध्याय में संकलित सहस्रनाम स्तोत्र का, मातेश्वरी के प्रत्येक नाम के स्तवन के साथ उनके उस रूप का भी मन ही मन चिन्तन करते रहें। जहां तक आराधना-उपासना के एक भाग के रूप में इस शतनाम के स्तवन का प्रश्न है, वह तो सामान्य रूप से ही कर लिया जाता है। परन्तु बड़ी संख्या में पाठ कर इसे सिद्ध करने के लिए मन्त्रों के जप के समान ही विशेष न्यास और मातेश्वरी काली का ध्यान भी किया जाता है। मन्त्र सिद्धि से काफी मिलती-जुलती है यह प्रक्रिया। यही कारण है कि इसका सम्पूर्ण विवेचन 'मंत्रों का जप एवं सिद्धि' नामक बाईसवें अध्याय में किया गया है।

❑❑

21

काली क्षमापन स्तोत्र

हम सामान्य मानव हैं और कोई भी मनुष्य सर्वज्ञ तथा पूर्ण नहीं होता। दिन-रात जाने-अनजाने, प्रमादवश अथवा स्वार्थवश हमसे अनेक अपराध, पाप और दुष्कर्म होते ही रहते हैं। इसी प्रकार हम मातेश्वरी काली की पूजा-आराधना अथवा उपासना करें या फिर कोई भी तान्त्रिक साधना, उनमें कुछ न कुछ कमी रह जाना स्वाभाविक ही है। यह सत्य है कि परम दयालु और भक्त वत्सल मातेश्वरी काली हमें अबोध बालक समझकर हमारे सभी अपराध क्षमा करती रहती हैं। वे हमारे बड़े से बड़े अपराध या कमी पर हमें कोई दण्ड नहीं देतीं। फिर भी यह हमारा कर्तव्य है कि पूजा-आराधना, उपासना, मन्त्रों के जप अथवा तान्त्रिक साधनाओं के अन्त में हम करबद्ध होकर उनसे क्षमा मांग लें।

शास्त्रों का कथन है कि मातेश्वरी की पूजा-आराधना अथवा उपासना-साधना के अन्तिम चरण में हमें जगदम्बा काली से क्षमा अवश्य मांग लेनी चाहिए। इससे सेवा-पूजा में रह गई कमियों की आपूर्ति तो हो ही जाती है, दिन भर किए गए अपराधों के पापों से भी बड़ी सीमा तक मुक्ति मिल जाती है।

प्राग्देहस्थोय दाहं तव चरण युगान्नश्रितो नार्च्चिसोहं।
तेनाद्या कीर्तिवर्गेर्ज्जठरजद्रहनैर्बाद्धयमानो बलिष्ठैः॥
क्षिप्त्धाजन्मान्तरान्नः पुनरिहभविता क्वाश्रयः क्वापि सेवा।
क्षन्तव्योमेपराधः प्रकटित वदने कामरूपे कराले॥ 1॥
वाल्येवालाभिलायैर्ज्जडित जडमतिर्बाललीला प्रसक्तो।
नत्वांजानामिमातः कलिकलुषहरा भोगमोक्ष प्रदात्रीम्॥
नाचारो नैव पूजा न च यजन कथा न स्मृतिर्नैव सेवा।
क्षन्तव्येमेपराधः प्रकटित वदने कामरूपे कराले॥ 2॥
प्राप्तोहं यौवनञ्चे द्विषचर सदृशै रिन्द्रियैर्द्दष्ट गात्रो।
नष्ट प्रज्ञः परस्त्री परधन हरणे सर्व्वदा साभिलाषः॥
त्वत्पादम्भोज युग्मङ् क्षणमपि मनसा न स्मृतोहं कदापि।
क्षन्तव्येमेपराधः प्रकटित वदने कामरूपे कराले॥ 3॥

प्रौढ़ोभिक्षाभिलाषी सुत दुहितृ कलत्रार्थ मन्नादि चेष्ट।
क्व प्राप्स्ये कुत्रयामी त्यनुदिन मनिशञ्चिन्तयामग्न देहः॥
नोतेध्यानन्त चास्था न च भजन विधिन्नाम सङ्कीर्तनंव्वा।
क्षन्तव्योमेपराधः प्रकटित वदने कामरूपे कराले॥ 4॥
वृद्धत्वे बुद्धिहीनः कृश विवशतनुश्श्वासकासातिसारैः।
कर्म्मानर्होऽक्षिहीनः प्रगलित दशनः क्षुत्पिपासाभिभूतः॥
पश्चात्तपेनदग्धो मरण मनुदिनन्ध्येय मात्रन्नचान्यत्।
क्षन्तव्योमेपराधः प्रकटित वदने कामरूपे कराले॥ 5॥
कृत्वास्नानं दिनादौ क्वचिदपि सलिलं नोकृतं नैव पुष्प।
न्ते नैवेद्यदिकञ्च क्वचिदपि न कृतं नापिभावोन भक्तिः॥
नन्यासो नैव पूजा न च गुण कथनं नापि चार्च्चाकृताते।
क्षन्तव्योमेपराधः प्रकटित वदने कामरूपे कराले॥ 6॥
जानामि त्वां न चाहं भवभयहरणीं सर्व्वसिद्धि प्रदात्रीं।
न्नित्यानन्दोदयाढ्यान्त्रितय गुणमयीन्नित्य शुद्धेदयाढ्याम्॥
मिथ्याकर्म्माभिलाषैरनुदिनमभितः पीडितो दुःख सङ्ग।
क्षन्तव्योमेपराधः प्रकटित वदने कामरूपे कराले॥ 7॥
कालाभ्रा श्यामलाङ्गीं व्विगलित चिकुरा खड्गमुण्डाभिरामा।
न्त्रास त्राणेष्टदात्रीम् कुणपगणशिरो मालिनीन्दीर्घनेत्राम्॥
संसारस्यैक साराम्भवजन नहराम्भावितोभावनाभिः।
क्षन्तव्योमेपराधः प्रकटित वदने कामरूपे कराले॥ 8॥
ब्रह्मां विष्णु स्तथेशः परिणमति सदा त्वत्पदाम्भोज युक्त।
म्भाग्याभावान्न चाहम्भव जननि भवत्पाद युग्मम्भजामि॥
नित्यंल्लोभ प्रलोभैः कृतविशमतिः कामुकस्त्वाम्प्रयाषे।
क्षन्तव्योमेपराधः प्रकटित वदने कामरूपे कराले॥ 9॥
रागद्वेषैः प्रमत्तः कलुष युत तनुः कामनाभोग लुब्धः।
कार्य्याकार्य्या विचारी कुलमति रहितः कौलसङ्घैर्विहीनः॥
क्वध्यानन्ते क्वचार्च्चा क्वमनुजपनन्नैव किञ्चित् कृतोहम्।
क्षन्तव्योमेपराधः प्रकटित वदने कामरूपे कराले॥ 10॥
रोगीः दुखी दरिद्रः परकशकृपणः पांशुल्लः पापचेता।
निद्रालस्य प्रसक्तारसुजठरमणे व्याकुलः कल्पितात्मा॥
किन्ने पूजा विधानन्त्वयिक्वचनुमतिः क्वानुराग क्वचास्था।
क्षन्तव्योमेपराधः प्रकटित वदने कामरूपे कराले॥ 11॥
मिथ्या व्यामोह रागैः परिवतृमनसः क्लेश संधान्वितस्य।
क्षुन्निद्रोधान्वितस्य स्मरण विरहिणः पापकर्म्म प्रवृत्तैः॥

दारिद्रयस्य क्वधर्मः क्वचजननिरुचिः क्वस्थिस्साधु संघैः।
क्षन्तव्योमेपराधः प्रकटित वदने कामरूपे कराले॥ 12॥
मातस्तातस्यदेहाज्जननि जठरगः संस्थितस्त्वद्वशेहन्।
त्व हर्त्रा कारयित्रीकर गुणमयी कर्महेतु स्वरूपा॥
त्वम्बुद्धिश्चित्त संस्थाप्यमहति भवती सर्व्वमेतत्क्षमस्व।
क्षन्तव्योमेपराधः प्रकटित वदने कामरूपे कराले॥ 13॥
त्वम्भूमिस्त्वञ्जलञ्चं त्वमसि हुतबहस्त्वञ्जगद्वायुरूपा।
त्वञ्चाकाशम्भनश्च प्रकृतिरसि महत्पूर्व्विका पूर्व्वपूर्व्वा॥
आत्मात्वञ्चासिमातः परिमसिभवती त्वत्परन्नैव किञ्चत्।
क्षन्तव्योमेपराधः प्रकटित वदने कामरूपे कराले॥ 14॥
त्वङ्काली त्वञ्चतारात्वमसि गिरिसुता सुन्दरी भैरवी त्वं।
त्वन्दुर्गा छिन्नमस्ता त्वमसि च भुवनत्वम् हि लक्ष्मीः शिवात्वम्॥
धूमा मातङ्गिनीत्वन्त्वमसि च बगला मङ्गलादिस्तवाख्या।
क्षन्तव्योमेपराधः प्रकटित वदने कामरूपे कराले॥ 15॥
स्तोत्रेणानेन देवीम्परिणमति जनो यः सदाभक्तियुक्तो।
दुष्कृत्यादुर्ग्गा सङ्गम्परितरति शतं व्विघ्नतानाशमेति॥
नाधिर्व्याधिः कदाचिद्भवति यदि पुनस्सर्वदा सापराधः।
स्सर्त्वन्तत्कामरूपे त्रिभुवन जनमिं क्षामये पुत्र बुद्धया॥ 16॥
ज्ञाता वक्ता कवीशो भवति धनपतिदनिशीलो दयात्मा।
निःपापी निःकलङ्की कुलपति कुशलस्सत्यवाग्धार्म्मिकश्च॥
नित्यानन्दो दयाढयः पशुगणविमुखस्सत्पथा चारुशीलः।
संसाराब्धि सुकेन प्रतरति गिरिजा पादयुग्मा वलम्बात्॥ 17॥

॥ इति श्रीकालीक्षमापराध स्तोत्रं समाप्तम्॥

❑❑

22

मंत्रों का जप एवं सिद्धि

प्राचीन काल में हमारे ऋषि-मुनि एवं तपस्वी हजारों साल तक तप करते थे और ईश्वर का साक्षात्कार तथा मनचाहे वरदान प्राप्त करते थे। वे तपस्वी परब्रह्म परमेश्वर के किसी रूप का मन में चिन्तन करते, निरन्तर उसका नाम अथवा कोई मन्त्र जपते रहते थे। वे सभी महान थे और सबने मनवांछित वरदान भी प्राप्त किए थे। रामायण काल में दैत्यराज रावण ने जहां अनेक दुर्लभ वर प्राप्त किए थे, वहीं महाभारत काल में ऋषि गण मात्र मन्त्र-स्तवन करके मनचाहे देवता ही नहीं, भगवान सूर्यदेव, देवराज इन्द्र एवं आत्माओं के न्यायकर्ता धर्मराज तक को जब चाहते, सशरीर बुला लेते थे।

रावण, कुन्ती और अन्य तपस्वियों को प्राप्त होने वाले फलों का अन्तर कोई गुप्त रहस्य नहीं था। वह यह कि रावण और कुन्ती ने पूरे विधि-विधान के साथ मन्त्रों का स्तवन करके उन्हें जाग्रत कर लिया था। जाग्रत किया हुआ मन्त्र शीघ्र सिद्ध हो जाता है। सिद्ध किए हुए मन्त्र को जपने का प्रभाव सामान्य की अपेक्षा सैकड़ों गुना अधिक होता है। यही कारण है कि तान्त्रिक सिद्धियों के क्षेत्र में कदम रखने के पूर्व मन्त्र और यन्त्र दोनों को जाग्रत करना आवश्यक है। सामान्य रूप से भी जपे जाने वाले मन्त्र को जाग्रत कर लेना उचित रहता है।

मंत्र शक्ति का रहस्य

हमारे शास्त्रों का कथन है कि मन्त्र देवताओं के अक्षर और अगोचर अर्थात् निराकार रूप हैं। मन्त्रों में स्वयं देवता निवास करते हैं। इसी कारण वे अपने निकट बुलाने के सबसे सशक्त साधन हैं। इस बारे में ऋषियों, मुनियों और विद्वानों ने लिखा है कि मन्त्रों में दो प्रकार की शक्तियां होती हैं, जिन्हें क्रमश: वाचक और वाच्य कहा जाता है। इनमें वाचक शक्ति मन्त्र का शरीर है और वाच्य शक्ति उसकी आत्मा। वाचक शक्ति का अर्थ है, मन्त्र को शुद्ध रूप में याद करके निश्चित विधान के अनुसार जपना। परन्तु आत्मा शरीर से अनन्त गुना महत्वपूर्ण है। यही स्थिति वाच्य शक्ति की है। वैसे वाच्य शक्ति किसी मन्त्र, यन्त्र, मूर्ति अथवा उपादान का

नाम नहीं, बल्कि मन्त्र जपने और सिद्ध करने वाले साधक की मन्त्र एवं उपास्यदेव में आस्था, विश्वास तथा तन्मयता है। सीधे-सादे शब्दों में साधक की दृढ़ आस्था, उपास्यदेव के प्रति निकटता का भाव और मन्त्र जपते समय मन-मस्तिष्क में निरन्तर उसका चिन्तन ही सिद्धि में सफलता प्रदान करता है। उपासना-आराधना में प्रयोग किए जाने वाले मन्त्र हों अथवा सातवें अध्याय में संकलित जपे जाने वाले मन्त्र या फिर स्तोत्रों के श्लोक अथवा कोई भी अन्य मन्त्र, ये सभी माध्यम मात्र हैं। मन्त्रों का स्तवन अथवा जप तो साधक ही करता है और साधक की साधना पर ही निर्भर करती है किसी मन्त्र की सिद्धि।

इसलिए आप किसी विशिष्ट प्रयोजन से किसी मन्त्र का पूर्ण अनुष्ठानपूर्वक जप करें अथवा उपासना के एक भाग के रूप में किसी मन्त्र की एक अथवा अधिक मालाओं का जप, सफलता में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है आपकी भावना, एकाग्रता और मातेश्वरी के प्रति समर्पण की सीमा तथा उस मन्त्र की शक्ति पर विश्वास। यद्यपि दोनों ही शक्तियों का महत्व है, वाचक शक्ति (मन्त्र के शरीर) और वाच्य शक्ति (मन्त्र की आत्मा) दोनों ही महत्वपूर्ण हैं, परन्तु मुख्य महत्व तो आत्मा अर्थात् वाच्य शक्तियों का ही है। वाचक शक्तियां मात्र माध्यम हैं। अत: आप मन्त्र जाग्रत और सिद्ध करते समय बाह्य उपादानों के कम या अधिक होने पर चिन्तित न हों, परन्तु अपनी आस्था एवं मन्त्र जप के समय उसके भाव के चिन्तन में कमी न आने दीजिए।

स्थान, समय और वातावरण

मन्त्रों का जप और उपासना एकाग्र मन से पूरी आस्था के साथ किया जाने वाला मानसिक कर्म है। इसके लिए शांत, स्वच्छ और पवित्र वातावरण का होना आवश्यक है। मन्दिर और सार्वजनिक पूजा स्थल इस कार्य के लिए उचित स्थान नहीं हैं। *लिंग पुराण* के अनुसार घर में किए गए जप का फल साधारण होता है, तो नदी तट पर किए गए जप का फल अनन्त होता है। पवित्र आश्रमों, देवालयों, पर्वत शिखर या बाग-बगीचे में यह लाभ करोड़ गुना हो जाता है। ध्रुव तारे या सूर्य के अभिमुख होकर अथवा गौ, अग्नि, दीपक या जल के सामने भी जप का फल श्रेष्ठ माना गया है। इसी प्रकार सुबह तीन-चार बजे से सूर्योदय तक का समय मन्त्रों के जप और उपासना के लिए सर्वश्रेष्ठ रहता है, क्योंकि भगवान भास्कर के उदित होने के पश्चात् तो शोरगुल प्रारम्भ हो जाता है।

जप संख्या तथा आहुतियां

सातवें अध्याय में हमने सभी मन्त्रों के साथ उनकी जप संख्या भी दी है। ये संख्याएं उस मन्त्र विशेष को जाग्रत करने के लिए हैं। बाद में प्रतिदिन सामान्य रूप से जप तो किया ही जाता है, विशिष्ट प्रयोजन की आपूर्ति के लिए भी उस मन्त्र का

बड़ी संख्या में जप किया जाता है। यह जप निर्धारित दिनों के अन्दर किया जाता है। जप पूर्ण हो जाने पर दूसरे दिन जपे हुए मन्त्रों की संख्या का दशमांश अर्थात् दसवां भाग आहुतियां देकर हवन किया जाता है। हवन करने के पूर्व पूरे विधि-विधान के साथ मातेश्वरी काली की षोडशोपचार पूजा की जाती है और उसके तत्काल बाद हवन करते हैं। हवन करते समय वही मन्त्र स्वाहा लगाकर स्पष्ट स्वर में बोला जाता है। प्रत्येक स्वाहा के साथ थोड़ी-थोड़ी हवन सामग्री और बीच-बीच में देशी घी चम्मच से हवनकुण्ड की अग्नि में डालते रहते हैं।

मन्त्र सिद्ध करने अथवा किसी विशेष प्रयोजन के लिए जपने के पश्चात् दशमांश आहुतियां देना ही अधिक श्रेयस्कर है। परन्तु यदि बहुत बड़ी संख्या में किसी मन्त्र का जप किया गया हो तो अन्तिम दिन कुल योग दशमांश जप बिना आहुतियां दिए भी किया जा सकता है। इसके बाद दूसरे दिन इस जप का दसवां भाग अर्थात् पहले जपे गए मंत्रों की कुल संख्या का मात्र एक प्रतिशत आहुतियां देकर ही अनुष्ठान की इतिश्री कर ली जाती है। वास्तव में आराधना-उपासना के समान ही मंत्रों के जप में भी मुख्य महत्व आपकी भावना का है। यदि कोई साधक आर्थिक अभाव के कारण जप संख्या का मात्र एक प्रतिशत ही आहुतियां दे पाता है, तब भी मातेश्वरी उसे पूर्ण मान लेती हैं। आखिर वे हमारी माता हैं। एक माता अपनी सन्तान की मजबूरियां और सीमाएं अच्छी तरह जानती है।

स्तवन-गति एवं ध्वनि की सीमाएं

आरती, भजन, चालीसे और अष्टक आदि का तो गायन किया जाता है, परन्तु मन्त्रों का स्तवन। किसी भी मन्त्र के मन-ही-मन लगातार स्तवन का नाम ही जप है। गायन तो दूर की बात है, मंत्र के स्पष्ट उच्चारण की आज्ञा भी शास्त्र नहीं देते। मंत्रों के जप के समय होंठों के हिलने और श्वास तथा स्वर के निस्सारण के आधार पर शास्त्रों ने जप की प्रक्रिया को तीन वर्गों में विभाजित किया है—

वाचिका जप—भजन, कीर्तन और आरतियों के समान उच्च स्वरों में मंत्र जप का निषेध तो है ही, दूसरों के कानों तक आपकी ध्वनि पहुंचे, इसकी भी शास्त्र आज्ञा नहीं देते। जब जप करते समय मंत्रों का उच्चारण इतने तीव्र स्वरों में होता है कि ध्वनि जपकर्ता के कानों तक पहुंचती है, तो वह 'वाचिका जप' कहलाता है।

उपांशु जप—ध्वनि तो बाहर न निकले, परन्तु जप करते समय आपके जीभ और होंठ हिलते रहें, तो इसे 'उपांशु जप' कहा जाएगा। इसमें देखने वालों को आपके होंठ तो हिलते हुए दृष्टिगोचर होते हैं, परन्तु कोई शब्द उसे तो क्या, आपको भी सुनाई नहीं पड़ता।

मानस जप—मंत्र जप की इस शास्त्र सम्मत विधि में जपकर्ता के होंठ तो क्या, जीभ तक नहीं हिलती। जपकर्ता मन-ही-मन निरन्तर मन्त्र को दोहराता रहता

है। इस अवस्था में आप आंखें बंद करके मातेश्वरी काली से अपने आपको एकाकार अनुभव करते हुए मन में ही मंत्र दोहराते रहते हैं। अत: देखने वाले को लगता है कि शायद आप बैठे-बैठे ही सो गए हैं।

इन तीन प्रकार के जपों में शास्त्रों ने 'मानस जप' को सर्वश्रेष्ठ माना है और उपांशु जप को मध्यम स्तरीय। जहां तक वाचिका जप का प्रश्न है, वह मानस जप की प्रथम सीढ़ी तो हो सकता है, परन्तु पूर्ण फलदायक तो क्या, उपांशु जप से भी हीन माना गया है।

ध्वनि की सीमा के समान ही स्तवन की गति अर्थात् मन्त्र के शब्दों को दोहराने की गति का भी बहुत अधिक महत्व है। मन्त्र जप के साथ ही उसके भाव से आपका तादात्म्य भी बना रहे। अत: किसी भी मन्त्र का जप अथवा स्तवन न तो इतनी मन्द गति से करना चाहिए कि तन्द्रा अथवा नींद आने लग जाए और न ही इतनी शीघ्रतापूर्वक कि हाथ में माला और मुख में जिह्वा तो घूमती रहे, परन्तु आपका मन्त्र के अर्थ-भाव से तादात्म्य ही स्थापित न हो। आप जिस मन्त्र का जप कर रहे हों, उस मन्त्र के अर्थ का भी चिन्तन करते रहिए। इससे कालान्तर में शनै: शनै: आपके चरित्र में भी उन गुणों का समावेश होने लगेगा। दैवीय गुणों का यह सतत् विकास ही सम्पूर्ण आराधना-उपासना का मुख्य प्रयोजन है। मंत्र सिद्धि का अर्थ मंत्र और उपास्यदेव के साथ साधक का एकाकार हो जाना तथा दैवीय गुणों का विकास ही होता है।

देव पूजन तथा विविध न्यास

उपासना के एक अंग के रूप में किसी भी मन्त्र की एक अथवा अधिक मालाओं का जप सामान्यत: कर लिया जाता है। कारण स्पष्ट है। उपासना करते समय स्वस्तिवाचन से लेकर मातेश्वरी को विविध वस्तुएं समर्पण तक के सभी कार्य हम कर चुके हैं। यद्यपि बड़ी संख्या में किसी भी मन्त्र का जप करते समय मातेश्वरी का पूजन और वस्तुओं का समर्पण अनिवार्य नहीं है, परन्तु 'उपासना तथा तंत्र साधना का पूर्वार्द्ध' नामक चौदहवें अध्याय में वर्णित सभी प्रक्रियाएं एवं उनके मन्त्रों का स्तवन जरूरी है। इसके साथ ही विभिन्न प्रकार के न्यास भी किए जाते हैं। प्रत्येक न्यास के लिए चन्द शब्दों के छोटे-छोटे मन्त्र होते हैं, परन्तु काफी अधिक हैं ये न्यास। सबसे अच्छा तो यही रहता है कि किसी सिद्धहस्त तान्त्रिक अथवा मन्त्रों को सिद्ध कर चुके साधक से इन सभी प्रक्रियाओं को समझ लिया जाए। वैसे प्रमुख न्यास, उनके मन्त्र और विधियां नीचे दी जा रही हैं।

काली मन्त्र सिद्धि और तान्त्रिक साधनाएं करते समय काली के ध्यान से पूर्व ये सभी कार्य किए जाते हैं। सबसे पहले 'क्रीं' मन्त्र का उच्चारण करते हुए तीन बार आचमन करते हैं। फिर **ॐ काल्यै नम:** तथा **ॐ कपाल्ये नम:** का स्तवन करते

हुए दोनों होंठों का दो बार मार्जन किया जाता है। इसके साथ ही विभिन्न मन्त्रों का स्तवन करते हुए शरीर के विविध अंगों को इस क्रम में स्पर्श करतें हैं—

ॐ कुल्वायै नमः मन्त्र से हस्त प्रक्षालन करके, **ॐ कुरु कुरु कुल्वायै नमः** मन्त्र से मुख, **ॐ विरोधिन्यै नमः** मन्त्र से दक्षिण कालिका, **ॐ विप्रचित्तायै नमः** मन्त्र से वाम नासिका, **ॐ उग्रायै नमः** मन्त्र से दक्षिण क्षेत्र, **ॐ उग्रप्रभायै नमः** मन्त्र से वाम नेत्र, **ॐ दीप्तायै नमः** मन्त्र से दक्षिण कर्ण, **ॐ नीलायै नमः** मन्त्र से वाम कर्ण, **ॐ धनायै नमः** मन्त्र से नाभि, **ॐ वलाकायै नमः** मन्त्र से छाती, **ॐ मात्रायै नमः** मन्त्र से मस्तक, **ॐ मुद्रायै नमः** मन्त्र से दाएं कन्धे तथा **ॐ नित्यायै नमः** मन्त्र से बाएं कन्धे का स्पर्श करें।

ऋष्यादिन्यास

उपरोक्त प्रक्रियाएं करने के पश्चात् चौदहवें अध्याय में वर्णित तरीके से भूत शुद्धि तक के सभी कार्य किए जाते हैं। तत्पश्चात् मात्र बीज 'ह्रीं' मन्त्र से यथाविधि प्राणायाम करने के बाद ऋष्यादिन्यास किए जाते हैं। इस न्यास की विधि है—

अस्य मन्त्रस्य भैरव ऋषिरुष्णिक्छन्दो दक्षिण कालिका देवता ह्रीं बीजं हूं शक्तिः क्रीं कीलकं पुरुषार्थ सिद्ध्यर्थे विनियोगः।

काली क्रम में लिखा है—आदिबीज का कीलक चतुर्दिक फल देने वाला है। कीलक की विधि निम्नलिखित है—

शिरसि भैरव ऋषये नमः।
मुखे उष्णिकछन्दसे नमः।
हृदि दक्षिण कालिकायै देवतायै नमः।
गुह्ये ह्रीं बीजाय नमः।
पादयोः हूं शक्तये नमः।
सर्वाङ्गे क्रीं कीलकायै नमः।

कराङ्गन्यास

कराङ्गन्यास अर्थात् विभिन्न उंगलियों, अंगूठे और हथेली के न्यासों की विधि इस प्रकार है—

ॐ ह्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः।
ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां स्वाहा।
ॐ ह्रुं मध्यमाभ्यां वषट्।
ॐ ह्रैं अनामिकाभ्यां हुं।
ॐ ह्रौ कनिष्ठाभ्यां वोषट्।
ॐ ह्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

वर्णान्यास

कराङ्गन्यास के पश्चात् वर्णन्यास किया जाता है। इसकी विधि निम्न है—

अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं लॄं नमः इति हृदये।

एं ऐं ओं औं अं अः कं खं गं घं नमः इति दक्षिण बाहौ।

ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं नमः इति वाम बाहौ।

णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं नमः इनि दक्षिण पादे।

मं यं रं लं वं शं षं सं हं क्षं नमः इति वाम पादे।

'विरुपाक्ष' के मत से सबिन्दु रीति (अर्थात् अं आं आदि) से वर्णन्यास करना चाहिए जबकि 'काली तन्त्र' के अनुसार निर्बिन्दु रीति (अर्थात् अ आ आदि) से वर्णन्यास करना चाहिए। परन्तु चाहे सबिन्दु न्यास किया जाए अथवा निर्बिन्दु— दोनों ही युक्तिसंगत हैं।

षोडान्यास

वर्णन्यास के उपरांत षोडान्यास करना चाहिए। 'वीरतन्त्र' में लिखा है— पहले केवल मातृकान्यास करें, फिर दुबारा समस्त मातृकावर्णों को 'ॐ' मन्त्र से पुटित करके मातृकान्यास के स्थान में न्यास करने के बाद मातृकावर्ण द्वारा मस्तक और मुख का न्यास किया जाता है—

ललाट में—**ॐ अं ॐनमः।**

मुख में—**ॐ आं ॐ नमः।** इत्यादि।

ललाट में—**अं ॐ अं नमः।**

मुख में—**आं ॐ आं नमः।** इत्यादि।

तत्पश्चात् श्री बीज 'श्रीं' वर्ण द्वारा समस्त मातृकावर्णों को पुटित करके उसी तरह मातृकान्यासोक्त स्थान में न्यास करते हैं। फिर समस्त मातृकावर्णों द्वारा 'श्रीं' बीज को पुटित करके पूर्ववत् न्यास दोबारा किया जाता है।

ललाट में—**श्रीं अं श्रीं नमः।**

मुख में—**श्रीं आं श्रीं नमः।** इत्यादि।

ललाट में—**अं श्रीं अं नमः।**

मुख में—**आं श्रीं आं नमः।** इत्यादि।

तदुपरान्त काम बीज 'क्लीं' के द्वारा समस्त मातृकावर्णों को पुटित करके मातृकान्यास के स्थान में तथा मातृकावर्ण द्वारा काम बीज 'क्लीं' को पुटित करके पूर्ववत् न्यास करना चाहिए। मन्त्र इस प्रकार हैं—

ललाट में—**क्लीं अं क्लीं नमः।**

मुख में—**क्लीं आं क्लीं नमः।** इत्यादि।

ललाट में—**अं क्लीं अं नमः।**

मुख में—**आं क्लीं आं नमः**। इत्यादि।

इसी प्रकार शक्ति बीज 'ह्रीं' द्वारा समस्त मातृकावर्णों को पुटित करके मातृकावर्ण द्वारा 'ह्रीं' बीज को पुटित करके इन स्थानों पर पुनः न्यास करना चाहिए। यथा—

ललाट में—**ह्रीं अं ह्रीं नमः**।

मुख में—**ह्रीं आं ह्रीं नमः**। इत्यादि।

ललाट में—**अं ह्रीं अं नमः**।

मुख में—**आं ह्रीं आं नमः**। इत्यादि।

इसके पश्चात् ललाट में **क्रीं क्रीं ॠं ॠं लृं ॡं क्रीं क्रीं नमः** इत्यादि तथा ललाट में **ॠं ॠं लृं ॡं क्रीं क्रीं ॠं ॠं लृं ॡं नमः** इत्यादि क्रम से मातृका स्थान में न्यास करना चाहिए।

इसके उपरान्त मूलमन्त्र द्वारा मातृकावर्ण को पुटित करके तथा मातृकावर्ण द्वारा मूलमन्त्र को पुटित करके पूर्वोक्त स्थान में न्यास करना चाहिए। यथा—

ललाट में—**क्रीं अं क्रीं नमः**।

मुख में—**क्रीं आं क्रीं नमः**। इत्यादि।

इसी प्रकार अनुलोम तथा विलोमन्यास करके मूलमंत्र द्वारा 108 बार 'व्यापक न्यास' करना चाहिए। इस तरह से षोडान्यास करने पर समस्त पाप क्षय हो जाते हैं।

तत्त्वन्यास

षोडान्यास के पश्चात् 'तत्त्वन्यास' करना चाहिए। तत्त्वन्यास की विधि इस प्रकार है—

पूर्वोक्त बाईस अक्षर वाले मन्त्र को तीन भागों में बांट दें। पहले खण्ड में सात अक्षर, दूसरे खण्ड में छः अक्षर तथा तीसरे खण्ड में नौ अक्षर होने चाहिए।

पहले खण्ड के अन्त में **ॐ आत्मतत्त्वाय स्वाहा,** दूसरे खण्ड के अन्त में **ॐ विद्यातत्त्वाय स्वाहा** तथा तीसरे खण्ड के अन्त में **ॐ शिवतत्त्वाय स्वाहा** कहकर न्यास करना चाहिए। यथा—

क्रीं क्रीं क्रीं हुं हुं ह्रीं ह्रीं ॐ आत्मतत्त्वाय स्वाहा।

इस मन्त्र के द्वारा चरणों में नाभि पर्यन्त न्यास किया जाता है।

दक्षिण कालिके ॐ विद्यातत्त्वाय स्वाहा।

इस मन्त्र के द्वारा नाभि से हृदय पर्यन्त न्यास करते हैं।

क्रीं क्रीं क्रीं हुं हुं ह्रीं ह्रीं ॐ शिवतत्त्वाय स्वाहा।

इस मन्त्र के द्वारा हृदय से मस्तक पर्यन्त न्यास करना चाहिए।

बीजन्यास

तत्त्वन्यास के पश्चात् बीजन्यास का विधान है। इसके मन्त्र निम्न हैं—

ब्रह्मरन्ध्र में—**क्रीं नमः**।

भ्रूमध्य में—**ह्रीं नमः।**

ललाट में—**क्रीं नमः।**

नाभि में—**हुं नमः।**

गुह्य में—**हुं नमः।**

मुख में—**ह्रीं नमः।**

सर्वाङ्ग में—**ह्रीं नमः।**

षोडान्यास, तत्त्वन्यास तथा बीजन्यास 'काम्य' हैं, अर्थात् इन तीनों न्यासों को बिना किए कभी पूजा अंगहीन नहीं होती। जहां तक व्यावहारिकता का प्रश्न है—आराधना, उपासना और मन्त्रों का जप करते समय अधिकांश साधक कोई न्यास नहीं करते। परन्तु तान्त्रिक साधनाएं और मन्त्र सिद्धि हेतु जप करते समय इन सभी न्यासों को करना अनिवार्य है। वैसे मन्त्र सिद्धि की प्रक्रिया भी तान्त्रिक साधनाओं के अन्तर्गत आती है, अतः किसी कुशल तान्त्रिक के सान्निध्य में ही यह कार्य करना चाहिए। केवल पुस्तकें पढ़कर इस प्रकार के न्यास और मन्त्र सिद्धि की साधनाएं करना पूर्णतया वर्जित है।

❑❑

23

यंत्र जागरण और यंत्र सिद्धि

देव विग्रह और मूर्तियां देवताओं के साकार रूप हैं तथा मन्त्र उनके अगोचर अक्षर रूप हैं। परन्तु ताम्रपत्र पर अंकित यन्त्र तो देवताओं की शक्तियों के साक्षात् स्वरूप ही हैं। यह सत्य है कि पूजा-आराधना में यन्त्रों का प्रयोग नहीं होता, हम मूर्ति या विग्रह की पूजा करते हैं। उपासना करते समय किसी मूर्ति, यन्त्र अथवा अन्य उपादान का प्रयोग नहीं होता और मन्त्रों का सामान्य रूप से जप भी मूर्ति या यन्त्र सम्मुख रखे बिना ही कर लिया जाता है। परन्तु कोई भी तान्त्रिक सिद्धि बिना यन्त्र के सम्भव है ही नहीं। विशिष्ट प्रयोजन हेतु मन्त्रों का बड़ी मात्रा में जप भी यन्त्र पर दृष्टि जमाकर करने का शास्त्रीय विधान है। वास्तव में यन्त्र और मन्त्र दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। मन्त्रों के जप में पर्याप्त दक्षता प्राप्त करने के बाद ही यन्त्र साधना के क्षेत्र में कदम बढ़ाना श्रेयस्कर रहता है। यन्त्र साधना में भी मन्त्रों का बड़ी संख्या में जप ही किया जाता है, परन्तु साधक यन्त्र का पूजन तो करता ही है। उसका उद्देश्य भी उस यन्त्र को जाग्रत कर अधिक शक्तिशाली और जीवन्त बनाना होता है। यन्त्र जागरण की यह क्रिया मूर्ति में प्राण-प्रतिष्ठा के समान ही काफी जटिल और महत्वपूर्ण है। वर्षों तक उपासना व मन्त्रों का जप करने के पश्चात् ही कोई साधक इस क्षेत्र में कदम बढ़ा सकता है।

यंत्र शक्ति का आधार एवं रहस्य

मूर्तियों और चित्रों के विपरीत किसी भी यन्त्र में उस देवता की आकृति अंकित नहीं होती, बल्कि विशिष्ट आकृतियों की कुछ रेखाएं एक निश्चित क्रम में होती हैं। इसके साथ ही इन रेखाओं के मध्य कुछ विशिष्ट अक्षर भी अंकित होते हैं, जिन्हें बीज कहा जाता है। ये अक्षर और यन्त्र में अंकित शब्द उस देवता से सम्बन्धित होते हैं जबकि रेखाएं ग्रहों, नक्षत्रों, सूर्य, चांद आदि की विशिष्ट स्थितियों को प्रकट करती हैं। यही कारण है कि उस देवता की शक्ति के साथ ही सौरमण्डल के ग्रह-नक्षत्र, उनसे निकलने वाली किरणें और सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में व्याप्त दृश्य-अदृश्य आकृतियां भी इन यन्त्रों को शक्ति प्रदान करते हैं। धर्मशास्त्र कहते हैं कि

जिस प्रकार हम संसार में प्रकट रूप में अनेक आकृतियां देखते हैं, ठीक इसी प्रकार की अनेक अदृश्य आकृतियां आकाश-मण्डल में भी हैं। यंत्रों में रेखाओं के माध्यम से ये अदृश्य आकृतियां ही अंकित की जाती हैं और इनके पूर्णतः शुद्ध अंकन पर ही निर्भर करती है उस यन्त्र की शक्ति। जहां तक अंकों का प्रश्न है, प्रत्येक अंक किसी न किसी ग्रह और राशि का प्रतिनिधित्व करते हैं। शब्दों, अंकों और आकृतियों की इन्हीं दिव्य शक्तियों से यंत्र साधक के मस्तिष्क, शरीर, मन और आत्मा पर ही नहीं, आसपास के वातावरण तथा अन्य व्यक्तियों पर भी अच्छा अथवा बुरा प्रभाव डालता है। यंत्रों की इसी शक्ति के कारण ही तांत्रिक साधनाओं में यंत्रों और मंत्रों का संयुक्त प्रयोग किया जाता है।

प्राचीन काल में भी सोने, चांदी अथवा तांबे के पत्तर पर सुनार से यन्त्र अंकित करवा कर अधिकांश व्यक्ति प्रयोग करते थे, परन्तु अब तो तांबे की चद्दर (Copper Sheet) पर अंकित सभी प्रकार के यन्त्र आसानी से उपलब्ध हैं। प्राचीन काल में अनेक ऋषि-मुनि भोजपत्र पर अष्टगंध, त्रिगंध अथवा सिन्दूर से यन्त्र अंकित करके भी तन्त्र साधना करते थे। स्वयं यन्त्र का अंकन करते समय दक्षता के साथ ही पूर्ण सावधानी आवश्यक है। प्लास्टिक या कांच की शीट पर स्क्रीन प्रिंटिंग द्वारा अथवा कागज या गत्ते पर किसी भी विधि से छपे या अंकित यन्त्रों का प्रयोग साधना में पूर्णतया वर्जित है। इसी प्रकार किसी भी सतह अथवा भोजपत्र पर स्याही से अंकित यन्त्रों का प्रभाव भी लगभग शून्य ही होता है, जबकि भूमि या स्लेट पर इन्हें बनाना पाप है। यही कारण है कि आजकल लगभग सभी साधक ताम्रपत्र पर अंकित यन्त्रों को जाग्रत करने के बाद ही उसे यन्त्र, मन्त्र और तन्त्र की साधनाओं में उपयोग करते हैं। आप भी ऐसा ही कीजिए।

यंत्र जागरण अर्थात् प्राण-प्रतिष्ठा करना

जिस प्रकार प्राण-प्रतिष्ठा करने के बाद ही भगवान और देवी-देवताओं की प्रतिमाएं शक्तिमान एवं जीवन्त बनती हैं, ठीक उसी प्रकार यन्त्र जाग्रत करने के बाद ही वह साधना में प्रयोग करने के उपयुक्त बनता है। इसका एक पूरा विधि-विधान है। उपासना के अध्यायों में वर्णित विधि व मन्त्रों द्वारा यन्त्र की षोडशोपचार पूजा-आराधना की जाती है। इसके लिए यन्त्र को सम्मुख रखकर पूजन सामग्री के साथ सभी विशिष्ट क्रियाएं की जाती हैं। इसके साथ ही आरती और प्रदक्षिणा के मन्त्रों के स्तवन से पहले नीचे लिखे तीन मन्त्र भी मन ही मन दोहराए जाते हैं। ये मन्त्र पढ़ते समय दाएं हाथ में दूब नामक विशेष घास अथवा कुशा लेकर प्रत्येक मन्त्र के बाद उस दूब या कुशा से छूते भी हैं—

ॐ ऐं ह्रीं आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं ॐ हं सः सोहं सोहं हंसः शिवः अस्य यन्त्रस्य प्राणा इह प्राणाः।

ऐं ह्रीं श्रीं आं ह्रीं क्रों अस्य यन्त्रस्य जीव इह स्थितः। सर्वेन्द्रियाणि वाङ् मनस्त्वक् चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणप्राणा इहैवागत्यं सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं असुनीते पुनरस्मासु चक्षुः पुनः प्राणमिह नो धेहि भोगम्। ज्योक् पश्येम सूर्यमुच्चरन्तमनुमते मृडया नः स्वस्ति॥

ऐसा माना जाता है कि इन मन्त्रों का स्तवन करके यन्त्र में प्राण, जीव, वाणी, मन, त्वचा, नेत्र, कर्ण, जिह्वा, नासिका आदि सभी इन्द्रियां निवास करने लगती हैं और यन्त्र ने साक्षात् मातेश्वरी काली का रूप धारण कर लिया है। अब यन्त्र की नियमित पूजा-आराधना की जाती है और इस पर दृष्टि केन्द्रित करके मन्त्रों का जप किया जा सकता है। यंत्र जाग्रत करने का यह कार्य तान्त्रिक साधनाओं में अनिवार्य माना जाता है।

लघु रूप में यंत्रों का आलेख

विश्व के अधिकांश देशों में अत्यन्त प्राचीन काल से गण्डा-तावीज आदि बांधने की प्रथा चली आ रही है। भूत बाधाओं से मुक्ति और रोगों के इलाज के रूप में तो इन गण्डों-तावीजों का प्रयोग होता ही है, विशेष कामनाओं की आपूर्ति के लिए भी इन्हें धारण किया जाता है। जन-सामान्य में गण्डा-तावीज के नाम से लोकप्रिय तथा भोजपत्र अथवा किसी कागज पर लिखकर बनाए जाने वाले सभी आलेख वास्तव में यन्त्र ही हैं। यह बात दूसरी है कि इनकी पूजा नहीं की जाती और प्रायः तांबे के खोल में रखकर भुजा अथवा गर्दन में धागे की सहायता से बांधा जाता है। यह गण्डा अथवा तावीज रोगमुक्ति, ऊपरी बाधाओं से दूर रखने और वांछित इच्छापूर्ति में कितना सहायक सिद्ध होता है, यह धारण करने वाले की आस्था के साथ ही इसे बनाने वाले की साधना-शक्ति तथा उस पर होने वाली मातेश्वरी के अनुग्रह पर निर्भर करता है।

अब तो अनेक व्यक्ति चन्द दिनों तक दुर्गा माता, भगवान भैरवदेवजी, काली माई अथवा हनुमानजी की पूजा-आराधना करने के बाद ही तावीज और गण्डे बनाने लगते हैं। इस प्रकार के व्यक्तियों और पेशेवर लोगों द्वारा बनाए गए गण्डे-तावीज यदि प्रभावशाली सिद्ध नहीं हो पाते तो इनमें यन्त्र या मातेश्वरी काली का कोई दोष नहीं, दोषी तो वे व्यक्ति हैं। शास्त्रों का कथन है कि जब कोई साधक यन्त्र और मन्त्र की साधना के चरम स्तर तक पहुंच जाता है तो उसके उपास्यदेव उसे अपना प्रिय पुत्र और अनन्य भक्त मानकर उसके सभी कार्यों को स्वयं पूर्ण करने लगते हैं। ऐसे में उस साधक द्वारा बनाए गए यन्त्र में स्वयं उपास्यदेव की शक्तियां वास करने लगती हैं, परन्तु किसी ढ़ोंगी, छली, कपटी, नास्तिक अथवा आराधना-उपासना से रहित व्यक्ति द्वारा बनाया गया गण्डा, तावीज या यन्त्र व्यर्थ होता है।

शास्त्रों का कथन है कि यन्त्र साधना में विज्ञ व्यक्ति द्वारा शुद्ध और एकांत

स्थान में बैठकर शांत चित्त से विधि-विधानपूर्वक लिखा गया यन्त्र अर्थात् गण्डा तथा तावीज ही प्रभावशाली होता है। इसी प्रकार यंत्र धारण करने वाले व्यक्ति को भी स्नानादि से निवृत्त होकर और धुले हुए वस्त्र पहनकर पूजा-आराधना करने के पश्चात् ही पूर्ण आस्था के साथ गण्डा-तावीज धारण करना चाहिए। साथ ही उसकी पवित्रता को भी बनाए रखना चाहिए।

पुस्तक में यन्त्र जागरण और मन्त्र सिद्धि की जो सामान्य जानकारियां दी गई हैं, वो आप जैसे सामान्य आराधक-उपासकों के लिए तो पर्याप्त हैं, परन्तु इन विषयों में पूर्ण नहीं। अच्छा तो यही रहेगा कि यन्त्र-मन्त्र के जागरण का कार्य आप किसी कुशल साधक की देख-रेख में करें। वैसे भी आप एक सद्गृहस्थ हैं, मातेश्वरी काली की आराधना-उपासना, मन्त्रों का जप और यन्त्र साधना अपने आत्मिक उत्थान के लिए कर रहे हैं, अत: इतनी जानकारियां आपके लिए पर्याप्त रहेंगी। वैसे यन्त्र, मन्त्र और तन्त्र की साधनाओं का क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत है, अत: वर्षों तक मानसिक उपासना तथा मन्त्रों का जप करने के बाद ही कोई साधक इस क्षेत्र में प्रवेश का अधिकारी बनता है। इसलिए आप शीघ्रता न करें, धीरे-धीरे ही इस ओर कदम बढ़ाएं।

❑❑

24

तंत्र साधना तथा काली सिद्धि

जिस प्रकार पूजा-आराधना का आगामी चरण मानसिक उपासना और इसके बाद का चरण यन्त्र-मन्त्र की सिद्धि है, ठीक उसी प्रकार भक्ति की अन्तिम सीढ़ी है—तन्त्र साधना अथवा तान्त्रिक साधनाएं। मातेश्वरी काली तान्त्रिक साधना करने वाले सफल साधक से इतनी प्रसन्न रहती हैं कि वे एक प्रकार से भक्त के वश में ही हो जाती हैं और उसकी सभी कामनाओं की आपूर्ति सतत् रूप से करती रहती हैं। मातेश्वरी काली कीं तान्त्रिक साधनाएं करके ही अनेक व्यक्ति जाने-माने तंत्र सम्राट बने हैं। लोग देवताओं की तान्त्रिक साधनाएं प्राचीन काल से करते रहे हैं। इन साधनाओं के बल पर ही लोगों ने ब्रह्मर्षि और राजर्षि जैसे पद ही नहीं, बल्कि संसार में जो चाहा, वह मिला और अन्त में मोक्ष प्राप्त किया। रावण और मेघनाद ने भगवान शिवजी कीं तन्त्र साधनाएं करके ही चमत्कारी शक्तियां प्राप्त की थीं। भगवान की तरह पूजे जाने वाले धर्म प्रचारकों और प्रख्यात धर्म गुरुओं में से अधिकांश ने अलौकिक शक्तियां तान्त्रिक साधनाओं के द्वारा ही प्राप्त की हैं।

अर्थ एवं अभिप्राय

प्राचीन धर्मग्रन्थों में मन्त्र, यन्त्र और तन्त्र साधनाओं के बारे में विपुल जानकारियां उपलब्ध हैं। अनेक ग्रन्थ तो केवल तन्त्र शास्त्र के ऊपर ही लिखे गए हैं। इन सभी धर्मशास्त्रों में कहा गया है कि मन्त्र जप और यन्त्र पूजन के साथ-साथ पूजा के विविध उपकरणों का प्रयोग करके प्रकृति, परमेश्वर तथा उपास्यदेव को अपने अनुकूल बनाने का नाम ही तन्त्र साधना है। शास्त्रों के अनुसार यन्त्र को सम्मुख रखकर सम्पूर्ण अनुष्ठानों का विस्तारपूर्वक सम्पादन करते हुए आराध्यदेव के किसी भी मन्त्र का निश्चित संख्या में जप और उसके बाद हवन आदि करना तन्त्र साधना का प्रारम्भिक रूप है। इसी प्रकार भय और आपदाओं से रक्षा अथवा किसी विशिष्ट सिद्धि या कार्य की आपूर्ति के लिए जो मन्त्र जप एवं अनुष्ठान किए जाते हैं, वह भी तन्त्र सिद्धि ही है। यहां विशेष ध्यान रखने की बात यह है कि जब मुख्य जोर मन्त्रों के जप एवं देवाराधना पर दिया जाता है तो वह जप मन्त्र सिद्धि कहलाता है जबकि

यन्त्र पूजा पर विशेष ध्यान देते हुए मन्त्र जप का नाम यन्त्र साधना है। परन्तु जब यन्त्र और मन्त्र दोनों को समान महत्व देते हुए किसी विशेष प्रयोजन की सिद्धि हेतु पूर्ण विधि-विधानपूर्वक यन्त्र का पूजन तथा मन्त्रों का जप किया जाता है तो यही कार्य तन्त्र साधना कहलाने लगता है।

यों तो सभी देवी-देवताओं की तान्त्रिक साधनाएं की जाती हैं, परन्तु व्यावहारिक रूप में काली माई अर्थात् महाकाली और भगवान भैरवदेव की तान्त्रिक साधनाएं सबसे अधिक की जाती हैं। मातेश्वरी काली की तान्त्रिक साधनाएं तो इतने बड़े पैमाने पर होती हैं कि अधिकांश व्यक्ति भगवती काली के प्रत्येक आराधक-उपासक को तान्त्रिक समझने लगते हैं। परन्तु यह मात्र उनका भ्रम है। इसी कारण तान्त्रिकों से प्राय: अधिकांश व्यक्ति डरते हैं और उनसे दूर रहने का प्रयास करते हैं। वास्तव में यह भी एक मिथ्या भ्रम ही है। आराधना-उपासना और मन्त्रों के जप के समान ही तान्त्रिक उपासनाएं मां काली की विशेष कृपाएं, उनकी अविचल भक्ति तथा मोक्ष प्राप्ति के उद्देश्य से की जाती हैं। यद्यपि कुछ व्यक्ति दूसरों को नुकसान पहुंचाने, सम्मोहित करने, अपनी ओर आकृष्ट करने तथा शत्रु को मारने के लिए भी तान्त्रिक साधनाएं करते हैं, परन्तु इनमें से अधिकांश तो निपट अनाड़ी होते हैं और एकाध होता है कोई भ्रष्ट हो चुका साधक। वास्तव में ऐसे ढ़ोंगी और पेशेवर तान्त्रिकों के कारण ही तन्त्र शास्त्र के बारे में इतना भ्रम फैल रहा है, जिसका निराकरण अनिवार्य है।

मूर्ति, यंत्र और अन्य उपादान

प्राण-प्रतिष्ठित यन्त्र सम्मुख रखकर किसी मन्त्र के बड़ी मात्रा में जप को भी कुछ व्यक्ति तन्त्र साधना समझते हैं, परन्तु वास्तव में यह क्रिया मात्र मन्त्र सिद्धि है। यद्यपि तन्त्र साधना करते समय यन्त्र पर दृष्टि केन्द्रित करके ही वांछित मन्त्र का बड़ी संख्या में जप करते हैं, परन्तु साथ ही महाकाली की प्रतिमा की पूरे विधि-विधानपूर्वक पूजा भी की जाती है। यही कारण है कि मन्त्र जप पर आधारित मानसिक प्रक्रिया होने के बावजूद षोडशोपचार आराधना के समान ही मूर्ति, यन्त्र और पूजन सामग्री आदि का प्रयोग तन्त्र साधना की अनिवार्य आवश्यकता है। किसी भी तान्त्रिक साधना के समय प्राण-प्रतिष्ठित यन्त्र, माता काली की प्रतिमा के साथ षोडशोपचार आराधना में काम आने वाली सभी वस्तुएं तथा विशेष भोग का प्रयोग किया जाता है। मातेश्वरी पर चौला तो चढ़ाया ही जाता है, घी का एक बड़ा दीपक भी साधना के सम्पूर्ण समय जलता हुआ रखा जाता है। प्राय: तन्त्र आराधक पूजा का एक विशिष्ट स्थान निर्धारित करके वहां उपास्यदेव का छोटा-सा मन्दिर बनाकर उसमें अखण्ड दीप भी जलाते हैं। यही नहीं, विशिष्ट तान्त्रिक साधनाओं में अथवा मातेश्वरी के किसी भी स्वरूप की सिद्धि करते समय सभी उपादानों का प्रयोग तो किया ही जाता है, उसमें प्रयुक्त आसन और माला तक का विशेष प्रभाव

पड़ता है। विशिष्ट तान्त्रिक साधनाओं में मूर्ति, यन्त्र, दीपक एवं अन्य उपादानों को रखने के क्रम, स्थान और साधक के बैठने की दिशा का भी बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है।

तंत्र साधनाओं का प्रमुख रूप

तन्त्र साधना में प्रयोग की जाने वाली वस्तुओं और उपादानों के आधार पर तन्त्र साधना की प्रक्रियाओं को मुख्य रूप से दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है—सात्विक तन्त्र साधनाएं और तामसिक तन्त्र सिद्धि। तन्त्र साधना करने के उद्देश्य भी प्राय: दो प्रकार के होते हैं। सर्वश्रेष्ठ और कल्याणकारी उद्देश्य स्वयं का आध्यात्मिक विकास एवं लौकिक उपलब्धियों की प्राप्ति है। एक सच्चा उपासक इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए सात्विक साधनाएं ही करता है। इसके विपरीत कुछ भ्रष्ट तान्त्रिक दूसरों को हानि पहुंचाने और शत्रु की मृत्यु-कामना को लेकर भी तान्त्रिक साधनाएं करते हैं। ऐसे तान्त्रिक प्राय: महाकाली के प्रचण्ड रूपों की तामसिक साधनाएं करते हैं जो अधिकतर श्मशान में की जाती हैं और विशेष भोग के नाम पर शराब तथा पशुओं की बलि तक दी जाती है। वास्तव में ऐसी तामसिक साधनाओं और इन्हें करने वाले भ्रष्ट तान्त्रिकों ने ही मातेश्वरी काली एवं तन्त्र साधनाओं के बारे में अनेक भ्रान्तियां जनसामान्य के हृदय में बैठा दी हैं। वैसे इसमें तन्त्र शास्त्र का क्या दोष? यह तो उन व्यक्तियों का स्वार्थ और उनकी दूषित मनोवृत्ति का ही दोष है कि वे राक्षसी वृत्तियों से वशीभूत होकर तन्त्र सिद्धि की इस सर्वोत्तम पद्धति का प्रयोग दूसरों को हानि पहुंचाने के लिए कर रहे हैं।

आप अपने आत्मोत्थान और माता काली की विशेष कृपाओं के आकांक्षी हैं। आप किसी का बुरा भी नहीं चाहते होंगे। अत: किसी भी प्रकार की तामसिक साधना की ओर ध्यान तक न दें। यदि आप तन्त्र के क्षेत्र में कदम बढ़ा भी रहे हैं तो कृपया सात्विक साधनाओं तक ही स्वयं को सीमित रखें, वह भी किसी कुशल गुरु के सान्निध्य में। इस प्रकार की साधनाओं में आप रुद्राक्ष, लकड़ी अथवा कांच के मनकों की माला का प्रयोग करें। तुलसी की माला का प्रयोग मां काली के मन्त्रों के जप और तन्त्र साधना में वर्जित है। आसन के रूप में रक्तवर्ण के ऊन के बने हुए, ऊनी कपड़े से निर्मित अथवा कम्बल या कुशा के आसन का प्रयोग करें। भोग और प्रसाद के रूप में सात्विक सामग्रियों का ही प्रयोग कीजिए। शराब चढ़ाना और पशु-बलि करना तो एक प्रकार से अपराध ही है। महाकाली की पूजा, आराधना और तन्त्र-साधना में रक्तवर्ण की वस्तुओं एवं फूलों आदि का प्रयोग ही शास्त्र सम्मत है, जबकि भीषण रूपों के साधक काले रंग की वस्तुओं का प्रयोग करते हैं। वैसे तान्त्रिक साधनाएं करते समय जहां तक शृंगार की सामग्री, चोले, भोग, फूल-माला और फलों आदि का प्रश्न है, वह पूरी तरह आपकी आर्थिक क्षमता एवं श्रद्धा पर निर्भर करेगा। मातेश्वरी काली वस्तुओं की मात्रा व मूल्य को नहीं, आपके भावों को

देखती हैं। इस प्रकार आपकी भावना, श्रद्धा और समर्पण पर ही निर्भर करती है आराधना, उपासना एवं तन्त्र साधना में आपकी सिद्धि तथा सफलता।

तान्त्रिक सिद्धियां करते समय बाईसवें अध्याय में वर्णित सभी न्यास तथा चौदहवें और पंद्रहवें अध्याय में वर्णित विधि से पूजन तो किया ही जाता है, अलग-अलग उद्देश्यों के लिए विशिष्ट मन्त्रों एवं विधि-विधानों का प्रयोग भी किया जाता है। वास्तव में तान्त्रिक सिद्धियों का यह क्षेत्र जितना शीघ्र और शक्तिशाली रूप में फलप्रदायक है, उतना ही अधिक जटिल तथा व्यापक भी है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि तान्त्रिक साधनाओं और तन्त्र सिद्धि का क्षेत्र एक दुधारी तलवार है, जो कभी भी साधक को न केवल असफल बना सकती है, बल्कि जरा-सी भूल या प्रमाद उसे पागल तक बना सकती है। जहां तक काली सिद्धि की लोक प्रणालियों और तान्त्रिक साधनाओं का प्रश्न है, ये जानकारियां केवल आपकी जिज्ञासा की शान्ति तथा ज्ञानवर्द्धन के लिए हैं।

वास्तविकता तो यह है कि पुस्तकें पढ़कर कोई भी तान्त्रिक साधना करना अन्धे कुएं में कूदने के समान है, अतः आप इस ओर कदम न बढ़ाएं। कई वर्ष तक माता काली की आराधना-उपासना एवं यन्त्र-मन्त्र की सिद्धियां करने के बाद ही कोई व्यक्ति तन्त्र के क्षेत्र में कदम रखने का अधिकारी बनता है और वह भी किसी सिद्धहस्त तन्त्र साधक के मार्गदर्शन में। हमारे बारम्बार मना करने के बावजूद यदि कोई व्यक्ति केवल पुस्तक पढ़कर कोई तान्त्रिक साधना करता है, तो परिणाम के लिए वह स्वयं उत्तरदायी होगा।

❑❑❑

देवी-देवताओं को प्रसन्न कर समस्त मनोकामनाएं
पूर्ण करने की शास्त्र-सम्मत उपासना पद्धति

मनोज पब्लिकेशन्स